Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

साक्षात्कार

अंक : 442, अक्टूबर 2016

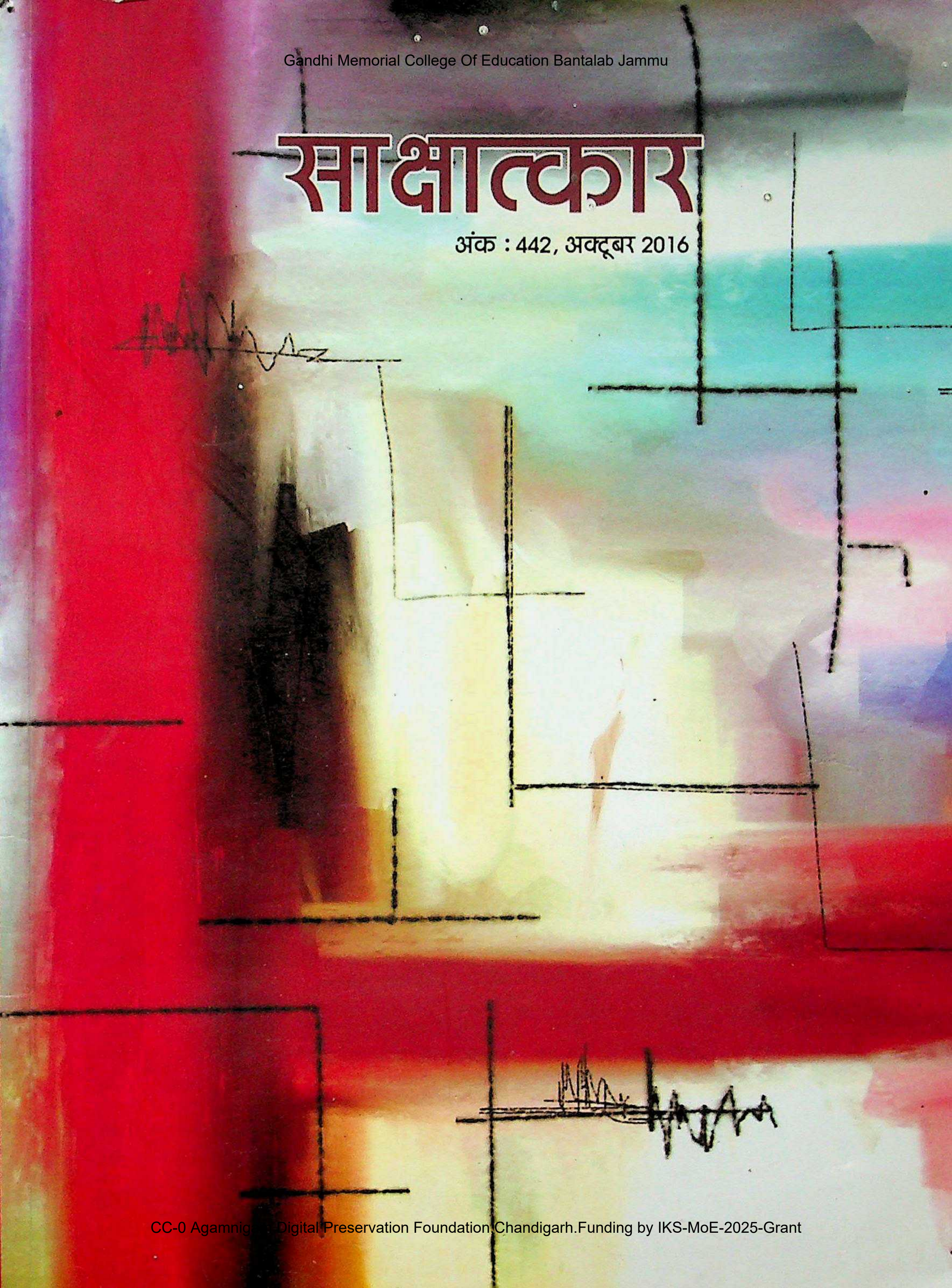

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रकाशन

साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, भोपाल

निमाड़ी साहित्य का इतिहास **प्रधान संपादक : देवेन्द्र दीपक** **लेखक : श्रीराम परिहार**	100.00
मालवी साहित्य का इतिहास **प्रधान संपादक : देवेन्द्र दीपक** **लेखक : श्याम सुंदर निगम**	150.00
बुंदेली साहित्य का इतिहास **प्रधान संपादक : प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल** **लेखक : डॉ. आरती दुबे**	380.00
बघेली साहित्य का इतिहास **प्रधान संपादक : प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल** **लेखक : डॉ. आर्या प्रसाद त्रिपाठी**	190.00
साहित्य का भोपाल संदेश **प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल**	25.00
साहित्य के शाश्वत प्रतिमान **प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल**	50.00

साक्षात्कार के उपलब्ध विशेषांक

(सिंहस्थ अंक मई 2016, आपातकाल अंक जून 2016, तस्मै श्री गुरवे नमः जुलाई 2016 विशेष पठनीय सामग्री के साथ उपलब्ध हैं)

(जून-जुलाई 05, जून-अगस्त 06, जून-जुलाई 09) प्रवासी भारतीय हिन्दी लेखन प्रथम स्वतंत्रता संग्राम, कश्मीर विस्थापन तथा नरेश मेहता पर केन्द्रित विशेषांक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अग्निशेखर और क्षमा कौल
द्वारा यह
पुस्तक सप्रेम भेंट

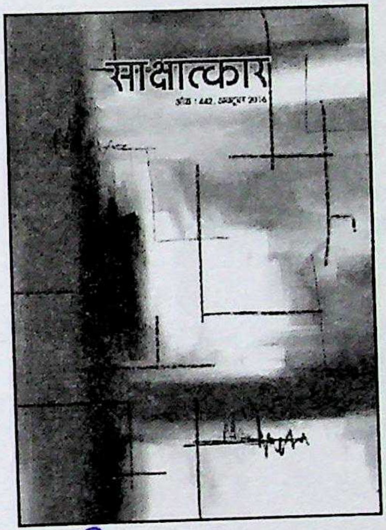

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu
Acc No. 9612
Dated 19.12.2023

उमेश कुमार सिंह
संपादक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ISSN : 2456-1924

साक्षात्कार

अक्टूबर -2016
(आश्विन, वि.सं. २०७३)
442

संपादकीय एवं ग्राहकीय पत्र-व्यवहार : निदेशक/संपादक, साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, संस्कृति भवन, बाणगंगा, भोपाल-3

फ़ोन : 0755 : 2554782 (कार्यालय)

साक्षात्कार की प्रकाशनार्थ रचनाओं के लिए
email : sakshatkarnew@gmail.com पर मेल करें।

वार्षिक सहयोग राशि

व्यक्तिगत ग्राहकों के लिए	:	₹ 250
संस्थाओं के लिए	:	₹ 300
आजीवन	:	₹ 3,000

यह अंक : ₹ 25

समस्त बैंक ड्रॉफ्ट/मनीआर्डर 'निदेशक, साहित्य अकादमी, भोपाल' के नाम स्वीकार्य होंगे।

सम्पादन एवं कार्यालयीन सहयोग : रामनिवास झा, के. के. शर्मा

प्रसार : साखि़र रहमान, फोन 2554782 (कार्यालयीन समय में)

शब्द संयोजन : राकेश सिंह, सुशील घोटे

प्रूफ रीडिंग : जया केतकी शर्मा

मुद्रण : मध्यप्रदेश माध्यम, अरेरा हिल्स, भोपाल

'साक्षात्कार' में प्रकाशित रचनाकारों के विचार अपने हैं। संपादक या साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद, संस्कृति विभाग, मध्यप्रदेश शासन का उनके विचार के प्रति सहमत होना आवश्यक नहीं है।

साहित्य अकादमी, मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद् का मासिक प्रकाशन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
ISSN : 2456-1924

अनुक्रम

सम्पादकीय // 04

साक्षात्कार // 07
डॉ. शिवदयाल से डॉ. प्रीति प्रवीण खरे

धरोहर // 14
रामचन्द्र शुक्ल, कुबेरनाथ राय

आलेख // 29
डॉ. रमानाथ त्रिपाठी, दानबहादुर सिंह, सुरेन्द्र 'अंचल',
डॉ. प्रेमकुमारी कटियार, अवनिजेश अवस्थी

कविताएँ // 50
सुधेश, राजेन्द्र पाराशर, अरविन्द कुमार मुकुल,
शिव नारायण जोहरी 'विमल', डॉ. कुंकुम गुप्ता

कहानी // 61
डॉ. अखिलेश चन्द्र, सुरेन्द्र नायक, उषा जायसवाल, अनुराधा शर्मा

गीत/ग़ज़ल // 86
डॉ. कृष्ण कुमार प्रजापति, धर्मेन्द्र गुप्त 'साहिल'

लघुकथा // 90
कमला प्रसाद चौरसिया

अनुवाद // 93
मूल : मंगल राठोड़
अनुवाद : जेठमल मारू

व्यंग्य // 95
मधु सक्सेना, प्रियदर्शी खैरा

समीक्षा // 102
माताचरण मिश्र की कृति 'बच रहेगा जो' पर प्रेमशंकर रघुवंशी
रमेशचन्द्र शाह की कृति 'आवाह्यामि' पर डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र
ऋषिवंश की कृति 'दस्तखत' पर डॉ. गंगा प्रसाद बरसैंया

स्मृति शेष // 114
डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय

अकादमी की गतिविधियाँ // 118

चिट्ठी // 119

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

संपादकीय

जागो फिर एक बार

(एक)

धैर्य, क्षमा, दया आदि सात्विक गुणों को निभाने की क्या कोई सीमा होती है? क्या वह सीमा सीमापार से निरन्तर उस छोटे से बच्चे की हरकत के समान नहीं तोड़ी जा रही है जो अपनी दादी माँ की गोदी में बैठकर उससे लोरी सुनना चाहता है, उसकी गाँठ में बँधे जवाहरात रूपी खिलौनों को भी लेना चाहता है किन्तु उसी की गोद में बैठकर बार-बार चिकोटी काट-काट कर उसके गात पर उठते पीड़ाभाव को देखकर मंद-मंद मुस्कुराता है। सयानी दादी नाती का प्रेम और अपने जेठपन की परम्परा के कारण उस गुदगुदी को दुलार समझ कर टाल जाती है। किन्तु बाबा तुलसीदास सचेत हैं, तभी तो राम जैसे मर्यादा पुरुषोत्तम से कहलवाते हैं-

विनय न मानत जलधि जड़ गये तीन दिन बीति।
बोले राम सकोप तब भय बिनु होत न प्रीति॥

'सिंधु जल संधि' भारत का पाकिस्तान के प्रति यही दुलार था जिसे वह उदारता न मानकर अपना हक मानने लगा और अनुग्रह की जगह दुराग्रह करने पर उतारू हो बैठा। पी.ओ.के. को कश्मीर के पास रह जाना भी भारत की ऐसी ही भूल का परिणाम था जिसे उसने अपनी ही सीमा बना कर विवाद के आगोश में डाल दिया था। भारत द्वारा पाकिस्तान के विशेष सन्दर्भ में दी गई एक तरफा आर्थिक उदारता भी उसी दादी की भूमिका थी। किन्तु सीमा पर बार-बार होती गोलाबारी, कश्मीर में बढ़ता उपद्रव, पड़ोस में ही नहीं तो दुनिया के अशांति का कारण बनते पाकिस्तान को उसके आर्थिक, राजनैतिक, कूटनीतिक और सामरिक पहलुओं पर जबाव देने का वक्त आ गया है। क्षमा शक्तिमान की केवल शक्तिमान बने रहने में नहीं होती बल्कि उसे दिखनी भी चाहिए, अन्यथा रामधारी सिंह दिनकर की वह पंक्ति सटीक बैठती है-

'क्षमा सोहती उस भुजंग को जिसके पास गरल है,
उसको क्या जो दंतहीन विषहीन विनीत सरल है।

निश्चित ही हम विषैला भुजंग नहीं बनना चाहते, यह हमारी प्रकृति भी नहीं है, किन्तु अजेय की हमारी अपनी दृष्टि का यदि कोई उल्लंघन करना चाहेगा तो सीमोल्लंघन कर विजयादशमी का पर्व मनाने से भी हमें कोई नहीं रोक सकता। यह हमारी सांस्कृतिक परम्परा रही है।

आशावादी साहित्यकारों का विश्वास है भारत का वर्तमान नेतृत्व अपनी भूमिका को समझता है और वह देश के जनमानस की पीड़ा, आक्रोश को शांत करने के लिए उन्मादी, पागलपन पर उतारू, आतंक की पौधशाला के निर्माता-निर्यातक को उसकी औकात समुचित ढँग से बतायेगा। 'सठे साठ्यम् समाचरेत।'

(दो)

साहित्यिक लेखन और उसके विमर्श की दशा और दिशा यदि भारतीय चिति के आधार पर तय नहीं होगी तो साहित्य की दुर्गति अवश्यंभावी है। आज दुनिया में हिन्दी लेखक पिट रहा है और अंग्रेजी का हिन्दी अनुवाद अपनी जय-जयकार कर रहा है। हिन्दी का साहित्यकार भाषा और कथ्य के प्रति सजग क्यों नहीं रह पा रहा है। एक उपन्यास में एक स्थान पर 'एक स्त्री अपने पति का हँसिए से गला काटती दिखाई गई है।' क्या यह भारत की नारी का दृश्य है? मुझे एक घटना स्मरण में आ रही है, केरल के एक गाँव ने तय किया कि इस गाँव में जो भी मदिरापान करेगा, उसे पंचायत दण्ड देगा। उस गाँव की सरपंच महिला थी। निर्णय के दूसरे दिन लोगों ने सरपंच से शिकायत की कि तुम्हारे पति ने आज शराब पी है। पंचायत बैठी और सरपंच ने दोषी को सजा दी कि कल पूरे दिन गाँव की गलियों की सफाई करनी पड़ेगी। दूसरे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
दिन लोगों ने देखा कि वह शराबी हाथ में झाडू लिए गलियों की सफाई कर रहा है किन्तु आश्चर्य तब हुआ जब उसकी पत्नी भी साथ में झाडू लेकर उसके पीछे-पीछे सफाई कर रही है। लोगों ने पूछा आखिर पंचायत ने सजा तुम्हारे पति को दी है फिर तुम क्यों उसके साथ झाडू लगा रही हो। उसने कहा, वहाँ मैं सरपंच थी, यहाँ मैं उसकी पत्नी हूँ। मैं अपना धर्म निभा रही हूँ। क्या रचनाकार के उपन्यास के लिए ऐसे परिदृश्य कथानक नहीं बन सकते।

क्या सचमुच अभी भी भारत के रचनाकारों पर मार्क्स का प्रभाव है, जिनका उत्तर यदि हाँ है तो इसे समझने का प्रयत्न करें। घटना भारतीय संसद की 1959 की है। केरल विवाद पर नेहरू की तुलना युधिष्ठिर से करते हुए कम्युनिष्ट नेता डांगे ने कहा, ''जिस प्रकार अश्वत्थामा के प्रकरण में झूठ बोलने के कारण युधिष्ठिर का रथ जो जमीन से ऊँचा चलता था, वह जमीन को छू गया, उसी प्रकार अब प्रधानमंत्री का रथ भी जमीन पर आ गया है। अब वह भी अन्य लोगों के समान मर्त्य बन गए हैं।'' तब तत्कालीन जनसंघ दल के नेता श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने प्रधानमंत्री की वकालत करते हुए मुँहतोड़ जवाब दिया और कहा, ''चूँकि प्रधानमंत्री का रथ अब तक जमीन से ऊपर था, इसीलिए इस देश की धरती पर अभारतीय दृष्टि के पैर जम सके। पर अब क्योंकि उनका रथ धरती पर आ गया है अत: अब ये धरती पर नहीं रह सकते हैं। जमीन के अन्दर जाना उनकी नियति है।''

वास्तव में स्वतंत्रता के बाद जिस तरह असहिष्णु लेखकों को सत्ता का संरक्षण मिला वे बौरा गए। उसके साहित्यकारों की दिशा और दृष्टि स्वैरता की ओर बढ़ गई। परिणाम यह हुआ कि जब आज सत्ता में धरती पर चलने वाला नेतृत्व आया तो लेखक, पुरस्कार प्राप्तकर्ता, आलोचक अधोमार्गी होने के लिए स्वयं ही रास्ता वरण कर रहे हैं।

वस्तुत: साहित्य वादों से नहीं, दक्षिण-वाम मार्गों से नहीं, राष्ट्र की चिति के साथ चले तभी साहित्यकार की भूमिका 'अपने साथ सम्पूर्ण सृष्टि को विराट की ओर ले चलने में' सार्थक होगी।

(तीन)

इतिहास का साक्ष्य ही साहित्य का कथानक बने तभी भारतीय साहित्य परिवर्तन का आधार बन सकता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी के जीवन प्रसंग में एक आत्मकथ्य आता है, हजारी प्रसाद द्विवेदी के पड़ोस में एक अर्द्धविक्षिप्त बालक रहता था। वह द्विवेदी जी के पास आता और बातें करता। द्विवेदी जी उसकी बातें सुनते, उसे बहलाते और बात खत्म हो जाती। एक दिन उस बालक ने बात प्रारंभ करते हुए , ''द्विवेदी जी कितना अच्छा होता यदि रेलगाड़ी खड़ी रहती और स्टेशन चलता.. आदि आदि कई उलट बातें कहता रहा। अन्त में कहता है कितना अच्छा होता यदि भगवान आदमी को दो आँखें पीछे भी देता।'' यह अन्तिम बात सुनकर द्विवेदी जी मौन हो कर सोचने को विवश हुए। और वे लिखते हैं 'वास्तव में किसी देश का इतिहास ही उस देश के नागरिकों की दो आँखें होती हैं।'

श्री माधव राव गोलवलकर उपाख्य श्री गुरुजी कहते हैं, ''यह सर्व सम्मत बात है कि हमारे देश का इतिहास इस भूमि के साथ जिसका पुत्र का नाता है उस हिन्दू समाज का ही इतिहास हमारी आँखों के सामने आता है। प्रारंभकाल से जो विशाल जनसमुदाय हिंदू समाज के रूप में उपस्थित है उसके सुख-दुःख, उत्कर्षोपकर्ष का इतिहास ही इस देश का इतिहास है। परन्तु इस इतिहास को, बीच में अंग्रेजों के रूप में जो विदेशी राजसत्ता यहाँ दिखाई दी उसने विशिष्ट हेतु रखकर विकृत रूप में प्रस्तुत किया। प्रारंभिक इतिहास को उसने बे-सिर-पैर की बातें कहा। उन्होंने बताया कि मुसलमान तथा अंग्रेजी सत्ता के कालखंड का ही इस देश का सूत्रबद्ध इतिहास मिलता है। उन्होंने इसी साहित्य की शिक्षा बालकों को दी। परंतु अपने देश के मनीषियों तथा विद्वानों ने सही इतिहास का पता लगाकर इतिहास को विकृत स्वरूप देने की विदेशी विजेताओं की राजनीतिक चाल को स्पष्ट कर दिया। प्राचीन काल से हिन्दू समाज का गौरव का इतिहास है। बीच में मुसलमानों के आक्रमण हुए। परंतु उसके विरुद्ध हिन्दु समाज ने सफल-असफल प्रयत्न बराबर किए। व्यापार के निमित्त यहाँ आए हुए तथा बाद में अपनी सत्ता स्थापित करने वाले अंग्रेजों के विरुद्ध भी इस समाज ने अविरल संघर्ष किया। अंग्रेजों के आने से लेकर उनके चले जाने तक ऐसा एक भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
क्षण नहीं है, जबकि हिन्दू समाज ने उस सत्ता का आह्वान न किया हो। जब हिन्दू समाज जागृत रहा, उसकी स्थिति अच्छी रही, तब इस राष्ट्र के उत्कर्ष के दिन देखने को मिले परन्तु जब जागरण मंद पड़ गया, समाज आत्मविस्मृति में डूब गया तब उसे पराजय, अपमान, दुःख, दासता के दिन देखने को मिले।''

साहित्य शब्दसः इतिहास नहीं होता किन्तु साहित्य इतिहास के आधार पर ही चलता है तभी समाज का दिशासूचक बनता है। विमर्श में चाहे दलित हों या स्त्री भारतीय इतिहास में उसे ठीक परिपेक्ष्य में देखकर विमर्श में उतारने की जरूरत है। भारतीय साहित्य की पश्चिमी दृष्टि नहीं हो सकती। दलीय तो कदापित नहीं। रामधारी सिंह दिनकर और नेहरू जी राज्यसभा की सीढ़ियों से उतर रहे थे तभी अचानक नेहरू जी का पैर लड़खड़ा गया। दिनकर जी ने उन्हें पकड़ लिया। सँभलते ही नेहरू जी ने कहा, 'दिनकर जी आपने हमें गिरने से बचा लिया। दिनकर जी ने तपाक से कहा, राजनीति को साहित्य ही बचा सकता है।' साहित्यकार की सर्वसमावेशी दृष्टि चाहिए, जो इतिहास को ठीक से देखे और भविष्य का रास्ता सुगम करे, अन्यथा 'कछुआ धर्म' आत्मघाती होगा।

(चार)

शक्ति की उपासना सचमुच में भारतीय सांस्कृतिक परम्परा और अखण्ड भारत की उपासना है। यह उपासना है जिसमें राम लाखों वर्षों से हमारे साथ उस रावणी संस्कृति से लड़ते आ रहे हैं, बल्कि यह कहना अधिक उचित होगा कि राम ही लड़ रहे हैं, हम तो उनके पीछे चल रहे हैं। मनुष्य का काल और दिशा बोध ही उसके लक्ष्य को तय करता है। साहित्य इसकी विवेचना करते हुए मनुष्य, प्रकृति और ईश्वर ऐसे त्रिकोण का निर्माण करता है जिसके केन्द्र में मनुष्य होता है। भारतीय सारस्वत परंपरा में राम निरन्तर हमारे साथ हैं। आदि कवि वाल्मीकि से लेकर तुलसीदास और निराला तक। राम का निहितार्थ शक्ति की उपासना है। जब-जब राष्ट्र ने शक्ति की उपासना का विस्मरण किया संकट में आया।

वस्तुतः विश्व की चेतना शक्ति ही है। वह न केवल शक्ति है बल्कि सौन्दर्य भी है। 'एकोऽहम बहुस्यामहः' में शक्ति का पूर्ण से पृथक्करण नहीं है बल्कि शक्ति की चराचर में व्याप्ति है। दुनिया में भारत को धर्म और शक्ति का केन्द्र कहा गया है। दुर्गा सप्तसती में भगवती दुर्गा की अभ्यार्थना पुरुषार्थ साधिका देवी के रूप में है। पौराणिक कथाओं के अनुसार देवी सती के पति के अपमान स्वरूप देह त्याग में जहाँ-जहाँ सती के शरीर के विभिन्न अंग, वस्त्र, आभूषण गिरे, कालान्तर से वे शक्तिपीठ के रूप में प्रतिष्ठित हुए। देवी भगवती पुराण में 51 शक्तिपीठों और तत्वचिन्तामणि में 52 पीठों का वर्णन है। भारत विभाजन के बाद आज भारत में 42 शक्तिपीठ बचे हैं। एक शक्तिपीठ पाकिस्तान में चला गया और चार बांग्लादेश में। एक श्रीलंका में तथा एक तिब्बत में एवं दो नेपाल में हैं। इन शक्तिपीठों में आदिशक्ति का कोई मूर्त स्वरूप नहीं है। इनमें पिण्डियों की आराधना की जाती है। इसकी एक विशेषता यह भी है कि शिव सभी पीठों में भैरव रूप में उपस्थित हैं।

अब जरा इसे वैज्ञानिक नजरिये से देखें तो जहाँ-जहाँ शक्तिपीठ हैं वहाँ किसी न किसी प्राकृतिक संसाधन की प्राप्ति होती है। दूसरा शक्ति का रूप निराकार है। तीसरा शक्ति की साधना शिव से लेकर राम तक करते हैं। चौथा इस शक्ति को आकार दें तो भारत का अखण्ड स्वरूप दिखाई देता है। राम इसी शक्ति की उपासना करते हैं। तात्पर्य यह कि जब राम कहते हैं, 'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।' तब इसी की आराधना करते हैं। वस्तुतः वर्षों से हमारे मनीषियों ने हमें एक आराधना का अनुपम सूत्र दिया है जिसके माध्यम से हम अपने इतिहास को स्मरण करते हुए माँ भारती के अखण्ड स्वरूप का ध्यान कर सकें। राष्ट्रीयत्व से विमुख चिंतकों के लिए यह आराधना एक मार्ग प्रशस्त करे इसी कामना के साथ।

उमेश कुमार सिंह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. शिवदयाल से डॉ. प्रीति प्रवीण खरे

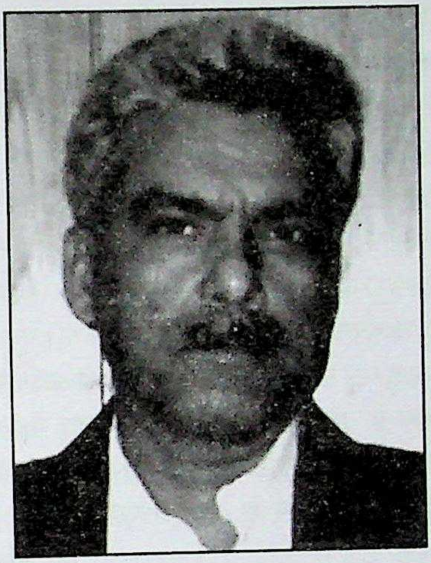

सन् 1974-77 के बिहार आंदोलन में सक्रिय हिस्सेदारी कर, आंदोलन के अनंतर निकली परिवर्तनकामी धाराओं से गहरा जुड़ाव रखने वाले डॉ. शिवदयाल का जन्म 1 जनवरी 1960 को ग्राम शीतलपुरा, मैरवा जिला-सीवान में हुआ। श्रम एवं समाज कल्याण में एम.ए. किया।

आपके कई कहानियाँ, कविताएँ, उपन्यास सहित दर्जनों वैचारिक लेख-निबंध आदि प्रकाशित एवं पर्याप्त चर्चित हुए। आपने ललित निबंध, समीक्षाएँ तथा कुछ पटकथाएँ भी लिखीं। आपकी रचनाएँ धर्मयुग, वागर्थ, हिंदुस्तान, आजकल, पूर्वग्रह, दस्तावेज , परिकथा , इंडिया टुडे, जनसत्ता , पुस्तक वार्ता , प्रभात खबर , संवेद ,सबलोग आदि पत्र -पत्रिकाओं में प्रकाशित होती हैं। पिछले कई सालों से जनसत्ता में आपके वैचारिक लेखों-निबंधों का प्रकाशन हो रहा है। वंचित एवं साधनहीन बच्चों के लिए आपने सृजनात्मक लेखन तथा पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया है। बच्चों की पत्रिका 'झिलमिल जुगनू' और शिक्षकों की पत्रिका 'ज्ञान-विज्ञान' का आप संपादन कर रहे हैं एवं अनेक संस्थाओं से आपका जुड़ाव है।

आपकी कुछ कहानियों, लेख एवं कविताओं का अनुवाद मराठी एवं उर्दू में प्रकाशित (प्रतिष्ठित, साधना, मिळून सारयाजणी, दीपावली, जहाने उर्दू आदि.. पत्र-पत्रिकाओं में) हुआ है। आप पिछले कई वर्षों से गत्यात्मकता और विकास संबंधी विमर्शों पर केंद्रित पत्रिका 'विकास सहयात्री' के संपादक हैं। आपकी प्रकाशित प्रमुख पुस्तकें : छिनते पल छिन, उपन्यास, मुन्ना बैंडवाले उस्ताद- कहानी संग्रह, बिहार की विरासत (सं), बिहार पर महत्वपूर्ण वैचारिक पुस्तक। एक और दुनिया होती उपन्यास, प्रकाशनाधीन। बिहार की राजनीति और विकास, बिहार विषयक एक पुस्तक प्रकाशनाधीन।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रीति : रचनाकार के जीवन में उसके बचपन का बहुत महत्व होता है। बचपन के अनुभवों का प्रभाव जीवन भर रहता है। आपकी शुरुआती दौर में क्या-क्या गतिविधियाँ थीं, साहित्य के बीज का अंकुरण कब और कैसे हुआ?

डॉ. शिवदयाल जी : मेरा जन्म काठमांडु में हुआ। वहाँ पिता बिहार सरकार द्वारा डेपुटेशन पर इंडियन एड मिशन में भेजे गए थे। जन्म के साल-डेढ़ साल बाद ही पटना वापस आ गए। तो होश में काठमांडु या नेपाल या हिमालय देखा नहीं, लेकिन तरह-तरह की कल्पानाएँ मन में बनती रहतीं। चार भाई-बहनों में सबसे छोटा हूँ। लाड़-दुलार तो मिला लेकिन मैं एक संवेदनशील बच्चा था, अनेक प्रकार के प्रभावों को ग्रहण करता रहा। पिता कर्मयोगी थे, लेकिन उन्मुक्त स्वभाव के, उत्सवधर्मी व्यक्ति, परम उत्साही और बच्चों को लेकर महत्वाकांक्षी। उन्हें अपने बच्चों पर गहरा विश्वास था, उन्हें जैसे मालूम था कि उनके बच्चे पथभ्रष्ट नहीं होंगे। माँ गहरी जीवन-दृष्टि वाली महिला थीं। करुणामयी, उदार, परदु:खकातर, स्वयं सहकर भी दूसरों की मदद करने वाली। उसे सैकड़ों कहावतें और लोकोक्तियाँ याद थीं जिनको वह जब-तब उद्धृत करतीं। ठठाकर हँसनेवाली महिला थी माँ, अल्पवय में ही पिता की छाया से वंचित। मूल्यबोध जो अंदर आया उसका मूल स्रोत माँ ही थी। काठमांडु के पशुपतिनाथ मंदिर से बाबा आया करते थे कई-कई वर्षों पर विशेषकर कुंभ-अर्द्धकुंभ के मौकों पर। बहुत छोटी वय में उनके मुख से सुना था- 'जाति-पाति पूछे नहिं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई'; तो ऐसा महौल था। बासठ, पैंसठ और इकहत्तर के युद्धों की छाया में हम बड़े हो रहे थे। देशभक्ति और आदर्शवाद भी अंदर हिलोरें मार रहा था। सन् चौहत्तर में जयप्रकाश नारायण का आंदोलन शुरू हुआ तब दसवीं में पढ़ता था। पहले बड़ी बहन आंदोलन में आई, फिर मैं भी शामिल हुआ। दुनिया को नई दृष्टि से देखना शुरू किया। रेडियो से जुड़ा, युववाणी से और इसी दौर में लिखने की शुरुआत भी हुई। लेकिन प्रकाशन को लेकर मैं वास्तव में गंभीर हुआ अंतिम दशक की शुरुआत में। इस बीच 1983-85 के बीच स्वतंत्र पत्रकारिता भी की थी, कई लेख लिखे थे। काँग्रेस के सौ साल पर 'प्रदीप' में धारावाहिक रूप में उसका संक्षिप्त इतिहास भी छपा 1985 में।

प्रीति : आपकी रचनाओं का फलक बड़ा है, अपने समय का यथार्थ अपनी तमाम जटिलताओं, विद्रूपताओं, संभावनाओं के साथ भी सामने आता है। अभी आपकी कविता- 'अंत, अंत हे गर्दनीबाग!' का ध्यान आ रहा है। कैसे यह रचना एक लंबी कविता में ढल गई?

शिवदयाल : गर्दनीबाग वह मोहल्ला है जहाँ मेरा बचपन बीता, जहाँ जवान हुआ, जहाँ से दुनिया देखना शुरू हुआ, जहाँ से लिखने की शुरुआत भी हुई और मुटिठयाँ तानने की भी। सौ साल पहले ब्रिटिश राज में इसे बाबुओं के लिए बहुत ही सुंदर, व्यवस्थित ढंग से बनाया-बसाया गया था। देख-रेख के अभाव में इसकी दशा बिगड़ती चली गई और अब 'हेरिटेज' कॉलोनी के हकदार इस मोहल्ले को मिटाकर अट्टालिकाएँ खड़ी की जाएँगी। 'बेशकीमती' जमीन पर यह हरा-भरा, तरह-तरह के वनस्पतियों व जीव जंतुओं से आबाद इलाका विकास की भेंट चढ़ रहा है। जब चार-पाँच साल पहले मैंने इस पर लिखना शुरू किया। मेरी स्मृतियाँ और निजी अनुभव उस पूरे इलाके के अनुभवों में रूपांतरित होते गए और एक मोहल्ले 'गर्दनीबाग' का मानवीकरण होता चला गया। सच पूछिए तो अभी भी इस कविता में विस्तार की गुंजाइश है!

प्रीति : आपकी कहानी 'मुन्ना बैंडवाले उस्ताद' बहुत चर्चित हुई। यह कहानी सामुदायिक संबंधों पर आधारित है, एक बाजावाले की कहानी जो दूसरों की बारात सजाता रहता है लेकिन खुद जिसकी शादी नहीं हो पाती! ऐसे विषयों पर लिखने, के लिए क्या तैयारी करनी पड़ती है?

शिवदयाल : एक शाम जब पड़ोस में एक बारात निकल रही थी और मास्टर ने ब्लैरिनेट पर 'पंख होते तो उड़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आती रे रसिया ओ बालमा' की तान छेड़ी, एक फ्लैश में यह कहानी आई। मैं, यानी मेरे अंदर का कहानीकार जैसे उस मास्टर के चरित्र में प्रवेश कर गया। बचपन की संस्मृतियाँ, संगीत के प्रति लगाव, बहुभाषायी व बहुसामुदायिक परिवेश का निम्नमध्यवर्गीय अनुभव और पड़ोसपन की मिठास-यही कुछ इस कहानी का कच्चा माल था। इस कहानी में कुछ सूक्ष्म और तकनीकी ब्यौरे हैं। मैंने कई बाजा वालों से उनके साजों, बजाने के तरीकों आदि के बारे में बात की थी। इस काम के जोखिमों के बारे में भी जानकारी ली थी तो थोड़ी बाहरी तैयारी भी की गई। विषय की जरूरतों के लिए ऐसा करना पड़ता है। दो साल पहले अफ्शाँ बानो ने इस कहानी का उर्दू अनुवाद किया जो दो उर्दू पत्रिकाओं में छपा।

प्रीति : आपकी कविता 'शरणार्थी बच्चा' बहुत पंसद की गई जो शरणार्थी संकट पर है। उषा मेहता ने इसका मराठी अनुवाद किया है। इसके बारे में कुछ बताएँगे?

शिवदयाल : हाल ही में सीरिया और मध्यपूर्व के देशों में गृहयुद्ध के चलते बहुत ही विकट और व्यापक शरणार्थी संकट खड़ा हुआ। वहाँ के लोग भागकर तुर्की के रास्ते यूरोप और दूसरी जगहों का रुख करने लगे। कितने लोग स्त्री-पुरुष और बच्चे रास्ते में ही खत्म हो गए। कितने देशों ने अपने दरवाजे उनके लिए बंद कर दिए। एक दिन तुर्की के एजीयन सागर के बोडरम समुद्रतट पर एक बच्चे का अकेला शव मिला। इस मृत बच्चे की तस्वीर ने दुनियाभर में हलचल मचा दी और मानो शरणार्थियों के प्रति संवदेना का ज्वार उमड़ पड़ा। यह कविता 'शरणार्थी बच्चा' उसी सीरियन बच्चे आलेन कुर्दी के बहाने शरणार्थी संकट और संत्रस्त आबादियों के आप्रवास पर केन्द्रित है। जनसत्ता में छपी इस कविता का मराठी अनुवाद आदरणीया उषा मेहता जी ने किया जो 'दीपावली' में छपा। उषा मेहता मराठी साहित्य का प्रतिष्ठित नाम है, उनका अनुग्रह मानता हूँ कि उन्होंने मेरी एक कहानी 'दायरा' तथा लेख 'भारतीय राष्ट्रवाद की भूमिका' का भी अनुवाद किया जो क्रमशः 'मिलून सारयाजणी' तथा प्रतिष्ठित 'साधना' में छपे। उनके प्रति कृतज्ञ हूँ, यह कविता मराठी में भी सराही गई। यह भी बता दूँ कि मेरी एक लंबी कहानी 'नॉस्टैल्जिया' 9/11 की पृष्ठभूमि पर है और एक बिहारी बंगाली युवा प्रवासी इंजीनियर इसका मुख्यपात्र है। इसके बांग्ला अनुवाद पर काम चल रहा है।

प्रीति : आपका उपन्यास 'छिनते पल छिन' प्रेम संबंधों पर आधारित है। अपने पहले ही उपन्यास में इस विषय को चुनने की कोई खास वजह?

शिवदयाल : 'छिनते पल-छिन' वास्तव में मेरी पहली प्रकाशित कथाकृति है। सबसे पहले इसे पटना के ही एक प्रकाशक ने छापा था, लेकिन जल्द ही उसने व्यवसाय ही उठा लिया। यह एक धक्का जैसा था, बाद में नेशनल वालों ने इसे प्रकाशित किया। मैंने कहा, मैं आंदोलन से जुड़ा था- परिवर्तकामी आंदोलन! सत्तर और अस्सी के दशक (पूर्वार्द्ध) में स्त्री-पुरुष संबंधों को लेकर गंभीर बहस चली थी। उपन्यास का ब्लूप्रिंट तभी बना था सन् 1981 में। हालाँकि बहुत बाद में यह मुकम्मल हुआ और छपा। परिकल्पना थी कि एक स्वतंत्र, आत्मनिर्भर स्त्री की कैसी छवि हो सकती है, जो अपने निर्णयों में स्वतंत्र हो, विकल्पों के चुनाव में स्वतंत्र हो और इसमें पुरुष की कैसी भूमिका हो सकती है। क्या एक सहयोगशील, सदाशय पुरुष वास्तव में कोरी कल्पना है? उपन्यास का कलेवर बड़ा नहीं है, इसमें 'कहानी की क्षिप्रता' है। नायिका या मुख्यपात्र ल्योना अपनी कथा कहती है - प्रथम पुरुष में स्त्री पात्र कहानी कह रहा है। गोपाल राय जी (अब दिवंगत) ने 1950 के बाद जन्मे युवा उपन्यासकारों की कृतियों पर काम किया था। उन्होंने इस उपन्यास के प्रेम विषयक विजन को लीक से अलग हटाकर और इसीलिए मौलिक और आकर्षक बताया। उन्होंने 'बाणभट्ट की आत्मकथा' की एक सूक्ति का जिक्र किया कि नारी की सफलता पुरुष को बाँधने में है, सार्थकता मुक्त करने में।' इस उदात्त सूत्र-वाक्य को इस उपन्यास में एक नये अंदाज में और आधुनिक संदर्भ में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रस्तुत किया गया है। ऐसा उनका मानना था, जो बहुत हद तक सही भी है। प्रेम और सामाजिक नैतिकता का द्वन्द्व भी इस उपन्यास में है।

प्रीति : आपने बच्चों के लिए भी काम किया है। कहते हैं बच्चों के लिए लिखने के लिए बच्चा बनना पड़ता है। आपने बच्चों की पत्रिका 'झिलमिल जुगनू' का संपादन किया है। हिन्दी में बाल साहित्य का परिदृश्य आपको कैसा दिखाई देता है?

शिवदयाल : सच है कि बच्चों के लिए लिखने के लिए आपको बच्चा बनना पड़ता है। बच्चों की आँखों से दुनिया को देखना होता है। यह एक रचनाकार के रूप में आपकी संवेदनशीलता और कल्पनाशीलता की बड़ी कठिन परीक्षा है। यही नहीं, संप्रेषण के स्तर पर भी आपको बहुत सृजनात्मक होना होता है और उतना ही सावधान भी। कभी-कभी आपको पाठ में बच्चों की जिज्ञासा और कल्पनाशीलता को उकसावा देने वाले, उनमें मूल्यबोध जगाने, बल्कि रोपने वाले 'इनपुट्स'भी देने होते हैं। तो कुल मिलाकर साहित्य का यह एक अलग ही विषयानुशासन प्रतीत होता है। बांग्ला जैसी भाषा में तो आपको पक्का लेखक तभी माना जाता है, जब आपने बच्चों के लिए भी स्तरीय चीजें लिखी हों। हमारे यहाँ 'बाल साहित्यकारों' की एक अलग ही कोटि या वर्ग बना दिया गया है और बाल साहित्य संबंधी चर्चा वहीं तक सिमटी रहती है। यह एक तथ्य है कि हमारे लेखक शायद ही बाल साहित्य पढ़ते हैं, बहुत कम लोग हैं जो रचते भी हैं। बाल साहित्य लिखा तो जा रहा है विपुल मात्रा में, लेकिन स्तरीय रचनाओं की अभी भी बहुत जरूरत है। किशोरों के लिए, नवाक्षरों के लिए भी पाठ्य सामग्री चाहिए - साहित्य और कहानी-कविता ही नहीं, समाज विज्ञान और शुद्ध विज्ञान संबंधी विषयों के लिए भी। बच्चों पर पाठ्यक्रम पूरा करने का दबाव इतना है कि पाठ्य पुस्तक से बाहर की सामग्री देखने-पढ़ने का उनके पास समय नहीं। अभिभावक भी इस ओर से उदासीन हैं, टीवी की जो घुसपैठ है वह अलग। बच्चों के दैनंदिन जीवन में साहित्य के लिए जगह बनाना अलग से एक काम है- परिवार और स्कूल के भी जिम्मे।

प्रारंभिक शिक्षा के सृजनात्मक पक्ष से मेरा जुड़ाव रहा है। स्पीड, बिहार शिक्षा परियोजना, ईस्ट एण्ड वेस्ट एजुकेशनल सोसायटी जैसी संस्थाओं के लिए समय-समय पर काम करता रहा हूँ। वंचित बच्चों के लिए, ड्रापआउट बच्चों के लिए मैंने पाठ्य-पुस्तकें बनाईं। भाषा शिक्षण सामग्री वगैरह बनाई। ओरियंट लैंगमैन के अनुराग पाठमाला के लिए कई अध्याय लिखे। भारत सरकार के सहयोग से ईस्ट ऐंड वेस्ट एजुकेशनल सोसायटी द्वारा प्रकाशित बच्चों की पत्रिका 'झिलमिल जुगनू' तथा शिक्षक की पत्रिका 'ज्ञान विज्ञान' का संपादन भी किया। 'झिलमिल जुगनू' एक नए फार्मेट की पत्रिका थी जिसे बहुत सराहना मिली। लेकिन हमारे हिन्दी समाज में ऐसे प्रयासों की निरंतरता को बनाए रखना प्राय: संभव नहीं हो पाता। हाँ, मैं बिहार बाल भवन 'किलकारी' से भी जुड़ा रहा हूँ, स्थापना काल से ही। बच्चों के लिए काम करके विलक्षण संतोष मिलता है, आप अपने को ऊर्जस्वी भी अनुभव करते हैं। उनका निश्छल प्यार अलग से बोनस है..।

प्रीति : आपकी लेखनी अनेक विधाओं पर चल रही है। यह कैसे संभव हो पाता है, आपको लगता है ऐसे में रचना कर्म के साथ न्याय हो पाता है?

शिवदयाल : हाँ मेरा लेखन बहुविधात्मक है, लेकिन यह सायास, हाथ आजमाने जैसा नहीं है, सहज ही सधता आया है यह। अभिव्यक्ति विधाओं के रूप में अलग-अलग फार्म में प्रकट होती है। जो कहानी में कहना है वह निबंध में नहीं कहा जा सकता, उसी प्रकार कहानी का विषय कविता में नहीं उतर सकता। एकाधिक विधाओं में काम करना रचनाकार का अपना चुनाव है और यह बहुत कुछ उसके अपने व्यक्तित्व व स्वभाव पर निर्भर करता है। शुरू से मुझे अलग-अलग चीजें करने में आनंद आता है। लेखन से भी पहले, सबसे आरंभिक लगाव तो मेरा संगीत से रहा और पेंटिंग से। मन लिखने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में ज्यादा रमा, फिर मैंने इसमें रूप या विधा को बाधा नहीं बनने दिया। और यह भी नहीं कि एक या दूसरी विधा पहले या बाद में आई। युववाणी के कार्यक्रमों में कविता, कहानी, संस्मरण, सब चलता था। लेख-निबंध भी लगातार लिखता रहा। वैचारिक लेखन या विचार साहित्य भी अत्यंत जरूरी सृजनात्मक उपक्रम है। ललित निबंध मैंने कम लिखे लेकिन जब भी लिखा एक अलग ही प्रकार के तोष से भर गया। वैसे तो पाठक ही निर्णयकर्ता है लेकिन विषय की जरूरत के हिसाब मैं विधा का चुनाव करता हूँ, यह भी कह सकते हैं कि विषय स्वयं विधा, यहाँ तक कि फार्म और भाषाशैली का भी चुनाव कर लेता है। मैंने तो अब तक अपनी ओर से रचना के साथ अन्याय नहीं होने दिया है। मैं तो कहूँगा कि अलग-अलग विधाओं में लिखकर मैं अपने व्यक्ति और रचनाकार की बहुमुखता और बहुवचनता की रक्षा ही करता हूँ।

प्रीति : अभी हिन्दी में आलोचना की क्या स्थिति है, आपने अपने व्याख्यान में ऐसा संकेत दिया कि आप इससे संतुष्ट नहीं हैं, आपने 'आलोचना के राजपथ' की बात कही। आपको ऐसा क्यों लगता है?

शिवदयाल : आलोचना के लिए पहले रचना को चुनना होता है। यह चुनाव पूरी बौद्धिक ईमानदारी और तटस्थता के साथ होना चाहिए और इसमे सिर्फ और सिर्फ रचना को ध्यान में रखना चाहिए। अब यह तो एक खुला सच है कि हमारे यहाँ रचना से अधिक रचनाकार का ध्यान रखा गया - उसके वैचारिक रुझानों का, उसकी उठ-बैठ और आवाजाही का और वह सब कुछ आलोचक के अनुकूल रहा तो फिर उसके काम को मूल्यांकन योग्य माना गया, उसकी प्रशस्ति भी हुई। अन्यथा की स्थिति में रचनाकार गया काम से। ऐसे में रचनाशीलता का बहुत नुकसान हुआ, अनेक कृतियाँ और उनके कृतिकार प्रकाश में आने से रह गए, पाठक बेहतर रचनाओं के आस्वादन से रह गए। आलोचना के माध्यम से रचना का पुनराविष्कार होता है, वह केवल मूल्यांकन तक सीमित नहीं। बहुत तैयारी का काम है आलोचना। बहुत श्रम और समय खर्च कर कोई आलोचक बनता है। आज हिन्दी में इतना कुछ लिखा जा रहा है, इतने सारे विषय-वैविध्य के साथ लेकिन जब हम किसी एक कालखंड की रचनाशीलता पर बात करते हैं तो चर्चा कुछ रचनाकारों तक ही सिमटी रह जाती है। इन्हीं अर्थों में मैंने अपने वक्तव्य में 'आलोचना के राजपथ' की बात कही जिस पर थोड़े लोगों की, यानी रचनाकारों की आवाजाही है। रचना का जनपथ इसे चुनौती दे रहा है जो वास्तव में हाशिए से निर्मित हुआ है। मैं मानता हूँ कि आलोचक को सेलेक्टिव होना पड़ता है लेकिन आलोचना समदृष्टि और न्यायबुद्धि से युक्त हो तभी सार्थक होती है। आलोचना में वर्गीय दृष्टि की तूती बोलती रही, लेकिन अब उसी से काम नहीं चल सकता। यथार्थ पहले के मुकाबले बहुत ज्यादा संश्लिष्ट और परतदार है, आलोचना के नये औजारों और निकषों को आजमाना भी आज के आलोचक की जिम्मेदारी बनती है।

प्रीति : आपके वैचारिक लेख भी चर्चित हुए हैं, आपकी गिनती निबंधकारों में भी होती है। आप स्वयं पर किन निबंधकारों का प्रभाव मानते हैं?

शिवदयाल : लेख निबंध मैं अधिक निरंतरता से लिखता रहा हूँ। अपने समय में हस्तक्षेप का यह एक बहुत कारगर तरीका है। शायद इसलिए भी कि यह संभवत: सबसे स्वाधीन अभिव्यक्ति है लेखक या निबंधकार की जिसमें वह किसी विषय-विशेष पर पाठक के साथ सीधा, प्रत्यक्ष रूप से अपनी चिंता या विचार साझा कर सकता है। इतिहास, राजनीति और संस्कृति संबंधी विषयों पर मैं लिखता रहा हूँ। मुझे हमेशा लगता रहा है कि निबंध लेखन लेखकीय व्यक्तित्व को पूर्ण बनाता है। यहाँ यह भी कहना जरूरी लगता है कि वैचारिक लेख और निबंध में मौटे तौर पर खास फर्क नहीं है, तकनीकी तौर पर भले महीन फर्क हो। लेख में, वैचारिक लेख में लेखक थोड़ा औपचारिक होता है जबकि निबंध में वह आत्मीय हो सकता है।

हिन्दी में निबंध लेखन की एक सुदृढ़ परम्परा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भारतेंदु युग से ही चली आ रही है। लगभग सभी बड़े लेखक बड़े निबंधकार भी रहे हैं। मुझे हजारी प्रसाद द्विवेदी और कुबेरनाथ राय ने विशेष रूप से प्रभावित किया है। जैनेन्द्र, अज्ञेय, विद्यानिवास मिश्र और निर्मल वर्मा, बल्कि महादेवी का निबंध-साहित्य भी अनुपम है। वर्तमान में रमेशचंद्र शाह के निबंधों का कायल हूँ मैं! जहाँ तक प्रभाव की बात है कोई भी लेखक अपने पूर्ववर्तियों के प्रभाव से सर्वथा मुक्त नहीं हो सकता। ये सभी बहुत बड़े लेखक-विचारक हैं। लेख-निबंध में विचार, चिंतन और विश्लेषण का बहुत महत्व है और अपनी तो संवेदना ही मूल पूँजी है।

प्रीति : आप एक पत्रिका 'विकास सहयात्री' के संपादक भी हैं। साहित्य सृजन और पत्रकारिता इन दोनों कार्यों को आपने निष्ठा और कुशलता के साथ साधा है। इसे आप कैसे देखते हैं?

शिवदयाल : बिहार जैसे पिछड़े हिन्दी प्रदेशों में राजनीति में विकास को, लोगों की मूलभूत जरूरतों को एजेण्डे पर लाने के लिए बिहार विभाजन के पश्चात सन् 2000 में बिहार, झारखंड के कुछ बुद्धिजीवियों एवं कार्यकर्ताओं ने एक विकास केन्द्रित पत्रिका 'सहयात्री' का प्रकाशन शुरू किया। सन् 2003-04 में मैं इससे जुड़ा और 2009 से इसका संपादक हूँ। अब यह 'विकास सहयात्री' के नाम से पंजीकृत है और छप रही है। यह एक बिल्कुल अलग फार्मेट की त्रैमासिकी है जिसका हर अंक जन सरोकारों से संबंधित किसी एक मुद्दे पर एकाग्र होता है। इसमें गत्यात्मकता एवं विकास संबंधी अद्यतन 'विमर्शों को स्थान मिलता है। यह एक अलग तरह का काम है जिसकी अब तो आदत हो गई है।

पिछले कुछ दशकों में कुछ विचित्र लेकिन त्रासद बात यह हुई कि साहित्य का पहले सिनेमा से और बाद में पत्रकारिता से भी रिश्ता लगभग टूट चला। दोनों की हालत आप देख लीजिए! पत्रकारिता की जहाँ तक बात है, पहले तो साहित्यकार ही पत्रकार होते थे ज्यादातर, वे बड़े प्रतिबद्ध लोग होते थे, भाषा और जन सरोकारों के प्रति। बाद में कारपोरेट मीडिया आया तो पत्रकार संस्थानों से निकलने लगे व्यापारियों के हितसाधन की क्षमता से लैस होकर। अभी तो जैसे भाषा कोई चीज ही नहीं रही। कहीं अब अखबारों में प्रूफ रीडर नहीं दिखाई देते। देखते-देखते विश्वीकरण या वैश्विकीकरण 'वैश्वीकरण' हो गया और राजनीतिक 'राजनैतिक'। पत्रकारिता की भाषा तो स्वयं पत्रकार ही सुधार सकते हैं। आने वाले दिन इस लिहाज से और मुश्कित होने वाले हैं।

प्रीति : साहित्य में दलित विमर्श और स्त्री विमर्श की क्या प्रासंगिकता है?

शिवदयाल : ऐसा नहीं कि हिन्दी साहित्य अब तक दलित संवेदना या स्त्री संवेदना वाली रचनाओं से खाली था। लेकिन इसका एक विमर्शकारी रूप साहित्य में नब्बे के दशक में उभरकर आया। यह हाशिए की आबादियों के राजनीतिकरण का नतीजा है। जब उन्हें राजनीति में और सत्ता संरचना में जगह हासिल हुई तो एक अधिकारवादी अभिव्यक्ति उसकी साहित्य में भी हुई। यह सतत् लोकतंत्रीकरण का परिणाम है। मूक मुखर हुए हैं और वे स्वयं अपने बारे में लिखना-कहना चाहते हैं। दलित स्वयं अपनी कहानी कह रहे हैं और इसे दलित साहित्य कह रहे हैं, यानी ऐसा साहित्य जो दलित जीवन पर स्वयं दलितों द्वारा लिखा गया हो। स्त्रीवाद तो साहित्य में आया है लेकिन, 'स्त्री साहित्य' तक बात नहीं पहुँची। शायद इसलिए कि स्त्री अपने आप में उसी प्रकार एक वर्ग नहीं है जैसे कि दलित। यह एक प्रकार का अस्मितावादी लेखन है जिसकी सीमाएँ हैं। देखना है एक प्रवृत्ति के रूप में हिन्दी साहित्य की मुख्यधारा से कब तक अलग-अलग रह सकेगा। साहित्य वैसे बँटवारे का नहीं ऐक्य और सम्मिलन का माध्यम है, उपक्रम है। अगर यह भी विभाजन का ही माध्यम बना दिया गया तो फिर मनुष्य जाति के लिए कोई आशा नहीं।

प्रीति : इन दिनों क्या लिखना-पढ़ना चल रहा है? आपकी आने वाली किताबों के बारे में पाठक जानना चाहते हैं?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिवदयाल : लिखना-पढ़ना तो चलता ही रहता है। कुछ लेख लिखे हैं। उसके बाद एक कहानी लिखी है जो जल्द ही छपेगी, कुछ कविताएँ भी लिखीं। हाँ, इस साल मेरा उपन्यास आना चाहिए। बिहार पर एक और किताब भी आएगी – 'बिहार की राजनीति और विकास का द्वन्द्व', इसमें बिहार विषयक मेरी टिप्पणियाँ व लेख हैं। एक और काम इस वर्ष होना है, संवेद (संपादक- किशन कालजयी) का एक अंक रमेशचंद्र शाह पर केन्द्रित होगा। इसके अतिथि संपादक की जिम्मेदारी मुझ पर है।

प्रीति : जैसा कि आपने बताया, कविता, कहानी और लेख के अलावा आपका उपन्यास आने वाला है। इसकी विषयवस्तु के केन्द्र में किस तरह का ताना-बाना बुना गया है?

शिवदयाल : उपन्यास सन् चौहत्तर के आंदोलन के अनंतर और उसकी निरंतरता में विकसित जमीनी आंदोलनों की पृष्ठभूमि पर है। एक तरह से यह परिवर्तनकामी युवाओं का जीवन आख्यान है जिसमें आंदोलन का उन्मेष और बिखराव, दोनों दर्ज हैं। हमारे यहाँ अब तक शांतिपूर्ण, स्वतंत्रता आंदोलन के मूल्यों से प्रेरित आंदोलन साहित्य, विशेषकर उपन्यास का विषय नहीं बन पाए जबकि आजादी के बाद से आज तक समाज और व्यवस्था को बदलने, समाज और राजनीति के लोकतंत्रीकरण में इनकी बहुत बड़ी भूमिका रही है। अलग-अलग इलाकों में दबाव समूहों के रूप में इनका अस्तित्व बना रहा है और जनपक्षधर नीतियाँ बनाने में इनका बड़ा योगदान है। यह उपन्यास सत्तर-अस्सी के दशक में न सिर्फ देश के अंदर बल्कि विदेशों में चले युवा आंदोलनों-क्लब ऑफ रोम, ग्रीन पीस से लेकर चीन के लोकतंत्रकारी छात्रों के संहार तक पर नजर रखता है। सोवियत संघ के बिखराव और कम्यूटिस्ट सत्ताओं के विघटन सम्बंधी विवरण भी इसमें दर्ज हैं। भारत में वह तुमुल कोलाहल का दौर रहा, इसे भी उपन्यास में कैप्चर किया गया है।

संपर्क : डॉ. शिवदयाल

103 बी, पूजा निवास अपार्टमेंट, महेश नगर, (बोरिंग रोड पानी टंकी के दक्खिन) पटना-800024, मो. 09835263930

मो. 09835263930

संपर्क : डॉ. प्रीतिप्रवीण खरे,

19, प्रथम तल, सुरुचि कॉलोनी एम.ए.सिटी चौराहे के पास, कोटरा रोड, भोपाल-462003 (म.प्र.)

मो. 9425014719

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रामचन्द्र शुक्ल

भारत को क्या करना चाहिए

'भारत को क्या करना चाहिए' यह प्रश्न इतना व्यापक है कि ध्यान केन्द्रित करने के लिए, इसे कई भागों में बाँटना जरूरी होगा। वास्तव में इसमें कई उपप्रश्न छिपे हैं, जैसे अपनी सामाजिक स्थिति को देखते हुए भारत को क्या करना चाहिए, अपनी राजनीतिक परिस्थिति को बदलने के लिए भारत को क्या कदम उठाने चाहिए, आदि आदि। प्रश्न का ऐसा विभाजन इसलिए भी आवश्यक है कि इसे एक अधिक व्यावहारिक सीमा में बाँधा जा सके। लेकिन यदि हमें ऐसे कार्यकर्ता मिलें, जो इस प्रश्न के अलग-अलग पहलू को हल करने में खुद को लगाएँ और सिर्फ अपने काम से ही मतलब रखें तो क्या इससे काम चल जाएगा? नहीं। किसी एक पहलू को दूसरे पर तर्जी देते वक्त, बदलते हुए समय को भी ध्यान में रखना होगा। दरअसल, हमें समाज सुधारक, राजनीतिज्ञ, आंदोलनकर्ता, कवि और शिक्षाविद् सबकी एक ही साथ, एक ही समय में, जरूरत है। लेकिन इनसे भी ज्यादा जरूरत हमें ऐसे लोगों की है, जिनका काम यह देखना हो कि किसी विशेष कार्यक्षेत्र में किसी विशिष्ट अवसर की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पर्याप्त लोग हैं या नहीं। लेकिन यहाँ जो वस्तुस्थिति है, उसे कोई भी पसन्द नहीं करेगा। बहुधा हमें किसी एक विशेष कार्यक्षेत्र से संबंध रखनेवाले ऐसे व्यक्ति मिलते हैं, जो दूसरी तरह के काम करनेवालों के बारे में बहुत हल्के ढंग से बात करते हैं। किसी भी स्थिति में यह वांछनीय नहीं है। इसके विपरीत प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति द्वारा कोई विशेष परिणाम प्राप्त करने के लिए अपनाए गए तरीके के सामर्थ्य में विश्वास होना चाहिए, ऐसा विशेष परिणाम, जो आगे चलकर एक बड़े सामान्य लक्ष्य का अनिवार्य अंग होने जा रहा हो। लेकिन जिस क्रम में हमें आगे बढ़ना है, वह हमारी आँख से ओझल नहीं होना चाहिए। इस दिशा में की गई कोई भी गलती आगे चलकर अनंत असफलताओं को जन्म दे सकती है।

महत्व के लिहाज से जिस चीज पर हमें सबसे पहले ध्यान देना चाहिए, वह है सामाजिक बुराइयों को दूर करने का काम, क्योंकि इनका असर सीधे उस सामाजिक स्रोत पर पड़ता है, जहाँ से हमें प्रत्येक क्षेत्र में काम करने के लिए कार्यकर्ता प्राप्त होते हैं। यदि आप इस रचनात्मक शक्ति की उपेक्षा करेंगे, तो कायदे से आप कहीं से कुछ भी उम्मीद नहीं कर सकते। बात यह है कि किसी काम को करने के लिए पहले उपकरण खोजा जाता है, फिर हम उसके इस्तेमाल के तरीके को जानने के लिए अधीर होते हैं। यह बात हमारी समझ में और भी आसानी से आ सकेगी, अगर हम अपने समाज में व्याप्त किसी एक बुराई के प्रभाव

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर ही ध्यान दें। उदाहरण के लिए बाल-विवाह को लें। इस प्रथा ने समाज के विभिन्न क्षेत्रों में जो नुकसान पहुँचाया है, उसे पूरी तरह कौन बयान कर सकता है? यह हमारे शारीरिक, मानसिक और नैतिक पतन का एकमात्र कारण है। अपने अतिरिक्त दूसरी बातों पर ध्यान देने के लिए आवश्यक शक्ति और अवकाश से हमें वंचित करके यह प्रथा हमें स्वार्थी बना देती है और इस प्रकार हमारे अन्दर सारी राष्ट्रीय भावनाओं के विकास को अवरुद्ध कर देती है। यदि किसी स्वस्थ समाज में इस प्रथा को शुरू करके आप वहाँ उसके प्रभाव को देखें तो आपको पता चलेगा कि यह कहाँ ले जाती है। उस समाज के व्यक्ति की गतिविधियों का दायरा उसकी अक्षमता के बढ़ने के साथ-साथ निश्चित रूप से सिमटता जाएगा और उसी अनुपात में उसकी गतिविधियों से प्रभावित होनेवाले लोगों की संख्या भी घटती जाएगी। परिणामतः यदि पहले उस समाज में ऐसे लोग थे, जो एक पूरे समूह का ध्यान रख सकते थे, तो अगली पीढ़ी में (इस प्रथा को लागू करने के बाद) आपको ऐसे लोग मिलेंगे, जो सिर्फ अपने परिवारों की देखभाल करने में सन्तुष्ट हैं। उससे नीचे उतरेंगे, तो आपको यह देखकर धक्का लगेगा कि बहुसंख्यक लोग अपने आपको छोड़कर और किसी चीज की चिन्ता नहीं करते।

एक शक्तिशाली समाज के निर्माण में सफल हो जाने के बाद, जिसके सदस्य कोई भी काम करने को तैयार हों, हमें उन सदस्यों को शिक्षा देने की फिक्र करनी चाहिए, ऐसी शिक्षा जो दूसरी बातों के अतिरिक्त एक उच्च उत्तरदायित्व के भाव से किसी को युक्त कर देती है और उसकी महत्वाकांक्षाओं के लिए ऐसे क्षेत्र प्रदान करती है, जो सलाम बजाने या मालगुजारी इकट्ठा करने के काम से बड़े होते हैं। हमें इस बात से खुशी है कि बंगाल के हमारे भाई बहुत अरसे से महसूस की जा रही इस कमी को दूर करने की कोशिश कर रहे हैं। शिक्षा से मेरा मतलब सामान्य महत्व के मामलों के बारे में हमारे नेताओं की राय का अशिक्षित जनता तक सम्प्रेषण भी है, ताकि अवसर आने पर उनका (अशिक्षित जनता का) सहयोग मिलने से न रह जाए। प्रत्येक ग्रामवासी को यह जानना चाहिए कि अधिक काम करने के बाद भी उसे उसके बदले में कम क्यों दिया जाता है, प्रत्येक नागरिक को यह बताया जाना चाहिए कि उसकी सेवाओं की इतनी कम माँग क्यों है, और वस्तुतः प्रत्येक भारतीय को यह साफ-साफ पता होना चाहिए कि उसका देश दिन-प्रतिदिन और गरीब क्यों होता जा रहा है? आप अगर चाहें तो इसे राजनीतिक शिक्षा भी कह सकते हैं। इस प्रकार की शिक्षा देने के लिए हमें विभिन्न तरीके और साधन अपनाने चाहिए। स्कूल और कॉलेज ही शिक्षा के एकमात्र स्थान नहीं होने चाहिए। सुविधाजनक स्थानों पर सार्वजनिक भाषणों का आयोजन करके और ऐसे लोगों को गाँवों में भेजकर, जो अशिक्षित जनता को उन्हें प्रभावित करनेवाली परिस्थितियों के बारे में समझाकर उसे काम करने का रास्ता बताएँ, हम बहुत कुछ कर सकते हैं। भारतीय जन-मानस को सामंजस्यपूर्ण धरातल पर लाने में देशी भाषा के बढ़ते हुए साहित्य की जो भूमिका है, उसकी शायद हम उपेक्षा नहीं कर सकते। यहाँ मैं ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित किसी विस्तार में जाने की कोई इच्छा नहीं रखता। इतना ही कहना काफी है कि इन क्षेत्रों में से किसी एक पर हम कितना ध्यान दें, यह तय करने में समय की आवश्यकता ही हमारे लिए सबसे महत्तवपूर्ण होनी चाहिए। उदाहरण के लिए भारत की आर्थिक स्थिति की माँग यह है कि किसी भी दूसरे काम से पहले उसके उद्योग धंधों का परिवर्तन और परिष्कार किया जाए और यह, जिसे हम तकनीकी शिक्षा कहते हैं, उस पर सबसे ज्यादा निर्भर करता है।

> *स्कूल और कॉलेज ही शिक्षा के एकमात्र स्थान नहीं होने चाहिए। सुविधाजनक स्थानों पर सार्वजनिक भाषणों का आयोजन करके और ऐसे लोगों को गाँवों में भेजकर, जो अशिक्षित जनता को उन्हें प्रभावित करनेवाली परिस्थितियों के बारे में समझाकर उसे काम करने का रास्ता बताएँ, हम बहुत कुछ कर सकते हैं।*

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अब हम अपने काम के उस हिस्से पर आते हैं, जिससे लोग सबसे ज्यादा डरते हैं, हालाँकि इसमें इससे ज्यादा कुछ नहीं करना कि सरकार से यह कहा जाए कि वह हमसे ठीक तरह से पेश आए और ऐसे कदम उठाए, जो प्रगति की दिशा में हमें थोड़ा भी आगे ले जा सकें, न कि हमारे रास्ते में बाधा बन जाएँ। दुख की बात यह है कि हमारी भारत सरकार के कुछ अपने अजीबो-गरीब पूर्वग्रह हैं।

कुछ लोग इन्ही के मुताबिक चलना पसन्द करते हैं। वे ऐसे सौभाग्यशाली लोग हैं, जिन्हें 'स्वर्ग के साम्राज्य में अकेले प्रवेश मिलेगा।' ये सौभाग्यशाली लोग अपनी सारी विशिष्टताएँ खो बैठते हैं और अंततः उस परम सत्ता के साथ एकाकार हो जाते हैं। इस तरह हिन्दुओं की अवधारणा के अनुसार वे मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं! अगर सब कुछ ऐसे ही चलता रहा, तो ब्रिटिश सरकार जनता के बीच बदनाम होकर रहेगी। यदि हमारी सरकार शान्ति और सन्तोष चाहती है, तो उसे ऐसी नीति और लक्ष्य को अपनाना होगा, जो उसके पिछले चरित्र से कतई अलग हो। हमारे विचारों के खिलाफ ब्रिटिश लोग जो सबसे सामान्य दलील पेश करते हैं, वह यह है कि वे (हमारे विचार) जनता के विचार नहीं हैं। हमारे नेताओं को बहुत ही चालाकी भरे ढंग से 'लाखों लाख लोगों का स्वघोषित प्रतिनिधि' कहा जाता है। पहले मुझे यह पूछने की इजाज़त दीजिए कि सार्वजनिक मामलों में हमें किन लोगों की राय नहीं लेनी चाहिए। क्या वे ऐसे लोग नहीं हैं, (1) जिन्हें आपने अपने खास मकसद के लिए सारी चीजों से अनजान रखा है और (2) जो आपके पूर्वग्रहों से फायदा उठा लेने के हर मौके की तलाश में रहते हैं? पहली किस्म के लोगों का अपना कोई मत नहीं होता। उनके विपरीत दूसरी किस्म के लोग अपना मत रखने का दावा करते हैं, लेकिन वे संख्या में और बौधिक दृष्टि से इतने उपेक्षणीय हैं कि हमारे आन्दोलनों के चरित्र के प्रतिनिधित्व में कोई सन्देह पैदा नहीं कर सकते। जहाँ तक हम देख पाए हैं, साम्राज्यवाद ही भारत में ब्रिटिश राष्ट्र की नीति की प्रेरक शक्ति रहा है। उन्होंने (ब्रिटिश) यह हाल कर रखा है कि भारतीय प्रशासन में उनकी अपनी ब्रिटिश परिकल्पना का एक रेशा भी नहीं दिखाई देता।

इसमें शक नहीं कि वे रूप को सुरक्षित रखते हैं लेकिन वे उसके सार-तत्व को खत्म कर देते हैं। हमारे पास म्युनिस्पल बोर्ड हैं, लेजिस्लेटिव काउंसिल हैं, क्या नहीं है? लेकिन दिखावे के अलावा उनका और कोई मकसद भी है? हमारा प्रशासनिक जगत् ऐसा क्षेत्र नहीं रह गया है, जहाँ प्रतियोगिता के लिए कोई जगह हो, जिसमें योग्यता की जाँच का कोई मौका हो। शिक्षा को इसके दरवाजे पर दुत्कार मिलती है, गुण को इसके कमरों से खारिज कर दिया जाता है। यह बनावटीपन और चालाकी की दुनिया है। यहाँ सिर्फ 'अनुभव' की जरूरत है, जो सलाम बजाने और 'हुज़ूर' के हुक्म को दोहराने का ही दूसरा नाम है। जिस आदमी के पास यह योग्यता नहीं, वह कितना ही विद्वान् क्यों न हो, उसे यहाँ प्रवेश नहीं मिल सकता। हमारे अफ़सरों पर, ख़ासकर जिला अफसरों पर ज्यादा से ज्यादा लोगों के मुँह से 'हुजूर' सुनने की सनक इस बुरी हद तक सवार हो गई है कि वे किसी देशी आदमी को अँग्रेजी में बोलते हुए भी बर्दाश्त नहीं कर पाते, अगर वह कम से कम उनको सुनाने के लिए खुशामदी बातें न करता हो। ऊपर जो बात कही गई, वह मुख्य तौर पर यह दिखाने के लिए कि राजकीय मान्यता को उच्चतर उपलब्धियों के लिए प्रेरक नहीं माना जा सकता। हमें अपना पुरस्कार कहीं और खोजना होगा। हमें इसे या तो ईमानदार दिलों में खोजना चाहिए या फिर अगर हम पैसे के स्वार्थ से काम करते हों, तो बटुओं में खोजना चाहिए। यदि आप योग्य हैं, तो हमारे कवि आप का यश गाएँगे, हमारी जनता खुली बाँहों से आपका स्वागत करेगी, हमारी स्त्रियाँ आप पर फूल बरसाएँगी या यदि बुरी स्थितियों में फँस गए हैं, तो आपके लिए आँसू बहाएँगी। आप जहाँ भी जाएँगे, आपके साथ एक सच्चा और राष्ट्रीय उत्साह का सागर चलेगा, जो झूठे और बनावटी उत्साह के विरुद्ध होता है। आपकी एक झलक पाने को लोग बेचैन रहेंगे। क्या मानवीय अहं की पुष्टि के लिए यह पर्याप्त नहीं है?

-साभार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दानबहादुर सिंह

बंगलादेश के भाषा-आन्दोलन पर एक अन्तर्दृष्टि

1948 ई. में पूर्वी बंगाल अब 'बंगला देश' में हुए भाषा-आन्दोलन से इतिहास में कई परिवर्तन देखने को मिले। स्वाधीन पाकिस्तान की सृष्टि के पीछे जो भी कारण रहा हो, किन्तु इस सत्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि वह एक नितान्त चेतनाहीन कार्य था। दो भिन्न पृथक, भूमि के समुदायों का जिनका न कोई भौगोलिक सामीप्य था, और न ही किसी प्रकार की जातीय एकता, ऐसी दशा में एकीकरण कदापि संभव नहीं था। टैगोर बंगलादेश के लोगों के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि थे, किन्तु पाकिस्तानी सैनिक-शासकों की दृष्टि में वह अकेले आँखों की किरकिरी थे। पश्चिमी पाकिस्तान के शासकों ने असहमत जनसंख्या पर उर्दू भाषा को बलपूर्वक थोपने की पूरी कोशिश की और यह उनके ज्ञान में न था। यहीं से देश के विघटन का बीज बोया गया।

सचमुच यह पाकिस्तान के भाग्य की एक नारकीय विडम्बना थी कि बंगलाभाषा हिन्दुओं की भाषा के रूप में उद्घोषित की गई थी जिसको 1940 ई. में चिटगाँव की एक पत्रिका में अविश्वसनीय सिद्ध किया गया था और यही पाकिस्तान के विनाश का कारण बनी। किन्तु ढाका विश्वविद्यालय के अध्यापकों के साथ स्थापित मुस्लिम साहित्यिक समिति ने बंगलाभाषा को और अधिक उदारभाव से संसृष्टि रूप में प्रस्तुत करने का अथक प्रयास किया। काजी अब्दुल उदूद, काजी एम. हुसेन, अब्दुल हुसेन और अन्य जैसे अनेक मशहूर बुद्धिजीवी स्वतंत्र चिंतकों ने बंगाल के परंपरानिष्ठ मुस्लिम सोसाइटी के मानस-पटल को झकझोर कर रख दिया। प्रदर्शन की एक जबरदस्त कोशिश की गई थी कि बंगला भाषा का प्रयोग हिन्दुओं की विशेषाधिकार भाषा नहीं थी। इस प्रकार यह पूरी कोशिश की गई थी कि बंगाली मुस्लिमों की भाषा बंगला भाषा की पहचान रूप में एक बंगाली राष्ट्रवाद का अभ्युदय हो जाए।

इस पहचान की आवश्यकता उस घड़ी अत्यधिक महसूस की गई जब पाकिस्तान के राष्ट्रपिता जिन्ना ने मार्च 1948 ई. में ढाका विश्वविद्यालय के कर्जन हाल में दीक्षान्त समारोह को सम्बोधित करते हुए स्पष्ट शब्दों में कहा था कि पाकिस्तान की राजभाषा उर्दू होने जा रही है और कोई अन्य भाषा नहीं। जब उन्होंने पहली

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बार रमन रेस कोर्स में यह घोषणा की, उस समय किसी प्रकार का विरोध नहीं था। इस आभासी उपलब्धि से प्रोत्साहित उन्होंने अपने दीक्षान्त समारोह को सम्बोधित करते हुए पाकिस्तानी सरकार के इस फैसले को दोहराया। किन्तु कालान्तर में उनके इस फैसले के चार दिनों बाद ही श्रोताओं के युवा स्नातकों की ओर से एक जबरदस्त विरोध उठ खड़ा हुआ। विरोध जोर पकड़ता गया, पड़तालें शुरू हो गई, धरने प्रदर्शन शुरू हो गए और 11 मार्च को न्यायाधीशों की अदालत के सामने ही पुलिस फायरिंग में एक प्रदर्शनकारी की मृत्यु हो गई। अपने शासकों के इस भेद-भाव पूर्ण रवैया से बंगलादेश की जनता की भावनाओं का पहला आवेग फूट पड़ा। पूर्वी बंगाल में लगभग सर्वत्र ही उस रोज शान्तिपूर्ण हड़ताल की गई। इस जुलूस में जेसोर की युवा छात्राएँ सब से आगे रहीं। यद्यपि जिन्ना की इस घोषणा से बुद्धिजीवी वर्ग और छात्र समुदाय तिलमिला उठे। हालाँकि गवर्नमेंट प्रेस नोट में मुट्ठी भर छात्रों और तोड़-फोड़ करने वालों के बारे में समाचार परिसीमित कर दिया गया था। इस दुःखद परिस्थिति में पाकिस्तानी सेना ने धीरेन्द्रनाथ दत्ता को गोलियों से भून दिया था जिसके बारे में श्री कालीपाद विश्वास की कथा प्रासंगिक कही जा सकती है। समकालीन निकायों की कार्यवाहियों में प्रयोग तौर पर बंगला भाषा के साथ उर्दू की स्वीकृति के लिए 1947 में वकालत की थी, वह पाकिस्तान की असेम्बली के एक मतदाता सदस्य थे। इस घटना से एक रोमांचकारी दृश्य उपस्थित हो गया जिसने बंगला भाषा के लिए उर्दू-कट्टरमतानुयाइयों की अवमानना को बढ़ा-चढ़ा कर प्रकाशित किया। मतदाताओं ने असेम्बली हाल को चारों तरफ से घेर लिया और उर्दू भाषा की अवमानना करने वालों को मार देना चाहते थे। लियाकत अली ने स्थिति की गम्भीरता को समझते हुए श्री दत्ता को सीधे घर वापसी के लिए एअरपोर्ट भिजवा दिया। ढाका में जहाज से उतरने के बाद श्री दत्ता ने वहाँ पर जनता की भारी भीड़ देखी और मौत का तांडव नृत्य देखा। तथापि मूल सिद्धान्तों वाली कमेटी ने उर्दू को पाकिस्तान की राजभाषा स्वीकार किया।

किन्तु कालान्तर में उनके इस फैसले के चार दिनों बाद ही श्रोताओं के युवा स्नातकों की ओर से एक जबरदस्त विरोध उठ खड़ा हुआ। विरोध जोर पकड़ता गया, पड़तालें शुरू हो गई, धरने प्रदर्शन शुरू हो गए और 11 मार्च को न्यायाधीशों की अदालत के सामने ही पुलिस फायरिंग में एक प्रदर्शनकारी की मृत्यु हो गई। अपने शासकों के इस भेद-भाव पूर्ण रवैया से बंगलादेश की जनता की भावनाओं का पहला आवेग फूट पड़ा।

इस स्वीकृति ने देश को जलती आग में झोंक दिया और बंगालियों ने अपने उत्कट असन्तोष को समझा और इस परिणाम पर पहुँचे कि पश्चिमी शासकों ने उनके जन्म सिद्ध अधिकार से उन्हें वंचित रखा। असंतोष की आग धरातल के नीचे प्रज्वलित हो रही थी। 1940 ई. में बंगला भाषा को अरबी लिपि में लिखने की एक घिनौनी चाल चली गई। अरबी और फारसी शब्दों के साथ बंगला भाषा की शब्दावली को घाल-मेल करने की कवायद होने लगी। इसे दोनों के बीच की भौगोलिक दूरी को मिटाने के लिए और दोनों की संस्कृति को मिलाने की एक नाटकीय कोशिश होने लगी। बंगला भाषा को उर्दू के समकक्ष लाने के लिए शब्दावली में आवश्यक सुधार होने लगे। बंगलादेश के एक विद्वान और बुद्धिजीवी जनाब हसन मुरसीद ने शब्दावली में बदलाव का खुल कर विरोध किया। इससे पाकिस्तान के पूर्वी और पश्चिमी भागों में आग भड़क उठी। यहाँ तक कि अखिल पाकिस्तान ऐतिहासिक सम्मेलन के एक प्रवक्ता सुलेमान नकवी को बंगलाभाषा की अवमानना करने और उसे हिन्दुओं की भाषा कहने के लिए खुल्लम-खुल्ला प्रताड़ित किया गया।

फरवरी 21, 1952 ई. का ऐतिहासिक भाषा-आन्दोलन केवल एक लम्बे अरसे से दबाए गए असन्तोष का एक स्वाभाविक विस्फोट था। पराकाष्ठा को पहुँचे हुए आन्दोलन में कुल ग्यारह लोग अपने प्राणों से हाथ धो बैठे। ढाका में करफ्यू लगाया गया था और ढाका

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विश्वविद्यालय के लगभग 1000 छात्रों को निष्कासन आदेश दिए गए थे जिसके कारण 1500 छात्र और प्रभावित हुए थे। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि पाक-सेना के हमले में सर्वाधिक हताहतों की संख्या ढाका विश्वविद्यालय में थी। मिलीटरी शासकों की दृष्टि में ढाका विश्वविद्यालय ही एक मात्र आन्दोलन का केन्द्र-बिन्दु था। फरवरी 1952 में भाषा-आन्दोलन के अनेक प्रमुख नेता गवर्नमेंट की प्रतिहिंसा के डर से भूमिगत हो गए थे। प्रादेशिक असेंबली वाद-विवाद में चीफ मिनिस्टर जनाब नूरुल अमीन को सदस्यों की ओर से एक गम्भरी चुनौती का सामना करना पड़ा। भू.पू. शासकों की दृष्टि में भाषा-आन्दोलन सरकार को उखाड़ फेंकने का एक षडयंत्र था। सदस्यों ने दावा किया कि भाषा-आन्दोलन के मामले में पूर्वी बंगालियों का 99 प्रतिशत जनमत बंगला भाषा के लिए मतदान करेगा। मार्च 27 को पाकिस्तान के युवा-लीग ने 'युवा माँग दिवस' के रूप में देखा। पूर्वी बंगाल को पहले दौर में विजय हासिल हुई। जब राष्ट्रीय असेंबली के दौरान बंगाली और गैर बंगालियों के बीच तीखी नोक-झोंक के बाद एकं बंगाली सदस्य को अपनी मातृभाषा में बोलने की अनुमति मिल गई।

उक्त आन्दोलन ने इतना विराट रूप पकड़ लिया था कि 1952 ई. में ढाका के छात्र, अध्यापक और पत्रकारों ने मिलकर एक स्वर से टैगोर के मशहूर गान को खुली हवा में गुंजित किया:-

"My golden Bengal, I love you,/ your sky and air far ever play their flages let in my heart."

1969 में भाषा-आन्दोलन ने जल-संग्राम का रूप धारण कर लिया था। अन्ततोगत्वा टैगोर का उक्त गान बंगलादेश का 'राष्ट्रगान' बना।

1954 के चुनाव में पूर्वी बंगाल में मुस्लिम लीग का रवैया बंगलाभाषा के प्रति निकले परिणामों से लगाया जा सकता है। पूर्वी बंगाल के लोग यह महसूस करने लगे थे कि अपनी बंगाली विरासत को जीवन्त रखना कितना लाजिमी था। 1956 ई. में ढाका विश्वविद्यालय के कर्जन हॉल में मुस्लिम छात्रों ने प्रख्यात उपन्यासकार शरतचन्द्र चटर्जी के उपन्यास 'परिणीता' के प्रभावोत्पादक भाषान्तर का स्टेज पर अभिनय किया। बंगाली संस्कृति और अपनी मातृभाषा के प्रति अनुराग में पूर्वी बंगाल में बंगाली जीवन के हर पल को समेट कर रख दिया। सितंबर 1963 में ढाका में 'बंगलाभाषा और साहित्य' विषयक एक साप्ताहिक संगोष्ठी आयोजित की गई थी जिसमें लोगों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया और वह अपने ढंग का एक अभूतपूर्व कार्यक्रम था। तथापि अयूब खान ही ऐसे शासक थे जिन्होंने पूर्वी बंगाल के लोगों पर सफलता पूर्वक सविस्तार झाँसा-पट्टी का खेल-खेला। उन्होंने एक शिक्षा-आयोग स्थापित किया। उसने अपनी संस्तुति में कहा कि बंगला-भाषा और उर्दू दोनों ही भाषाएँ, स्टेट भाषाएँ होनी चाहिए और यह इस अनुच्छेद के साथ कि बिजनेस और शिक्षण कार्यों में पाकिस्तान के दो भागों के बीच संचार-व्यवस्था के लिए बंगला और उर्दू के सम्मिश्रण से धीरे-धीरे अँग्रेजी को हटा देना चाहिए। 'पाकिस्तान के लिए संकल्प लिया गया था जिससे अन्ततः उर्दू एक प्रभावी भाषा के रूप में मुख्य अवयव होगी।' (श्री मनजीत मित्रा' दि स्टेट्समैन' 9 मई 1971)

ढाका की बंगला अकादमी के तत्कालीन डाइरेक्टर डॉ. सईद अली एहसान जैसे बुद्धिजीवी द्वारा झाँसा-पट्टी पढ़ाने की बात आती रहती थी। अयूब सरकार ने उर्दू और बंगला के विकास को तेज करने के लिए कुछ ठोस कदम उठाए। सरकार और प्राइवेट प्रायोजकों ने सृजनात्मक लेखन कार्यों के लिए पुरस्कारों की घोषणा की। परन्तु ऐसा पाया गया कि 'बुनियादी लोकतांत्रिक साहित्य' तैयार करके उर्दू साहित्य के प्रति उत्कृष्ट देश प्रेमी ढूँढना एक श्रम-साध्य कार्य था। उर्दू के प्रति अगाध ज्ञान और भाषा के प्रति वास्तविक श्रद्धा होनी चाहिए। यहाँ तक कि अध्ययन और अनुसन्धान के इस पवित्र कार्य को ढाका की बंगला अकादमी के भीतर बंगली संस्कृति की मुख्य धारा से बंगाली मुसलमानों के स्वतंत्र त्याग की नीतियों को सरकार में निर्धारित मानदण्ड से नीचे गिरा दिया। यद्यपि उसके पास अन्य अनेक प्रकार

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College of Education Bantalab Jammu

के कार्यकलाप के अलावा, अपना स्वतंत्र अनुसंधान कार्य और प्राचीन एम.एस.एस. था। इसके अतिरिक्त उसके पास पर्याप्त मात्रा में लोक साहित्य के संरक्षण, प्रकाशन कार्य और अनुवाद कार्यों के लिए पृथक-पृथक विंग थे। अकादमी के पास बंगाली मुसलमान लेखकों और कवियों के लेखन-कार्य सम्बन्धी अनुसन्धान कार्य और संरक्षण सम्बन्धी कार्य भी था।

तथापि कालान्तर में अकादमी ने बंगाली हिन्दू कवि जीवनदास पर अनुसंधान कार्य के लिए छात्रवृत्ति की घोषणा की। किन्तु इसके बावजूद अकादमी ने अपने नाना अनुसन्धान कार्यों में महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर का कहीं उल्लेख नहीं किया। तथापि सांत्वना की बात तो यह है कि यह तो बंगला भाषा और साहित्य के विकास कार्यों के लिए केवल एक सरकारी स्थान कहा जा सकता है। किन्तु इस बात की आशा की जा सकती है कि भविष्य में अकादमी बंगला भाषा, साहित्य और संस्कृति के लिए कार्य अवश्य करेगी। दुःखद बात तो यह है कि पाकिस्तान की सेना ने असमय में ही विनाश सम्बन्धी कार्यों को प्रश्रय दिया।

बहरहाल टैगोर बंगाल के आधुनिक साहित्य-संस्कृति के प्रतीक थे जिन्होंने पूर्वी बंगाल में उत्तरोत्तर शासन-पद्धति से अतिशय संकट उठाया है। पश्चिमी पाकिस्तान के शासक और उनके सहकर्मी साथ ही साथ पूर्वी बंगाल के मुस्लिम संसर्गी आदि ने मिलकर टैगोर की रचनाओं से हिन्दुत्व तत्व रिसने की बात कही और भरपूर कोशिश भी की। इसीलिए बंगाली-संस्कृति को छिन्न-भिन्न करने की पूरी कोशिश की गई। 1905 ई. में भारत-पाकिस्तान के युद्ध के दौरान यह भी अथक प्रयास किया गया था कि विश्व कवि के प्रकाश-पुंज को हर प्रकार से धूमिल किया जाए। काजी नजरुल इस्लाम की रचनाओं को टैगोर की तुलना में बढ़-चढ़कर दिखाया गया। नजरुल ने जान-बूझ कर अपनी रचनाओं में उर्दू-फारसी और अरबी शब्दावली को अपनाया और टैगोर ने उसकी भर्त्सना की। टेलीविजन और रेडियो से प्रसारित होने वाले टैगोर के कार्यक्रमों पर प्रतिबंध लगा दिया गया।

किन्तु अभी तक कोई भी मिलीटरी शासन-पद्धति बंगला देश के बंगालियों के मानस-पाटल से टैगोर की लोकप्रियता को मिटा न सकी। बंगला देश को भली-भाँति पता है कि पश्चिमी पाकिस्तान के शासक टैगोर की अहमियत को कभी पसन्द नहीं करते थे। टैगोर की जन्मशताब्दी पर हतोत्साही और अन्यमनस्क दिखाई दिए। बंगलादेश में टैगोर की रचनाओं को धरोहर रूप में रखा गया और उनकी जन्मशताब्दी पर बैठकों, गोष्ठियों और सांस्कृतिक कार्यक्रमों को आयोजित किया गया। टैगोर की लोकप्रियता और उनके प्रति श्रद्धा-भाव 'आजाद' पत्रिका में बढ़-चढ़ कर प्रकाशित किया गया।

मातृभाषा के प्रयोग पर लगाए गए नाना प्रतिबंध असफल सिद्ध हुए। लोगों के भीतर अपनी मातृभाषा के प्रति लगाव बढ़ता ही गया। बंगला देश की सन्तान ने अपनी मातृभाषा को 'असली माता' कह कर पुकारा। 1969 ई. में भाषा-आन्दोलन को जबरदस्त मान्यता उपलब्ध हुई। फरवरी 18, 1969 ई. को मिलीटरी फायरिंग में राजशाही विश्वविद्यालय के एक युवा प्रोफेसर डॉ. समयुज्जोहा विश्वविद्यालय के फाटक पर अपने प्राणों से हाथ धो बैठे। ढाका विश्वविद्यालय में भी हिंसा का तांडव नृत्य शुरू हो गया। छात्रों ने सरकारी आदेशों की अवहेलना की। बंगलाभाषा को राजभाषा के रूप में मान्यता प्रदान करने की पुरजोर माँग रखी जिसके लिए छात्रों को गोलियाँ खानी पड़ी। लेकिन बंगलादेश के जन-समूह के आगे मिलीटरी की गोलियाँ काम न कर सकीं। बंगला-भाषा को मान्यता दिए जाने के आन्दोलन ने पश्चिमी पाकिस्तान के शासकों की आँखें खोल कर रख दीं। पश्चिमी पाकिस्तान के पूरे राष्ट्र में दमनकारी नीतियाँ जारी रहीं। 1971 ई. में उनके क्रोध का ज्वालामुखी फूट पड़ा। बंगलादेश के भीतर शासकों ने भी राजद्रोह कर दिया।

बंगलादेश के एक प्रख्यात् कवि दाऊद हैदर ने महाकवि टैगोर की महत्ता पर एक कविता लिखी:

"Rabindranath, We are here down-trodden, humiliated, tortured/ In the proces-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

sion for you/ The people lay down their lives, and so do I, and yet for what?/ Vainly do I tire myself out calling you most sincerely ./ But you do not respond/ Yet I can not go away neglecting you/ Ahead of me appears an abyss!/ We want you now, Rabinadranath, / Come, and see/ we are terribly unhappy."

उपर्युक्त शायर की आर्तवाणी महाकवि रबीन्द्रनाथ टैगोर का आह्वान करती है, और दुःख की घड़ी में हाथ बँटाने का निवेदन करती है। बंगलादेश का जन-समूह स्वाधीनता के आकाश में चरमाह्लाद की उपलब्धि करेगा और महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर को भी अपनी स्वाधीनता के माध्यम से उन्हें प्राप्त कर लेगा।

संपर्क : कोठी नं. 3/16/3 ए.जी. कॉलेज रोड, पड़रा, रीवा 486001, मो. 09713834483

भगवान बुद्ध के प्रति

आज सभ्यता के वैज्ञानिक जड़ विकास पर
गर्वित विश्व नष्ट होने की ओर अग्रसर
स्पष्ट देख रहा; सुख के लिए खिलौने जैसे
बने हुए वैज्ञानिक साधन; केवल पैसे
आज लक्ष्य में हैं मानव के; स्थल-जल-अम्बर
रेल-तार-बिजली-जहाज नभयानों से भर
दर्प कर रहे हैं मानव, वर्ग से वर्गगण,
भिड़े राष्ट्र से राष्ट्र, स्वार्थ से स्वार्थ विचक्षण।
हँसते हैं जड़वादग्रस्त, प्रेत ज्यों परस्पर,
विकृत-नयन मुख, कहते हुए, अतीत भयंकर
था मानव के लिए, पतित था वहाँ विश्वमन,
अपटु अशिक्षित वन्य हमारे रहे बंधुगण;
नहीं वहाँ था कहीं आज का मुक्त प्राण यह,
तर्कसिद्ध है, स्वप्न एक है विनिर्वाण यह।
वहाँ बिना कुछ कहे, सत्य-वाणी के मंदिर,
जैसे उतरे थे तुम, उतर रहे हो फिर फिर
मानव के मन में,- जैसे जीवन में निश्चित
विमुख भोग से, राजकुँवर, त्यागकर सर्वस्थित
एकमात्र सत्य के लिए, रूढ़ि से विमुख, रत
कठिन तपस्या में, पहुँचे लक्ष्य को, तथागत!
फूटी ज्योति विश्व में, मानव हुए सम्मिलित,
धीरे-धीरे हुए विरोधी भाव तिरोहित;
भिन्न रूप से भिन्न-भिन्न धर्मों में संचित
हुए भाव, मानव न रहे करुणा से वंचित;
फूटे शत-शत उत्स सहज मानवता-जल के
यहाँ वहाँ पृथ्वी के सब देशों में छलके;
छल के, बल के पंकिल भौतिक रूप अदर्शित
हुए तुम्हीं से, हुई तुम्हीं से ज्योति प्रदर्शित।

–महाकवि 'निराला'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सुरेन्द्र 'अंचल'

'मृत्यु- पश्चात्' आत्मा का अस्तित्व

'आत्मा न जायते, म्रियते वा कदाचित्।'

शरीर के मरने के बाद भी आत्मा का अस्तित्व बना रहता है, यह भारतीय दर्शन का प्रारम्भिक सत्य रहा है। इसकी पुष्टि अनेकों पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने भी निसंकोच की है यथा-पालटेराजेस्ट फेनामेना, आहीटरी हेलसिनेशा, डॉ. डेनियर विवर, डैण्डाल, केल्विन, डॉ. गेटस् आदि।

पृथ्वी सकल ब्रह्माण्ड का एक रजकण मात्र है जो नैत्रगम्य है। इस पार्थिवलोक से परे सूक्ष्मजगत में अदृश्य, प्राणलोक, मनोमयलोक, देवलोक, चैतन्यलोक, सत्यलोक (ब्रह्म लोक,) असुरलोक आदि अनेकानेक लोक लोकान्तरों का अस्तित्व है। यह समस्त जानकारी मानव के वश की सहज सम्भव नहीं क्योंकि मानव पूर्णरूप से सचेतन नहीं है। मानव चेतना आज विकास की जिस अवस्था में है, वह अर्द्धचेतना या आंशिक चेतना मात्र है।

इन बातों को प्राय: लोक काल्पनिक कह देते हैं- किन्तु आज अनेक वैज्ञानिक इस बात को निसंकोच स्वीकार कर रहे हैं कि पृथ्वी से इत्तर भी सैकड़ों लोक हैं वैज्ञानिकों ने खोज कर गिनाए हैं कि अकेली हमारी आकाश गंगा में लगभग 1000 000 000 00 (एक ग्यारह शून्य) नक्षत्र हैं। जिनमें से जीवों के निवास योग्य 25 000 000 000 नक्षत्र हैं। इटली के ब्रूनो ने भी विश्वास व्यक्त किया है कि जीवन के अस्तित्व वाले असंख्य ग्रह हैं। कतिपय पाश्चात्य वैज्ञानिक यह भी मानने लगे हैं पृथ्वी से दूर अनेकों पिण्डों में जीव की कर्मगति के अनुसार पुनर्जन्म होता है, तो फिर प्राणलोक, मनोलोक आदि भी क्यों नहीं हो सकते हैं?

यह पार्थिव-शरीर की मृत्यु के बाद, जीवन निरन्तर है। कभी अप्रत्याशित रूप से ऐसी बातें सामने आ जाती हैं तो कभी अदृश्य रूप से अनुभूति करा देती हैं।

इस संदर्भ अमेरिकन वैज्ञानिकों द्वारा किया गया सामूहिक रूप से एक प्रयोग बहुत चर्चित रहा-

'एक विशेष प्रकार का, पारदर्शी, पिर्वात कक्ष (चेम्बर) बताया गया। उसमें जीवित चूहे को रखा गया। निर्वात, होने के कारण चूहा मर गया तो तत्पर सक्रिय केमरों में जो चित्र आए, उनमें अन्तरिक्ष में उड़ते हुए आणविक चूहे की सूक्ष्म छाया प्रतिकृति स्पष्ट दिखाई

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

दी।

यह तथ्य आज सभी स्वीकार करने लगे हैं कि शरीर के बिना भी आत्मा का अस्तित्व रहता है। आए दिन अनेक उदाहरण सामने आते हैं। अदृश्य आत्माओं द्वारा आत्मियजनों को वांछित परामर्श व सूचनाएँ दी जाती रहीं, दी जा रही हैं।

आत्मा का परमोद्देश्य अन्ततोगत्वा परमात्मा की प्राप्ति है। यह कार्य किसी एक जन्म में सम्भव नहीं है अत: अनेक पुनर्जन्म लेते हुए इस परमात्मलोक की प्राप्ति हेतु प्रयासरत रहना पड़ता है।

यह सत्य है कि मृत्युपरान्त पंचतत्वों से बना यह अन्नमयकोष तो दहन या दफन द्वारा नष्ट कर दिया जाता है किन्तु हमारे कर्म उसके साथ न तो जलते हैं, न दफन होते हैं। जीवात्मा के साथ ही में समस्त कर्म तत्व संलग्न रहते हैं। नए जन्म में कुछ अन्य कर्मतत्वों में और वृद्धि हो जाती है परमात्मतत्व में विलीन होने तक यह पुनर्जन्मीय-क्रम निरन्तर चलता रहता है।

कबीर ने भी इस मंत्र का समर्थन अपने ढंग से किया है-

'जेहि मरने से जग डरै, मेरे मन आनंद
कब मरिहौ, कब पाइहौ, पूरन परमानंद।'

सिद्ध संत श्री अरविन्द ने भी कहा है-

'जीवात्मा अजन्मा है- जन्म लेता है न मृत्यु। वह एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाया करता है।'

यही बात भारतीय दार्शनिकों ने अनेक विधियों से लिखी हैं-

अणोरणीयाम महन्तोमहियान।

अर्थ- आत्मा सूक्ष्म से सूक्ष्म तथा विराट से इतना विराट है कि उसमें समग्र सृष्टि सीमित हो जाय।

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद् में स्पष्ट किया गया है कि- परमेश्वर का उपासकमर कर अग्निलोक में, फिर वायुलोक में, फिर सूर्यलोक में गमन करता हुआ वरुणलोक, से ब्रह्मलोक को पहुँचता है। ब्रह्मलोक से आगे एक विरजा नाम की नदी पार करनी पड़ती है- नदी के उस पार एक 'इह्म' नामक वृक्ष है जो पृथ्वी का ही स्वरूप है- आगे...।'

मार्च 1958 की नवनीत में एक घटना पक्षी थी 'मेनचेस्टर' में एक अंग्रेज ने एक पुस्तक लिखी, उसमें तिब्बत की संस्कृति, भौगोलिक संरचना एवं बौद्धधर्म के सिद्धान्तों व दलाईलामाओं सम्बन्धित सांगोपांग वर्णन था। जब कि वह व्यक्ति कभी मेनचेस्टर से बाहर निकला ही नहीं। उसमें अंत में लिखा था मैंने दो शरीर पहले बदले हैं, परकाया प्रवेश का यह तीसरी घटना है। अपने गुरु दलाईलामा के आदेश से मैं यह पुस्तक लिखने यहाँ आया हूँ। इसे सम्पूर्ण लिख चुकने के बाद यह शरीर छोड़ पुन: ल्यासा (तिब्बत) लौट जाऊँगा।

मार्च 1958 की नवनीत में एक घटना पक्षी थी 'मेनचेस्टर' में एक अंग्रेज ने एक पुस्तक लिखी, उसमें तिब्बत की संस्कृति, भौगोलिक संरचना एवं बौद्धधर्म के सिद्धान्तों व दलाईलामाओं सम्बन्धित सांगोपांग वर्णन था। जब कि वह व्यक्ति कभी मेनचेस्टर से बाहर निकला ही नहीं। उसमें अंत में लिखा था मैंने दो शरीर पहले बदले हैं, परकाया प्रवेश का यह तीसरी घटना है। अपने गुरु दलाईलामा के आदेश से मैं यह पुस्तक लिखने यहाँ आया हूँ। इसे सम्पूर्ण लिख चुकने के बाद यह शरीर छोड़ पुन: ल्यासा (तिब्बत) लौट जाऊँगा।

और सचमुच पुस्तक लिख कर प्रकाशक को देते ही उसने शरीर छोड़ दिया। उस अंग्रेज लेखक ने अपना तिब्बती नाम लिवसंग लिखा है जबकि उस अंग्रेज का नाम ग्रियसन था। पुस्तक का नाम है- 'द वर्ड आई' जिसके अनेक संस्करण अनेक भाषाओं में छपे हैं।

योरोप में एक ऐसे ही लेखक 'फ्रेडरिक स्पेंसर' ओलीवर ने अपनी पुस्तक एन-अर्थ-उबेलर्स रिटर्न में अपने पिछले बत्तीस जन्मों का प्रामाणिक विवरण लिखा।

'सर ओलीवर लाज' विश्वविख्यात थियोसोफिर थे। इनकी गणना थियोसोफी के स्थापक वेग दार्शनिकों में की जाती है। उन्होंने अपनी पुस्तक में लिखा है कि-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मृत और जीवित होने का भेद स्थूलजगत तक ही सीमित है। सूक्ष्म जगत में सभी जीवित है। जीवित और मृतकों के मध्य में आदान प्रदान भी सम्भव है।

एक घटना 1980 की मैंने स्वयं ने देखी-सुनी। भीम (राजसमंद) की सीनियर हायर सेकेण्डरी स्कूल में अध्यापक था। एक पुलिसकर्मी मेरी कक्षा में आया। वह एक छात्र रामलाल रेगर को थाने में ले जाना चाहता था। मेरी जिज्ञासा जागी। पूछा तो ज्ञात हुआ कि इस बालक ने चौदह वर्षों से एक हत्या की अनसुलझी गुत्थी को सुलझाने का दावा किया है। मृतक प्रेमसिंह ठेकेदार था जो वह स्वयं ही था। उसे मारने वाले दो उसके ही तब के साथी बहादुरसिंह और कल्याणसिंह थे, जो रोज भीम से साथ सायं को प्राय: शराब पीकर तालाब की पाल से होकर गाँव जाया करते थे। विचित्र घटना थी। लेखक होने के कारण मुझे रुचि हुई। मैं भी कुछ देर बाद सच्चाई जानने हेतु थाने पर जा पहुँचा। थाने में आठ आदमी एक लाइन में खड़े थे रामलाल ने इनके सामने जाते ही लपक कर बूढ़े की गरदन पकड़ ली- यही है बहादुरा। क्यों रे तूने ही तो कुल्हाड़ी से मारा था मुझे। मैं ही था प्रेमसिंह। कल्लासिंह कहाँ है?

और बहादुरसिंह ने सच उगल दिया। रहस्य से पर्दा उठ गया। उसी बालक ने एक पेड़ पर ही टँगी कुल्हाड़ी भी बरामद करवाई थी।

पुनर्जन्म एक ईश्वरीय व्यवस्था जो पूर्णरूप से कर्म फल पर आधारित है।

ये सब बातें कैसे झुठलाई जा सकती हैं। ऐसी अनेक घटनाएँ ब्यावर के परा मनोवैज्ञानिक डॉ. कीर्तिस्वरूप रावत ने भी अपनी पुस्तक में संग्रहित की हैं। अत: यह सत्य है कि-

'आत्मा न जायते, म्रियते वा कदाचित।'

संपर्क : 2/152 साकेत नगर, ब्यावर (अजमेर)

आत्मोपमस्तु भूतेषु यो वै भवति मानवः।
न्यस्तदण्डो जितक्रोधः प्रेत्येह लभते सुखम्।। शान्ति ६६/३६
जो मनुष्य सभी प्राणियों के प्रति अपने समान ही भाव रखता है। दण्ड को छोड़ देता है और क्रोध को वश में कर लेता है। वह इस लोक में और परलोक में सुखी होता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अवनिजेश अवस्थी

अटल जी का आत्म संघर्ष

अटल बिहारी वाजपेयी भारतीय राजनीति की वे शख्सियत हैं जिनकी वक्तव्य कला एवं शैली के कायल उनके प्रतिपक्षी भी रहे हैं। आधी शताब्दी तक वे समग्र भारत में सदैव चर्चित, विवादित, कभी प्रशंसा तो कभी तीव्र आलोचना का केन्द्र रहे हैं। भारतीय राजनीति के 'इंदिरा युग' में नारा हुआ करता था- 'अटल बिहारी बोल रहा है, इन्दिरा शासन डोल रहा है'। समूचे प्रतिपक्ष का सर्वाधिक तेजस्वी, ओजपूर्ण और मुखर चेहरा वाजपेयी जी का ही हुआ करता था- संसद के भीतर और बाहर भी वाजपेयी जी के चुंबकीय व्यक्तित्व के मूल में उनकी प्रत्युत्पन्नमति एवं कवि हृदय का सबसे बड़ा योगदान रहा है- उन्हें जरा सा भी जानने वाले यह बात अच्छी तरह से जानते हैं। उनका काव्य-विवेक और कवि-हृदय ही उनकी वह विशेपता है जो उन्हें बाकी राजनेताओं से उन्हें एक अलग पाँत में खड़ा कर देती है- राजनीति की उठा-पटक, उखाड़-पछाड़, दाँव-पेंच के मध्य शब्द-साधना कितनी दुष्कर हो सकती है- इसका अनुमान लगाना मुश्किल नहीं है, लेकिन राजनीति की दुनिया में ऐसे ही कतिपय हताशा-निराशा, पराजय या षड्यंत्रों के शिकार होने के क्षणों में जिस व्यक्ति के पास कविता की दुनिया में जाने की भी रचनात्मक-सामर्थ्य हो- वह व्यक्ति हताशा में डूबता नहीं, संघर्ष से बाहर निकलता है, जाहिर है कि जो संघर्ष राजनीति में सबके मध्य, सबके सामने होता है, कवि व्यक्तित्व में उससे अधिक उसके भीतर हृदय में होता है, भीतर के इस संघर्ष को जब शाब्दिक अभिव्यक्ति मिलती हैं तो कविता का जन्म होता है, वाजपेयी जी का सम्पूर्ण काव्य-जगत उस संघर्ष का जीता-जागता साक्ष्य प्रस्तुत करता है। अटल जी की कविताओं का केन्द्रीय भाव 'न दैन्यं न पलायनम्' है, अनवरत संघर्ष और संकल्पशीलता जो उनके राजनैतिक जीवन में परिलक्षित होती है, वह उनकी कविताओं में भी साफ-साफ दिखायी देती है,

टूटे हुए तारों से फूटे वासन्ती स्वर,
पत्थर की छाती में उग आया नव अंकुर,
झरे सब पीले पात

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कोयल की कुहक रात
प्राची में अरुणिमा की रेख देख पाता हूँ।
गीत नया गाता हूँ।
टूटे हुए सपनों की सुने कौन सिसकी?
अनतर को चीर व्यथा पलकों पर ठिठकी।
हार नहीं मानूँगा
रार नई ठानूँगा
काल के कपाल पर
लिखता-मिटाता हूँ।

अटल जी की यह कविता उनकी प्रिय एवं प्रसिद्ध ही नहीं है यह उनके व्यक्तित्व की सही मायनों में सच्ची पहचान भी कराती है। राजनैतिक जीवन में बार-बार उतार-चढ़ाव आने के बावजूद वे अपने संगठन के केन्द्रीय पुरुष ही बने रहे, वे जब तक सक्रिय राजनीति में रहे, शीर्ष पर रहे, उनकी लोकप्रियता के आस-पास भी कोई नहीं पहुँच पाया। यह सच है कि देश की राजनीति और उसकी कुत्सित सच्चाइयों से वे अतीव व्याकुल होते हैं, उनकी यह व्याकुलता जितनी उनके भाषणों, संसदीय वक्तव्यों में दिखाई देती है, उससे कहीं ज्यादा धारदार रूप में उनकी कविताओं में दिखायी देती है,

मुक्त गगन में,
मुक्त साँस लेना है मुश्किल,
मुक्त धरा पर
मुक्त गीत गाना है मुश्किल।
मुश्किल है अब स्वाभिमान
से दो दिन जीना
सब कुछ सहना
आँखों देखी बात न कहना।
हर छाती पर भय का
विषधर फन फैलाकर
मार कुंडली बैठा
गला दबाकर।
घाव अधिक रिसता जाता है।
फंदा कसता ही जाता है।

कविता की इन पंक्तियों में कवि की बेचैनी को समझना मुश्किल नहीं है। देश में सत्तर के दशक से राजनीति में जो गिरावट आई और जिस प्रकार से समूची राजनीति राष्ट्र-हित से फिसल कर मात्र सत्ता प्राप्त करने और उससे चिपके रहने तक में ही सिमट गई, अटल जैसे राष्ट्र-निष्ठ राजनेता का दुखी होना स्वाभाविक ही है। स्वाधीनता-आंदोलन के समय स्वाधीनता सेनानियों एवं समूचे देश की आँखों में भविष्य के जो उज्जवल स्वप्न थे वे स्वाधीनता के पहले दशक से ही दरकने आरम्भ हो गए थे। स्वाधीनता संग्राम में अपनी और अपने परिवार की चिंता किए बिना जिन्होंने अपना सर्वस्व देश को स्वाधीन कराने में लगा दिया था, उन्हें अपने ही स्वतंत्र देश में जिस तरह की स्थितियों से रूबरू होना पड़ रहा था, वे निश्चय ही बड़ी त्रासकारी थीं। स्वाधीनता के तत्काल बाद ही जिस प्रकार से श्यामाप्रसाद मुखर्जी को कश्मीर के लिए आत्म-बलिदान करना पड़ा था, वह एकदम स्तब्ध कर देने वाला था। चीन के आक्रमण और उसमें मिली बड़ी ही अपमानजनक पराजय की परिस्थितियों ने अटल जी के राजनैतिक-व्यक्तित्व को ऐसी धार प्रदान कर दी

स्वाधीनता संग्राम में अपनी और अपने परिवार की चिंता किए बिना जिन्होंने अपना सर्वस्व देश को स्वाधीन कराने में लगा दिया था, उन्हें अपने ही स्वतंत्र देश में जिस तरह की स्थितियों से रूबरू होना पड़ रहा था, वे निश्चय ही बड़ी त्रासकारी थीं। स्वाधीनता के तत्काल बाद ही जिस प्रकार से श्यामाप्रसाद मुखर्जी को कश्मीर के लिए आत्म-बलिदान करना पड़ा था, वह एकदम स्तब्ध कर देने वाला था। चीन के आक्रमण और उसमें मिली बड़ी ही अपमानजनक पराजय की परिस्थितियों ने अटल जी के राजनैतिक-व्यक्तित्व को ऐसी धार प्रदान कर दी थी जो फिर उसके पश्चात निरन्तर ही और धारदार बनता गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के एक निष्ठावान स्वयं सेवक के रूप में अटल जी को राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करने के लिए भारतीय जनसंघ में भेजा अवश्य गया था, लेकिन उनका राजनीति में जाना उनके कवि कर्म में कभी बाधक नहीं बना।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थी जो फिर उसके पश्चात निरन्तर ही और धारदार बनता गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के एक निष्ठावान स्वयं सेवक के रूप में अटल जी को राजनैतिक क्षेत्र में कार्य करने के लिए भारतीय जनसंघ में भेजा अवश्य गया था, लेकिन उनका राजनीति में जाना उनके कवि कर्म में कभी बाधक नहीं बना। यहाँ तक कि प्रधानमंत्री के रूप में भी उन्होंने अपनी सुरक्षा के लिए दिल्ली पुलिस द्वारा दिए गए विवरण में अपने परिचय में राजनेता एवं कवि ही लिखा। स्वाधीनता के पश्चात् देश जब आशा-निराशा के भँवर में झूल रहा था, अटल जी का विश्वासी मन और संघर्षशील व्यक्तित्व कविता के माध्यम से भरोसा दिला रहा था,

आजादी की लड़ाई में,
जो बंधु फाँसी के तख्ते पर चढ़े
या काले पानी की काल-कोठरियों में
जीवन-भर सड़े।
उनसे प्रेरणा लेकर
जिन्होंने सभी यातनाओं को
हँसते-हँसते झेला है।
शरीर को स्वस्थ
चित्त को प्रफुल्ल
और विवेक को जागृत
रखकर ही हम
अनिश्चित भविष्य का
विश्वासपूर्वक सामना कर सकेंगे।

अटल जी की कविताओं में संघर्ष के स्वर केवल राजनैतिक ही हों- ऐसा नहीं है, बल्कि यह संघर्ष जीवन के हर क्षेत्र में है-

जीवन की डोर छोर छूने को मचली,
जाड़े की धूप स्वर्ण-कलशों से फिसली,
अंतर की अमराई
सोई पड़ी शहनाई,
एक दबे दर्द- सी सहसा ही जगती।
नई गाँठ लगती।

कवि जब यह लिखने को विवश हो जाता है तो, प्रसिद्धि, सत्ता, पद के बावजूद उसके भीतर के एकाकीपन को समझना चाहिए-

सच्चाई यह है कि
केवल ऊँचाई ही काफी नहीं होती,
सबसे अलग-थलग
परिवश से पृथक, अपनों से कटा-बँटा
शून्य में अकेला खड़ा होना,
पहाड़ की महानता नहीं,
मजबूरी है।
ऊँचाई और गहराई में
आकाश-पाताल की दूरी है
जो जितना ऊँचा
उतना ही एकाकी होता है,
हर भार को स्वयं ही ढोता है,
चेहरे पर मुस्कानें चिपका,
मन ही मन रोता है।

जो लोग अटल जी की कविताओं में पारिस्थितिक तात्कालिकता और केवल राजनैतिक स्वर देखते हैं उन्हें इन कविताओं पर भी एक नजर डालनी चाहिए। अटल जी का भारतीय जनसंघ तो राजनैतिक क्षेत्र में एकदम अकेला था ही, उनका कवि-मन स्वयं को भी बहुधा एकाकी क्षणों में वैयक्तिक रूप में भी अकेला पाता है। ऐसे क्षणों में रची गई कविताएँ उनके व्यक्तित्व के इस पक्ष का उद्घाटन करती दिखायी देती हैं। एक ऐसी राजनैतिक शख्सियत जो राजनीति में सत्ता के शिखर तक पहुँचा हो, वह भीतर से कितना अकेला भी हो सकता है, इसका खुलासा करती अटल जी की कविताओं पर अलग तरह से विचार करने की आवश्यकता है। अटल जी जब यह कविता लिखते हैं तो उनके मन की तड़पन को समझना चाहिए,

'जीवन की ढलने लगी साँझ
उमर घट गई
डगर कट गई
जीवन की ढलने लगी साँझ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बदले हैं अर्थ
शब्द हुए व्यर्थ
शांति बिना खुशियाँ हैं बाँझ।'

अटल जी की कविताओं में एक और बात जो सबसे महत्वपूर्ण दिखायी देती है वह है उनकी व्यंग्य-क्षमता। उनकी कविताओं में राजनैतिक विसंगतियों-विद्रूपताओं पर बार-बार व्यंग्योक्तियाँ दिखायी देती हैं, लेकिन ध्यान देने की बात यह है कि वे केवल दूसरों पर ही नहीं, स्वयं पर भी उतना ही बेलाग होकर व्यंग्य करते हैं-

'पैंट और बुश-शर्ट से,
जनता हो गई क्रुद्ध,
धोती कुर्ता छोड़कर
पहने वस्त्र अशुद्ध,
पहने वस्त्र अशुद्ध,
मंत्रिपद की यह खूबी,
संस्कृति की नैया
सागर के जल में डूबी,
कह कैदी कविराय,
लगाओ सिर्फ लँगोटी,
पैरों मध्य खड़ाऊँ,
सर पर मोटी चोटी

आपातकाल को अनुशासन पर्व बताने वाले विनोबा भावे जी अटल जी के व्यंग्य से नहीं बच सके-

अनुशासन का पर्व है
बाबा का उपदेश,
हवालात की हवा भी
देती यह संदेश,
देती यह संदेश
राज डंडे से चलता,
जज हज करने जाएँ,
रोज कानून बदलता,
कह कैदी कविराय
शोर है अनुशासन का,
लेकिन जोर दिखायी
देता दु:शासन का।

किन्तु यही अटल जी विनोबा जी के विषय में धन्य तू विनोबा भी लिखते हैं-

जान की लगाय बाजी, गाय की बचाई जान,
धन्य तू विनोबा। तेरी कीरति अमर है।
दूध बलकारी, जाको पूत हलधारी होय,
सिंदरी लजात मल-मूत्र उर्वर है।
घास-पात खात दीन वचन उचारे जात,
मरि के छू काम देत चाय जो सुघर है।
बाबा ने बचाय लीन्ही दिल्ली दहलाय दीन्हीं,
बिना लाव लस्कर समर कीन्हों सर है।'

यह है अटल जी की कविता जिसमें वे वैयक्तिक या राजनैतिक कारणों से किसी पर कटाक्ष नहीं करते, दूसरों पर करते हैं तो स्वयं अपने पर भी करते हैं, कविता में इस वैयक्तिक राग-द्वेष से वही ऊपर उठ सकता है जो अकेले में स्वयं से बात करता है, जो इस बहिर्मुखी राजनीति में भी अंतत: अंतर्मुखी हो, जो जितना बोलता हो, उससे कहीं अधिक मौन की साधना भी करता हो, यही कारण है कि उनकी कविता में कोई भी ऐसी कटुक्ति ढूँढ कर नहीं ला सकता जो किसी के हृदय को ठेस पहुँचती हो। वे अपनी कविताओं में व्यंग्य करते हैं, कटाक्ष भी खूब करते हैं लेकिन कवि-कर्म की मर्यादा से कभी नहीं चूकते, 'बिलो द बेल्ट' वार नहीं करते। उनके जीवन में सैकड़ों-सहस्त्रों ऐसे अवसर आए जब उन पर व्यक्तिगत वार भी किए गए, लेकिन उन वारों का जवाब देने के लिए उन्होंने अपनी कविता को कभी माध्यम नहीं बनाया, वे आत्म संघर्ष करते रहे, आत्म मंथन करते रहे, आत्मालोचन भी किया इस मंथन का विष उन्होंने भीतर रखा और अमृत को कविता के पात्र में ढालकर सबके लिए सामने रख दिया।

अपने राजनैतिक जीवन में अटल जी अधिकांश समय प्रतिपक्ष में ही रहे, चुनाव जीते तो चुनाव हारे भी, फिर सत्ता के शिखर तक भी पहुँचे, इतने लंबे राजनैतिक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

जीवन में दंभ और मद का होना भी स्वाभाविक है, अटल जी इस सत्य को जानते हैं, इस सत्य के सच में परिवर्तित हो, जाने की आशंका में ही वे लिखते हैं,

मेरे प्रभु
मुझे इतनी ऊँचाई कभी मत देना
गैरों को गले न लगा सकूँ,
इतनी रुसवाई कभी मत देना

वाजपेयी जी की कविताओं में जो बार-बार अकेलापन, चुप्पी और मौन आता है वह उनके उस आत्म-संघर्ष को ही व्यक्त करता है जिससे वे निरन्तर जूझते लगते हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि अपने उस आत्म संघर्ष को, अन्तर्द्वन्द्व को और उहा-पोह को जिसे वे अपने भाषणों और वक्तव्यों में नहीं कह पाते उस भीतरी द्वन्द्व को, अपनी अव्यक्त बेचैनी को व्यक्त करने के लिए वे कविता की राह चुनते हैं,

बिखरे नीड़
विहँसी चीड़
आँसू हैं न मुस्कानें
हिमानी झील के तट पर अकेला गुनगुनाता हूँ।
न मैं चुप हूँ, न गाता हूँ।

अटल जी ने आत्म संघर्ष का पूरा सत्य उनकी एक कविता में जाने-अनजाने कह दिया है। वह कविता सचमुच अटल जी के भीतरी दर्द और पीड़ा को जानने के लिए अंत:साक्ष्य प्रस्तुत कराती है और छोटी सी कविता सब कुछ कह जाती है,

हर पचीस दिसंबर को
जेने की एक नई सीढ़ी चढ़ता हूँ,
नए मोड़ पर
औरों से कम, स्वयं से ज्यादा लड़ता हूँ।
मैं भीड़ को चुप करा देता हूँ,
मगर अपने को जवाब नहीं दे पाता,
मेरा मन मुझे अपनी ही अदालत में खड़ा कर
जब जिरह करता है
मेरा हलफनामा मेरे ही खिलाफ पेश करता है,
तो मैं मुकदमा हो जाता हूँ,
अपनी ही नजर में गुनहगार बन जाता हूँ।

संपर्क : 41, जगदम्बा अपार्टमेन्टस, सेक्टर-13,
रोहिणी, दिल्ली-110085 मो. 9810364096

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सुधेश

कर्म के बीज

हमारे कर्म
अदृश्य बीज हैं
जीवन मिट्टी में मिल
कभी न कभी
पौधा बनेंगे
एक दिन हमारे सामने
खड़े हो जाएँगे
तन कर पेड़ से
उन में लगेंगे फूल और फल।

तितलियाँ

उड़ रही हैं तितलियाँ
ज्यों मेघिल गगन में बिजलियाँ
ज्यों उर्मियों पर उषा की रश्मियाँ
क्यों उड़ रही हैं तितलियाँ
इस पात से उस फूल तक
क्या ढूँढती हैं तितलियाँ
मधु का कोश
कलिका की स्फुटन
फूल की मुस्कान?
जब तक उड़ रही हैं है तितलियाँ
धरा पर रंगीनियाँ
चमकती आँख में शीतल बिजलियाँ।

साँस लेते पेड़

साँस लेते पेड़
तभी उनके निकट

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मिलती ऑक्सीजन
हरे पत्ते हिल
बुलाते इशारे से
पास आओ
मेरी छाँह में बैठो
बाहर धूप है
पर सभ्य नागरिक
काटते हैं उन्हें
अपने पाँव पर कुल्हाड़ी मारते
कृतघ्न मानव किस के काम आया।

शब्द

कुछ शब्द
जैसे प्यार करुणा क्षमा
शब्द नहीं
हैं यंत्र
यंत्र नहीं
हैं ऋचाएँ
जिन्हें आँखें बोलती हैं
वाणी छूती प्राण को।
ये शब्द
पेड़ की छाया
थके हारे की शरण।

सोचते–सोचते

सोचते सोचते
मैंने दिमाग की खिड़की खोल,
बुद्धि से पूछा
कितना सोचा जाए
उत्तर आया
अधिक सोचने से काम रुकता है
मगर मन के कोने से
नए विचार ने फरमाया
सोच समझ कर ही
कोई काम करो।
एक नये विचार ने दस्तक दी
पाँव ने उठने का कर्म किया
हाथ ने द्वार खोलने का
सबका मतलब था कि
कुछ कर्म करो
वरना लेटे लेटे या बैठे बैठे
शब्दों की करते हुए जुगाली
उम्र गुजर जाएगी
बाद में सोचना कि
क्या सोचा था
क्या हो गया।

प्रेम

प्रेम का अंकुर
उगता है
मन की उर्वरा भूमि में
देखते देखते
उसके पौधे पर खिलते हैं
समर्पण त्याग के रंगीन फूल
क्या आप की क्यारी में खिले
कुछ ऐसे फूल?
प्रेम पढ़ाई नहीं
परीक्षा है जीवन की
जिसके प्रश्न पत्र
अलिखित अमुद्रित
जिसके उत्तर की भाषा
मौन कर्म।

संपर्क : 314 सरल अपार्टमेंन्ट्स,
द्वारिका -सेक्टर 10, दिल्ली- 110075

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

राजेन्द्र पाराशर

हर सुबह

हर सुबह
खड़ा पाता मैं उसे
जामुन के पेड़ के सहारे,
इंडिया गेट के पास,
पिंजर बदन पर
लटकती लीरों में,
धँसी आँखों से
निहारते
क्षितिज को
मानो
छुपा हो वहाँ
बुझावा
उसके जीवन का,
या,
व्यस्त हो वो
सुलझाने में
अपने उलझे
कर्म-सूत्रों को,
या,
सोचता हो गहराई से
किसी भूली-बिसरी आप-बीती को।
इस तरह
एकाग्रह खड़े रह कर कुछ देर
चला जाता वो
धीरे धीरे
मानो
खोज लिया हो उसने
सत्य जीवन का,
जान लिया हो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भ्रम प्यार का,
या
भाँप लिया हो
भेद
भगवान का।

कमर झुक गई

कमर झुक गई
ऊँचा सुनने लगा
लाठी का सहारा लिया।
बच्चे, जवान भी
बाला कहने और
पैर छूने लग गए।
बुढ़ापे ने कुछ ऐसे मंजर दिखाए।
पर
मन भटकने लगा है
अकसर-
अतीत की मुरझाई, बासी, यादों में
तो कभी-
उन भूली-बिसरी गलियों में
जहाँ-
मेरी मूँछें और दाढ़ी अंकुरित हुए थे,
मैंने अपनी पहली शेव की थी,
और जब-
झरोखों में से झाँकते, नाचते से नैनों से
आँखें चार-चार हुई थीं,
एक अज्ञात सी लहर दिल में दौड़ गई थी,
और तन अँगड़ाइयाँ लेने लगा था।
वे तीन-चार थीं।
कोई झरोखे से झाँकती
तो कोई अपनी छत पर खड़े होकर इतराती।
उनसे प्रत्यक्ष भेंट के अभाव में
और उनके नाम भी नहीं जानने के कारण,
शिनाख्त के लिये,
हम दोस्तों ने
उनके
बेजान, बे-जोड़, बे-मोल आदि के नाम धरे थे
कुछ ऐसा -सा,
उस कच्ची उमर का,
वह मेरा प्रथम परिचय था
दिल की धड़कनों से।
उन्हीं तंग गलियों में,
भूत की परछाइयों में,
कुछ यंत्रवत्-सा
अकसर
ऊब मन भटक जाता है
शजर से टूटे,
सूखे,
पत्ते की तरह।

वो आकर बैठ गई थी

वो आकर बैठ गई थी,
हम दोनों के बीच,
हितैषी सी।
फिर समा गई थी
हम दोनों के अंतर में,
परिचित-सी।
लेकिन
विचित्र थी
प्रकृति उसकी
कुछ अग्नि,
कुछ हिम-सी।
पूतना-सी थी,
होलिका-सी थी,
वो-
खामोशी।

संपर्क : सी-440, योजना विहार, देल्ली-110092

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अरविन्द कुमार मुकुल

ओ हरी किरणें

ओ हरी किरणें
मैंने तुमको
अभी देखा कहाँ है
जिन्दगी भर
सूर्य की जलती
गर्म लाल किरणों से
जलता रहा
और जब
मरने का समय आया
किसी ने हौले से कहा
हरी किरणें
भी होती हैं
शांत
नयनप्रिय
और कोमल।
जिन्दगी
क्या लाचारी है
क्या मजबूरी है
जिन्दगी और गम में
कितनी दूरी है
जिस दिन जिन्दगी मिली
गम की भी उसी दिन
सौगात मिली
जैसे दुल्हन होने के साथ
सिन्दूर का
उपहार मिला।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तुम्हारा परिचय

परिचय
तुमसे
इतना बढ़ा
कि
अपरिचित से
तुम
हो गए।

शिकायत

मुझे शिकायत है
स्याही पीली क्यों नहीं होती
धरती लाल
और
सूरज से हरी किरणें क्यों नहीं निकलतीं
पीली स्याही जल्द ही कागज से उड़ जाती
और ढेर सारे वाद-विवाद हवा बन कपूर हो जाते
फिर हम क्यूँ मंदिर-मस्जिद की झंझट उठाते
धरती लाल होती
हम सब तप जाते
तप कर
योगी बन जाते
और सूरज की हरी किरणें
सबको ठंडक पहुँचातीं
स्याही, धरती और सूरज
तीनों को बदलना होगा
नहीं तो यहाँ आदमी नहीं शैतान होगा
और शैतान
कविता नहीं समझता
कविता नहीं करता।

क्यों अब दिग्भ्रमित मनुज हुआ है?

पशुता फैल रही है, नीम ही जीवित बचा है।
सुना है
कल डसा गया था सर्प से
कोई भला आदमी
भला आदमी बचा रहा
सुनते हैं
सर्प ही मरा है।
आज क्यों जहरीला मनुज ही हुआ है?
रक्त कोशिकाओं में
हिमोग्लोबिन अब नहीं ठहरा है।
शिराओं में दर्द काफी गहरा है।
हर साँस से उफनता नागदंश कोई
हर कोई दूसरे पर पड़ा है।
सुना है हर एक के बिछावन नीचे
गोला
उसी के किसी आत्मीय ने
रख छोड़ा है
फूटेगा किसी दिन को
भाव बहुत गहरा होगा
सुनते हैं
मलहम
तब ज्यादा ही महँगा होगा
मस्तिष्क कोशिका के तंतु
किधर को घूमते जा रहे हैं।
कहीं जहाँ से हम
आए थे
फिर वहीं तो
अपने को
लौटा नहीं पा रहे हैं?

संपर्क : एल.एफ. 27, श्रीकृष्णपुरी, पटना-800001,
मो. 9931918578

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शिव नारायण जोहरी 'विमल'

नया महाभारत

ज्वाला मुखी सोये हुए हैं
जंगल की आग बुझ चुकी
केवल मरुस्थल ही जल रहा है
उसका ही धुँआ है जो
आ रहा है इस ओर
नहीं सुहाता है गौतमी भूमि पर
भरत के वंशजों को
नये महाभारत की बिजली का
चमकना धुएँ की गहराइयों से
चिंतित हैं सभी
नगर से गाँव तक।
हथियारों की खरीदी ने गरीबी को
और नंगा कर दिया है
भूखी और प्यासी माँ के
सूखे हुए स्तन
अब दूध देते ही नहीं
क्या पिलाए गोद के शिशु को
खेत में सूखा पड़ा है
पर्यावरण बिगड़ता जा रहा है।
जल थल और आसमाँ में
सीमा रेखाएँ खिंची हैं
सेन्य दल दीवार फौलादी
बना उन पर खड़ा है।
पीछे हम और हमारे देवता
निहत्थे खड़े है तमाशा देखते
कानून ने हमको निहत्था कर दिया है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धर्माचार्य आधुनिक शस्त्र
और आधुनिक वाहन
देते ही नहीं हैं देवताओं को
आज के संग्राम
तीर और तलवार से
जीते नहीं जाते।
घर में देशद्रोही
शत्रु का झंडा उठाए घूमते हैं
शत्रु की जय कार करते हैं
भारत माँ के प्रति वफादारी की
उड़ा कर धज्जियाँ
जिन्दा अभी तक हैं
युद्ध जारी है एक तरफा
एक कोड़े मारने में व्यस्त
दूसरा चमड़ी बचाने में
कब तक चलेगा सिलसिला ऐसा

लौटे जा रहे हैं वे

क्या वहीं फिर लौट जाना चाहते हैं वे
जहाँ से चले थे हजारों साल पहले
उसी जंगल की गुफाओं में जहाँ
आदमी की कोई भी कीमत नहीं था
कोई भी जज्बा नहीं था
जहाँ सब कितने अकेले थे।
एक दिन ताले खुले दिल के
फूल की मकरंद से
उठने लगे प्यार के नगमे
रंग भर हँसने लगी पृथ्वी
प्रगति की राह पर चल कर
बन गए हैं आज हम इंसान
उन्नत शिखर पर चढ़ कर
क्या यहाँ से लौट जाना चाहते हैं वे
धर्म के नाम पर लाकर सुनामी
चाहते हैं लौट जाना समय के
उसी जंगल में जहाँ तब
धर्म का नाम भी
जन्मा नहीं था
आदमी हैवान अपनी
इन्द्रियों का दास था।
फाड़कर इतिहास के पन्ने
घटनाएँ मिटाई जा नहीं सकतीं
सुनामी मर गई जापान जिंदा है।
सम्पूर्ण पृथ्वी पर राज्य करने का
स्वप्न बहुतों ने देखा था मगर
सभी यह साध दिल मैं लिए
अल्लाह को प्यारे हुए।
हिरण्याक्ष को पृथ्वी चुराने के लिए
मारा स्वयं भगवान ने अवतार लेकर
सिकंदर दिग्विजय करने चला था
ब्यास को भी पार कर पाया नहीं
नेपोलियन सूने द्वीप पर मरता रहा
समय को पत्थरों से तोड़ कर
हिटलर को खुदकुशी करना पड़ी।
उसकी निजामत में दखल
कोई दे नहीं सकता

आओ बरसती जिन्दगी में

बहुत हो गया बंद कमरे में
दौड़ाते कलम के घोड़े
दिवा सपनों के कागज फाड़ते
जरा चलो तो बाहर खुले में।
फुहारें जिन्दगी की
बरसती आ रही हैं आसमाँ से
उनसे लिपट कर पहन लो
भीगता यौवन
बूढ़ी घास कैसी
जवाँ होती जा रही है।
तोड़कर अपना कफन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बीज धरती से निकल
अँगड़ाई ले रहा है
खुले आँगन में।
प्यासे पेड़ पी कर सोमरस
झूमे जा रहे हैं नशे में डूबे।
पहाड़ों को बुहारे जा रहे झरने
क्या तुम्हारा मन नहीं करता
चट्टान से उड़ती फुहारों के
धुएँ में बैठ कर हम एक हो जाएँ
भीग कर रस में
उच्छृंखल हो गई हैं नदी की लहरें
किनारों की प्यास पी पी कर
नदी में पैर डालें और उफनती
नदी के साथ बह जाएँ।
चलो उन झुग्गियों के पास
नंगे बदन बच्चे जहाँ
खेलते हैं बरसती फुहारों में।
चलो उन के साथ खेलें
गोद में लेकर खिलायें
देकर टाफियाँ ढेरों
और उनसे माँग लें
भोलापन अनोखा
प्राण में भर लें प्यार के
बरसते नगमे।

संपर्क : डी.के. देवस्थली, फेस-2/24,
बावड़िया कला, भोपाल , मो. 9753914983

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. कुंकुम गुप्ता

माँ और मातृभाषा

माँ
जो पीड़ा सहकर भी
देती है जन्म
अपने शिशु को
अपने प्रतिरूप को
वात्सल्य की वर्षा कर
संरक्षण देकर
बोती है संस्कार बीज
देती है एक दिशा
एक सोच एक राह
सामर्थ्य और संकल्प शक्ति भी
किन्तु जब बच्चा
होता है समझदार
करता है माँ का तिरस्कार
माँ के आदर्शों की
विचारों की परंपरागत सोच की
धज्जियाँ उड़ा देता है हँसते हुए
तम माँ ढोती है
दोहरी व्यथा का बोझ
उसकी पनीली आँखों के सामने
तैरते हैं अतीत के चित्र
सच दुनिया है बड़ी ही विचित्र
हिन्दी भाषा भी आज
उपेक्षित होकर स्वजनों से
आहत
पाश्चात्य संस्कृति में सनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

आज की पीढ़ी
नकारती है उसके अस्तित्व को
हर जगह
गैरों से निरादर पाकर
सबको तलाश रहती है अपनों की
जिनसे कह अपनी व्यथा
मन करते हैं हल्का
पर अपनों की उपेक्षा का दर्द
किसे सुनाया जाये
विसंगतियों से मेल
कैसे बिठाया जाय
आज बदली है
समय ने हमारी सोच
लेकिन हममें सामर्थ्य है
समय को बदलने की
खोल दो अपनी समझ की बंद खिड़कियाँ
आने दो
सद्विचारों की शीतल हवा
भारतीयता की सुखद धूप
संस्कृति की खोयी सुगंध
संकल्पित मन से
पाश्चात्यीकरण का करें हवन
अन्तर्मन से करें
माँ और मातृभाषा को नमन

स्वभाषा

हिन्दी हमको प्यारी है
पर बनी आज बेचारी है।
अभिव्यक्ति का माध्यम है
अगनित भाषायें और बोली
अपनी संस्कृति की संवाहक
हिन्दी है माथे की रोली
विशद धरोहर न्यारी है
हिन्दी हमको प्यारी है।
घर में माँ को निर्वासित कर
नयी बनायी हमने रीति
निज भाषा का करें अनादर
अंग्रेजी से रखते प्रीति
आँसू माँ की लाचारी है
हिन्दी हमको प्यारी है।
वैज्ञानिक तथ्यों से पूरित
सहज सरल लिपि नागरी
संवर्धन करने इसका
भारती की जनता जाग रही
नव सृजन की बारी है
हिन्दी हमको प्यारी है।

संपर्क : 2/9 रणथंभौर काम्पलेक्स,
जोन-2, एम.पी. नगर, भोपाल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. अखिलेश चन्द्र

अनकही

राकेश और आशा अभी-अभी परिणय सूत्र में बँधे हैं। ये दोनों विवाह के दिन से ही पूरे आगरा शहर में चर्चा का विषय बन गये थे। राकेश और आशा का व्यक्तित्व किसी फिल्मी हीरों एवं हीरोइन की तरह प्रतीत हो रहा था। राकेश का कद-काठी, सुडौल तथा आकर्षक है तथा आशा की छटा तो बस देखने लायक है। जिस किसी की भी निगाह उस पर एक बार पड़ जाय, तो मजाल क्या है कि कोई नज़र हटा सकें। ये दोनों आगरा के 'बेस्ट कपल' प्रतियोगिता के विजेता भी हैं। दोनों आशावादी सोच के व्यक्तित्व के धनी हैं। सामाजिक जीवन से जुड़े मुद्दे उन्हें आन्दोलित करते हैं। 'बेस्ट कपल' प्रतियोगिता में जब आशा से पूछा गया था कि- आपकी राय में 'कन्या भ्रूण हत्या' जैसी सामाजिक बुराई समाज से कैसे दूर की जा सकती है? इस अतिगम्भीर विषय का उत्तर आशा ने सार्वजनिक तौर पर बड़े ही आशावादी दृष्टिकोण से दिया था। उसने सहजता से कहा था, 'बेटियाँ तो आधी आबादी का हिस्सा हैं उनके प्रति हम इतने क्रूर कैसे हो सकते हैं। स्त्री और पुरुष जीवन रथ के दो पहिये हैं, बिना एक-दूसरे के यह संसार अस्तित्व विहीन हो जायेगा। 'कन्या भ्रूण हत्या' सामाजिक अपराध है और इसे व्यक्तिगत तथा सामाजिक तौर पर लड़कर खत्म किया जा सकता है। बेटी बोझ नहीं होती और उन्हें भी इस संसार में आने और रहने का पूरा हक है जो उन्हें मिलना चाहिए।' इस आशावादी उत्तर से पूरा हाल तालियों की गड़गड़ाहट से गूँज उठा था। निर्णायक जूरी ने भी इस उत्तर पर आशा की बड़ी प्रशंसा की थी। तद्पश्चात राकेश से प्रश्न किया गया था कि- 'कन्या भ्रूण हत्या' पर आपकी राय क्या है? राकेश ने उत्तर दिया- 'कन्या' आँगन की शोभा होती है। इस भ्रूण हत्या को कानूनन रोका जाना चाहिए। इस अपराध में जितने लोग प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से शमिल हैं उन्हें कड़ी से कड़ी सजा देनी चाहिए। इस सकारात्मक उत्तर का भी प्रभाव जूरी पर गहरा पड़ा। सुन्दर व्यक्तित्व के धनी तो दोनों हैं ही साथ में आशावादी चिंतनधारा ने प्रतियोगिता का प्रथम पुरस्कार उन्हें दिला दिया।

'बेस्ट कपल' पुरस्कार देते समय आगरा के डिस्ट्रिक जज ने अपने अध्यक्षीय

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उद्बोधन में कहा था कि-'इस प्रतियोगिता का आयोजन करने के पीछे का मकसद यही है कि 'कन्या भ्रूण हत्या' जैसी सामाजिक बुराई को समाज से खत्म किया जाए क्योंकि 'बेस्ट कपल' की सोच पर ही भारत का भविष्य निर्भर है। यह नई पीढ़ी है इसकी सकारात्मक सोच इस दिशा में बदलाव का नेतृत्व करेगी। हमें राकेश और आशा को यह पुरस्कार देकर अपार हर्ष हो रहा है। दोनों को ढेर सारी बधाई।

उद्बोधन के ठीक बाद मीडिया कर्मियों ने दोनों को घेर लिया। हाथ में लिए हुए 'बेस्ट कपल पुरस्कार' की ट्राफी के साथ की फोटों समाचार पत्रों में प्रकाशित हुई। इस प्रकाशन से वो आगरा के सिलिब्रिटी बन गये। अब राकेश एक मल्टीनेशनल कम्पनी में एरिया मैनेजर हैं एवं आशा एक राष्ट्रीयकृत बैंक में शाखा प्रबन्धक।

आगरा शहर जो पूरे विश्व में 'ताज महल' की वजह से प्रसिद्ध है। इसकी ऐतिहासिकता का प्रमाण यहाँ का शाही किला, विश्व में अपना अलग महत्त्व रखता है। शनिवार की शाम राकेश ने आशा से कहा, कल रविवार का दिन है क्यों न हम 'ताज' घूमने चलें? राकेश ने जैसे आशा के मन की बात कह दी हो, वह भी बहुत दिनों से 'ताज' का दीदार करना चाहती थी क्योंकि बैंक कर्मियों से वह अक्सर 'ताज' की महिमा का बखान सुना करती थी कि आगरा में रह कर जिसने 'ताज' नहीं देखा समझो उसने जिन्दगी की सबसे बड़ी भूल कर दी। फिर क्या था सुबह की तैयारी के लिए आशा अभी से ही जैसे तरोताजा महसूस कर रही थी। वहाँ क्या-क्या ले चलना है, क्या नास्ता बनाना है, सब तय करके वह मोबाइल में सुबह 5:30 बजे का अलार्म लगाकर सोने चली गयी। सुबह ताज देखने की खुशी में मन आह्लादित था, न जाने कब नींद आ गयी पता ही नही चला। सुबह का अलार्म बजे उसके आधा घण्टा पहले ही उसकी नींद खुल गयी और उसने राकेश को जगाया। उठो! उठो! सुबह हो गयी। राकेश भी जल्दी उठ कर तैयार होने लगे। राकेश ने आशा से कहा 'ताज' चलने के लिए कम्पनी की कार मँगवायी है उसी में चलेंगे। दोनों जब तक तैयार होते दरवाजे की घंटी बजी। ट्रिंग.... ट्रिंग....। राकेश ने कहा-ड्राइवर होगा! दरवाजा खोला तो सचमुच ड्राइवर ही था। ड्राइवर ने कहा-साहब गाड़ी आ गयी है। राकेश ने आशा से कहा-गाड़ी में क्या-क्या रखना है ? बता दो रखवा देता हूँ। आशा ने कहा-ठीक है। सारा- सामान गाड़ी में रखकर दोनों रविवार की छुट्टी मनाने 'ताज' सुबह-सुबह पहुँच गये।

'ताज' का दीदार करते ही दोनों जैसे स्तब्ध रह गये। ताज की छटा वाकई ऐसी है जिसे शब्दों में बयाँ नहीं किया जा सकता। आशा ने बस इतना कहा- 'वाह ताज'। आशा ने राकेश के साथ ताज के समक्ष फोटो खिंचवायी। घूमते-घूमते दोपहर हो गयी पर दोनों का मन अभी भी भरा नहीं है। 'ताज को जितने ऐंगल से देखो उतना ही खूबसूरत लगता है।' आशा ने राकेश से कहा। राकेश ने उत्साह में आशा की हाँ में हाँ मिलायी और आगे जोड़ा कि 'जानती हो! ताज की असली खूबसूरती पूर्णिमा की चाँदनी रात में और निखरती है।' इस पर आशा ने कहा 'सुना तो है पर मुझे उसका कोई अफसोस नहीं है क्योंकि मैं आज बहुत खुश हूँ। तुम्हें दिल से बहुत-बहुत धन्यवाद!' रात को घर लौटते वक्त दोनों ने बाहर खाना खाया और इतना थक गये थे कि घर पहुँचने से पहले ही गाड़ी में नींद आ गयी। घर पहुँचने पर ड्राइवर ने जगाया। साहब घर आ गया। दोनों गाड़ी से उतरे और सामान ड्राइवर ने पहुँचाया फिर चेन्ज होकर दोनों सोने चले गये।

राकेश और आशा के दाम्पत्य जीवन में खुशी का चार चाँद तब लगा जब आशा को उसके फेमिली डाक्टर रश्मि ने यह बताया कि अब वे दो से तीन होने वाले हैं। आशा ने अपने को बहुत सहेजते हुए राकेश से बताया कि हमारी जिन्दगी में कोई नया मेहमान आने वाला है। यह बात सुनकर राकेश तो उछल पड़ा, उसने आशा को बाँहों में उठाकर प्यार से पूछा! क्या तुम सही कह रही हो ? आशा ने कहाँ-हाँ। मैं कल बैंक से आते वक्त अपने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

फेमिली डॉक्टर रश्मि जी के यहाँ गयी थी तो उन्होंने मुझे चेक किया और उसके बाद इसकी जानकारी दी।

लता मंगेशकर के एलबम का गाना था- आजकल पाँव जमीं पर नहीं पड़ते मेरे, आशा भी कम खुश नहीं थी परन्तु उसे अभी परिवार बढ़ाने में थोड़ा और समय की चाहत थी क्योंकि बैंक जिम्मेदारी देना चाहता था इसी उधेड़बुन में वह थोड़ी शान्त और गम्भीर है कि-'किया क्या जाए? राकेश ने आशा को गम्भीर देखा तभी अचानक गाना बदला। अब गाने के बोल थे। गुड़िया कब तक रूठी रहोगी, कब तक न हँसोगी....। देखो जी किरण सी लहरायी आयी री आयी रे हँसी... आयी...। गुड़िया...। इस हँसी में आशा थोड़ी देर के लिए अपने बैंक का कार्य क्षेत्र भूल गयी।

राकेश को जीवन का अब असली आनन्द आ रहा था। हर काम में उसका मन लगने लगा। सुबह जल्दी उठकर मार्निंग वॉक पर जाना, नाश्ता साथ में करना, अपने काम पर जाने से पहले आशा को बैंक छोड़ना, लंच के समय आशा से पूछना कि 'लन्च किया कि नहीं।' हर घण्टे दो घण्टे पर फोन करके पूछना कि 'पानी पिया कि नहीं'। शाम को घर लौटते वक्त बैंक से आशा को लेना जैसे उसकी आदत बन गयी। कम्पनी के काम को करते हुए वह अपने गृहस्थी के दायित्व को भी भली-भाँति निभा रहा था।

आशा भी अपना दायित्व तो ठीक से निभा रही है परन्तु वह राकेश की तरह निश्चिंत नहीं है क्योंकि उसके ऊपर आगे बहुत बड़ी जिम्मेदारी आने वाली है। एक तरफ उसका कैरियर है तो दूसरी तरफ परिवार इन दो पाटों में पिसती वह कुछ निर्णय ठीक से नहीं ले पा रही है। इसका एक कारण उसकी सहकर्मी रेखा भी है। रेखा ने भी उसी दिन बैंक में असिस्टेण्ट मैनेजर की पोस्ट को ज्वाइन किया था जिस दिन आशा ने शाखा प्रबन्धक का कार्यभार ग्रहण किया था। आशा और रेखा में कड़ी प्रतिस्पर्धा तो नहीं है क्योंकि आशा, रेखा से पद में सीनियर है परन्तु मातृत्व अवकाश की स्थिति में आशा इस बात से चिंतित है कि रेखा कैरियर में उससे आगे निकल जायेगी। रेखा वैसे भी आशा को नीचा दिखाने का प्रयत्न गँवाना नहीं चाहती। आशा को शान्त देख एक दिन रेखा ने आशा से पूछा! मैम आज कल आप शान्त-शान्त सी क्यों रहती है ? आशा ने रेखा की बात का कोई उत्तर ठीक से नहीं दिया बस यूँ हीं टालने के लिए बोल दिया नहीं ऐसी तो कोई बात नहीं है। क्योंकि सच जानने पर रेखा पूरे बैंक में ढिंढोरा पीट देती तथा अपने प्रमोट होने का बिगुल भी फूँक देती। आशा ने यह बात रेखा से इसलिए भी साझा नहीं की। क्योंकि रेखा अभी सिंगल है और आशा की गम्भीरता को वह ठीक से शायद न समझे।

इसी उधेड़बुन में जिन्दगी के दिन कट रहे थे। राकेश की खुशी दिन-पर-दिन बढ़ रही थी। राकेश अपने माता- पिता का इकलौता संतान है। राकेश के पिता माता प्रसाद प्राथमिक विद्यालय में प्रधानाध्यापक पद से अवकाश प्राप्त है तथा माता चिन्ता देवी गृहणी हैं। जो जनपद इलाहाबाद के निवासी हैं। पिता की पेंशन से दोनों का गुजारा अच्छी तरह हो जाता है। राकेश जरूरत पड़ने पर आर्थिक मदद भी करता रहता है। राकेश की माँ चिन्ता देवी की भी चिन्ता अन्य माँओं की तरह पोते को लेकर वैसी ही है जैसी सब माँओं की होती है। वह राकेश से जब भी फोन पर बात करती है तो इस पर जरूर बात करती है। राकेश को लगा कि इस खुशखबरी को अब 'माँ' को बताने का समय आ गया है। उसने घर फोन लगाया। फोन 'माँ' ने ही उठाया। राकेश ने कहा हेलो माँ! कैसी हो? 'माँ' ने उत्तर दिया ठीक हूँ बेटा, अपना बता! राकेश ने कहा बधाई हो माँ तुम दादी बनने वाली हो। क्या कहा? जरा ठीक से बता। हाँ माँ तुम सही सुन रही हो। तुम जल्द ही दादी बनने वाली हो। राकेश की माँ ने फोन रखकर सबसे पहले घर में बने मंदिर में 'घी' का दीया जलाया और तद्पश्चात राकेश के पिता का पैर छूकर आशीर्वाद लिया माताप्रसाद ने आशीर्वाद में कहा कि खुश रहो। फिर चिन्ता देवी ने पूछा! बताओ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हमने आशीर्वाद क्यों लिया? माता प्रसाद ने कहा! तुम औरतों का भी कुछ पता नहीं। आशीर्वाद लेने के बाद पूछती हो आशीर्वाद क्यों लिया? अब तुम्हीं बता दो मैं इतना अर्न्तयामी नहीं हूँ। अरे वर्षों से इसी खुशी का तो इन्तजार था हमें इस खुशी के लिए मैं कहाँ-कहाँ नहीं गयी। किसी मन्दिर, देवालय को छोड़ा हमने। हर जगह तो मथ्था टेक आयी कि हमारे राकेश को भगवान एक बेटा दे दें। और जानते हो आज ही राकेश का फोन आया था कि माँ तुम दादी बनने वाली हो। मैं दादी बनूँगी तो तुम दादा बनोगे। कितना सुखद होगा वह पल जब हम 'दादा-दादी' बनेंगे। देखो हम कल ही आगरा चलेंगे। मैं अब एक पल भी यहाँ रुकना नहीं चाहती। माताप्रसाद ने ऐसा ही किया और दोनों सुबह आगरा के लिए निकल पड़े।

शाम को दोनों आगरा पहुँच गये। माँ ने राकेश को पहले ही सूचना दे दी थी कि वे आगरा आ रहे हैं तो राकेश ने स्टेशन से ही उन्हें पिक अप कर लिया और लौटते समय आशा को बैंक से साथ लेकर पूरे परिवार के साथ घर वापस आ गया। कुछ पल आराम करने के पश्चात रात्रि का भोजन 'माँ' ने ही बनावा और सभी ने प्रेम से खुशी-खुशी रात्रि भोजन ग्रहण किया। थकावट के कारण उस रात्रि किसी ने ज्यादे बातचीत नहीं की। सुबह कम्पनी जाते समय 'माँ' ने राकेश से कहा! बेटा कम्पनी पहुँचकर गाड़ी भेज देना, मुझे कुछ खरीददारी करनी है। अच्छा 'माँ' कहकर राकेश और आशा अपने-अपने काम पर चले गये। राकेश ने कम्पनी पहुँच कर गाड़ी घर पर भेज दी।

गाड़ी जैसे ही दरवाजे पर आयी चिन्ता ने राकेश के पिता से कहा-चलो बाजार चलना है। राकेश के पिता ने कहा-काम क्या है? चिंता ने कहा दस हजार रुपये ले लो बाजार में बताऊँगी क्योंकि गाड़ी शाम को पुनः बच्चों को लाने के लिए भेजनी है। माताप्रसाद ने पैसे रखे और दोनों बाजार आ गये। चिन्ता ने बहू के खाने के लिए ड्राई फ्रूट, स्वास्थ्य वर्धक पौष्टिक सामाग्री, बहू को साड़ी, नन्हें बच्चे का फोटो, कुछ जरूरी खिलौने खरीद, घर वापस आकर गाड़ी पुनः कम्पनी भेज दी।

शाम को घर पहुँचने पर चिन्ता ने सब कुछ आशा को दिखाया और कहा- मैं इस दिन के लिए तरस रही थी। देखो अपने पोते के लिए मैं क्या-क्या खरीद कर लायी हूँ। माँ की खुशी में आशा को समझ में नहीं आ रहा था कि वह खुश हो या अपनी जिम्मेदारी की वजह से अपने मन की बात कह दे पर वह डरती थी कि 'माँ' नाराज हो जायेंगी। फिर भी 'माँ' की बातों में से ही बात निकालकर हिम्मत करके बोली 'माँ' यदि पोता नहीं पोती हुयी तो? इस बात पर चिन्ता का चेहरा तिलमिला उठा अगर उसका बस चलता और उसे सभ्य समाज का डर न होता तो वह खीचकर एक तमाचा आशा को जड़ देती क्योंकि वह पोती के बारे में सोच भी नहीं सकती, उसे बस पोता चाहिए सिर्फ पोता।

इलाहाबाद में निवास के कारण वह पोता और पोती का फर्क संस्कार के रूप में देखती रही है। सारे के सारे कर्मकाण्ड पुरुष की झोली में न जाने क्यों डाले गये हैं। अरे हमारा क्या? हमारे पास तो बेटा राकेश है सारे कर्मकाण्ड करने के लिए। हम तो तुम दोनों के संस्कार के बारे में चिंतित हैं, पोता होगा, तो राकेश और आशा के भी कर्मकाण्डी संस्कार भली-भाँति पूरे हो जायेंगे। कर्मकाण्ड के साथ-साथ वंश को भी तो आगे बढ़ाना है। चिंता ने अपनी बात आशा के समक्ष रखी। आशा ने कहा 'माँ' अब जमाना बदल गया है पर चिन्ता ने आशा की बात अनसुनी कर दी। रात्रि में सोने से पूर्व उसने राकेश के पिता माताप्रसाद से कहा, देखो हमें सिर्फ पोते की ही कामना है। मैं सपने में भी पोती के बारे में नहीं सोच सकती। माता प्रसाद ने उसे समझाते हुए कहा, 'देखो जमाना बदल रहा है आज की बेटियाँ सारे काम कर रही हैं। यहाँ तक की कर्मकाण्ड संस्कार भी। इसलिए बहुत परेशान होने की जरूरत नहीं है। अपने परम्परावादी दृष्टि कोण को बदलो। समाज काफी कुछ बदल गया है। पंडित जवाहर लाल नेहरू जो भारत के प्रथम प्रधानमंत्री

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थे उनकी भी तो एक मात्र संतान इंदिरा गाँधी थी जो बाद में चलकर भारत की प्रधानमंत्री बनी और विश्व स्तर पर उनका और देश का मान सम्मान बढ़ाया।'

देश में बेटियों ने जो परचम लहराया है वो काबिले तारीफहै। सच कहूँ चिन्ता, जो सुख बेटियाँ दे देती है वह बेटे नहीं दे सकते। बेटियाँ घर के आँगन की शोभा होती है। हमारे पास भी तो कोई बेटी नहीं है। अगर पोती हुयी तो हम उसे पोती और बेटी दोनों का ढेर सारा प्यार देंगे। बेटी के घर में रहने मात्र से घर में हमेशा त्योहार जैसा वातावरण रहता है। माता-पिता की हर संवेदना को बेटी से बेहतर कोई नहीं समझ सकता और एक महत्त्वपूर्ण बात कहना चाहूँगा, तुम भी तो किसी की बेटी हो। इस मसले पर यदि मैं पोते का पक्ष लेता तो बात कुछ और होती। पर तुम तो स्वयं बेटी, पत्नी, माँ, सास सभी भूमिकाएँ बेहतर निभा रही हो फिर किस बात की बहस। अपनी सोच बदलो और नयी विचार धारा को अपनाओ बेटे और बेटी में अब कोई अन्तर नहीं। आशा की बात की तरह ही चिन्ता ने अपने पति की भी बात को बहुत तवज्जो नहीं दी।

इस गम्भीर चिन्तन को सुनने के बाद चिन्ता और तिलमिलाते हुए बोली तुम मुझे मत समझाओ ताउम्र बच्चों को पढ़ाते-पढ़ाते मुझे मत पढ़ाओ। मैंने भी जीवन बहुत करीब से देखा है। जीवन की आपा-धापी में बेटे के वजूद को बेटियाँ कभी नहीं पा सकतीं। मैंने हमेशा से बस पोते की कामना की है मैं इससे कोई समझौता नहीं कर सकती। तुम्हारे इसी पुत्र मोह में भगवान ने हमें बेटी नहीं दी' माताप्रसाद ने अतिसंवेदनशील टिप्पणी चिन्ता को सुनायी। चिन्ता ने कहा- नहीं दी तो नहीं दी' उम्र के इस पड़ाव पर कम से कम तुम ताने तो मत मारो। माताप्रसाद ने कहा- बात ताने की नहीं, समझ की है। चिन्ता ने कहा-समझ मुझमें बहुत है आप अपनी समझ को अपने पास रखो। मैं जो चाहती हूँ पूरे परिवार की भलाई उसी में है। माताप्रसाद ने कहा-परिवार की भलाई जो तुम चाहती हो उसमें नहीं बल्कि तुम्हारे चिन्ता मुक्त होने में है पर मैं तो व्यर्थ में चिन्ता कर रहा हूँ, तुम्हारा तो नाम ही चिन्ता है। तुम्हारे माँ-बाप ने तुम्हारे व्यवहार का आकलन करके ही शायद तुम्हारा नाम चिन्ता रखा होगा। व्यवहार तो नाम के अनुसार ही कर रही हो। रात्रि भोजन की टेबल पर खाना खाते समय चिन्ता ने राकेश से कहा, बेटा मैं तो जानती हूँ कि आशा मेरे पोते को जन्म देने वाली है। पर सुना है इस समय कोई ऐसी मशीन आ गयी है। जो प्रसव-पूर्व ही जाँच करके बता देती है कि गर्भ में पल रही संतान लड़का है या लड़की। राकेश ने कहा-हाँ 'माँ' उस मशीन को अल्ट्रासाउण्ड मशीन कहते हैं। पर उसकी कोई जरूरत नहीं है। क्योंकि यह हम दोनों की पहली संतान है। मेरी तो बस यही इच्छा है कि सब कुछ भली-भाँति सामान्य रूप से हो जाय। मैं बेटा और बेटी में कोई फर्क नहीं करता। चिन्ता ने एकदम नाराज होते हुए कहा, 'बेटा तो हो इन्ही के न, बात भी इन्हीं की तरह करोगे।' मुझे मत समझाओ मैं जो चाहती हूँ बस वही करो! कल बहू को ले जाकर मशीन पर चेक करवाओ।

खाना खाने के बाद राकेश और आशा अपने कमरे में आ गये। आशा तो जैसे कुछ समझ ही नहीं पा रही है कि इस अंतर्द्वन्द से कैसे बाहर निकला जाय। उसने राकेश से कहा 'माँ' जी तो कुछ सुनने को तैयार ही नहीं हैं। उन्होंने तो जैसे जिद पकड़ ली है। सच कहूँ राकेश यूँ तो मैं भी लड़का एवं लड़की में फर्क नहीं करती परन्तु इस समय मैं काफी परेशान हूँ जानते हो क्यूँ? क्योंकि मैं अभी बच्चे के बारे में थोड़ा और टाइम चाहती हूँ पर सब कुछ तो अपने पर निर्भर नहीं है। चाहती तो मैं यह थी कि अभी दो तीन साल हम इससे दूर रहें पर ऐसा हुआ नहीं। 'माँ' की जिद अलग परेशान कर रही है तथा नौकरी की दुस्वारियाँ अलग। खैर उनका सम्मान रखने के लिए राकेश ने डॉ. रश्मि जी से कल सायं का समय निश्चित कर लिया और आशा से बता दिया कि कल कम्पनी से लौटते वक्त तुम्हें लेकर डॉ. रश्मि के यहाँ चलना है। आशा ने कहा कि इसकी क्या जरूरत है? राकेश ने कहा-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कि तुम तो 'माँ' को जानती हो अगर उनका कहा नहीं किया तो पूरा घर सिर पर उठा लेंगी। आशा ने थोड़ा झुँझलाते हुए कहा- ये तो अच्छी रही, रहें हमारे घर में और हुकुम भी हमीं पर चलायें। राकेश ने कहा- मैं उनका इकलौता पुत्र हूँ मेरी मजबूरियाँ भी समझो। न चाहते हुए भी आशा डॉ. रश्मि के यहाँ चेकअप के लिए राजी हो गयी। दूसरे दिन कम्पनी से लौटते हुए आशा को बैंक से लेकर राकेश डॉ. रश्मि के क्लिनिक पहुँचा। डॉ. रश्मि ने बड़े ही उत्साह से दोनों का स्वागत किया तथा बड़े ही चुटीले अन्दाज में पूछा, आशा नन्हा मेहमान ज्यादा तंग तो नहीं कर रहा है। आशा ने कहा, नहीं। अन्दर का मेहमान तो नहीं तंग कर रहा है परन्तु घर पर आये मेहमान जरूर तंग कर रहे हैं। घर के मेहमान हमें हमारी मर्जी से जीने भी नहीं दे रहे हैं। व हम पर अपनी इच्छा इस तरह थोप रहे हैं कि न चाहते हुए भी हमें आपके पास आना पड़ा। डॉ. रश्मि ने राकेश से कहा- राकेश क्या बात है ? घर में सब ठीक तो है। राकेश ने कहा- डॉ. साहब मैं अपनी विवशता क्या बताऊँ? मैं तो दो पाटों के बीच में पिस रहा हूँ। 'माँ' का कहा मानूँ तो पत्नी नाराज और पत्नी का कहा मानूँ तो 'माँ' नाराज। डॉ. रश्मि ने कहा यह तो हर उस घर की व्यथा है जहाँ सास-श्वसुर और बेटा साथ रहते हैं। खैर छोड़ो, बताओ कैसे आना हुआ? रूटीन चेकअप के लिए आशा ने झट से बोला। हाँ रूटीन चेकअप के साथ अल्ट्रासाउण्ड से यह भी पता लगाना है कि गर्भ में पल रहा बच्चा लड़का है या लड़की, राकेश ने अपनी तरफ से आशा की बात को आगे बढ़ाते हुए कहा। डॉ. रश्मि ने कहा कि आप दोनों तो काफी पढ़े लिखे हो जानते हो कि गर्भ में पल रहे बच्चे का लिंग परीक्षण कराना कानूनी अपराध है? हाँ डॉ. साहब जानते तो है पर कुछ गलतियाँ जान बूझ कर की जाती हैं समझ लें कि यह हमारे लिए आवश्यक तो नहीं है परन्तु 'माँ' की इच्छा है मैं कैसे टाल सकता हूँ। मेरी 'माँ' की तसल्ली के लिए आप यह जाँच कर दे तो बड़ा अच्छा रहेगा। डॉ. रश्मि ने कहा- 'आप मेरे पारिवारिक संबंध वाले न होते तो मैं ऐसा हरगिज न करती' पर...। चलो आशा 'चेक इन' रूम में चलो। डॉ. रश्मि ने आशा की गहराई से जाँच की और हर तरह से पूरी तसल्ली के बाद दोनों को बैठाकर बताया कि 'राकेश और आशा देखो लड़का और लड़की में कोई फर्क नहीं है। मेरी खुद दो बेटियाँ है। 'हम दो हमारे दो' के साथ हम खुश भी है। डॉ. रश्मि की बात को बीच में काटते हुए राकेश ने कहा तो क्या डॉ. साहब गर्भ में पल रही हमारी संतान बेटी है। डॉ. रश्मि ने अपने को सम्भालते हुए कहा, हाँ गर्भ में पल रही संतान बेटी ही है। अब तो राकेश और आशा के मन मस्तिष्क पर 'माँ' की बात घूमने लगी उन्हें हालाँकि कोई फर्क नहीं हैं पर 'माँ' को कैसे सँभाला जायेगा इसी बात पर विमर्श करते हुए दोनों डॉ. रश्मि के क्लिनिक से घर पहुँचे पर परिणाम कुछ निकाल पाते तब तक सामने से 'माँ' आती दिखी। 'माँ' ने चहकते हुए कहा, रुको बेटा पहले बहू की आरती उतारूँगी फिर घर में प्रवेश कराना क्योंकि बहू मेरे पोते के साथ आ रही है। राकेश ने कहा 'माँ' अन्दर चलो बताता हूँ देखो। हम दोनों संतुष्ट हैं। नन्हा मेहमान पोता नहीं पोती है। बस तुम शान्त रहो!

क्या कहा! पोता नहीं पोती है और उस पर से कह रहा है कि मैं शान्त रहूँ। अरे यह शान्त रहने वाली बात है। कितना समय हो चुका है इस बच्ची को गर्भ में आये? इस बच्ची का जब तक एबार्शन नहीं हो जाता मैं अन्न और जल ग्रहण नहीं करूँगी। मैं किसी भी कीमत पर पोती का जन्म इस घर में नहीं होने दूँगी। मुझे पोता चाहिए। माताप्रसाद ने कहा, अरे पोती का जन्म हो रहा है तो होने दो अगली बार पोता भी हो जायेगा। परन्तु चिन्ता कहाँ मानने वाली महिला है। वह तो बस अन्न और जल छोड़कर अनशन पर बैठ गयी। राकेश से तेज स्वर में बोली 'देख तू मेरी बात कान खोल कर सुन ले इस घर में बेटा पहली संतान होगा नहीं तो नहीं।'

रात्रि में चिन्ता ने खाना नहीं खाया। बना बनाया खाना चिन्ता के न खाने के कारण किसी ने नहीं खाया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सुबह सारा खाना फेंकना पड़ा। राकेश ने आशा से कहा 'माँ' ने तो जिद पकड़ ली है लगता है गर्भ में पल रही बच्ची का एबार्शन कराना ही होगा। गम्भीर चिन्तन के बाद आशा ने राकेश से कहा- शायद 'माँ' ठीक कह रहीं हैं क्योंकि मैं भी अभी बच्चा दो-तीन साल बाद चाहती हूँ। बैंक प्रबन्धन तो मुझे पहले से ही अधिक जिम्मेदारी देना चाहता है। रेखा से मेरी प्रतिस्पर्धा भी तो चल रही है और अगर बच्चा एबार्शन करा दिया जाय तो दो-तीन साल बाद फिर बच्चे के बारे में सोचने का समय आयेगा और तब तक दाम्पत्य जीवन का सुख और उठाया जा सकता है। समय आने पर पुनः प्लानिंग के साथ सन्तान सुख प्राप्त किया जा सकता है।

> *क्या कहा! पोता नहीं पोती है और उस पर से कह रहा है कि मैं शान्त रहूँ। अरे यह शान्त रहने वाली बात है। कितना समय हो चुका है इस बच्ची को गर्भ में आये? इस बच्ची का जब तक एबार्शन नहीं हो जाता मैं अन्न और जल ग्रहण नहीं करूँगी। मैं किसी भी कीमत पर पोती का जन्म इस घर में नहीं होने दूँगी। मुझे पोता चाहिए। माताप्रसाद ने कहा, अरे पोती का जन्म हो रहा है तो होने दो अगली बार पोता भी हो जायेगा। परन्तु चिन्ता कहाँ मानने वाली महिला है। वह तो बस अन्न और जल छोड़कर अनशन पर बैठ गयी। राकेश से तेज स्वर में बोली 'देख तू मेरी बात कान खोल कर सुन ले इस घर में बेटा पहली संतान होगा नहीं तो नहीं।'*

आशा ने घर में उठे 'माँ' द्वारा बनाये गये मनोवैज्ञानिक दबाव के कारण उत्पन्न परिस्थिति का लाभ उठाने के लिए राकेश को समझाना शुरू किया कि इस समय माँ की बात मान लेना ही ठीक है क्योंकि उन्होंने खाना पीना सब छोड़ दिया है। आशा यह भी जानती है कि राकेश की कमजोरी 'माँ' है। आशा इस कमजोरी का लाभ तात्कालिक समस्या के निदान के लिए उठाना चाहती है क्योंकि राकेश स्वयं तो कभी भी बेटी की भ्रूण हत्या नहीं कराना चाहेगा परन्तु माँ के दबाव में वह हाँ कर देगा। आशा इस बात से भी बचना चाहती है कि एबार्शन में उसकी सहमति है। आखिर हुआ वही जो नहीं होना चाहिए था। राकेश ने माँ के दबाव में और आशा की बात को ध्यान में रखते हुए हाँ कर दी।

इस फैसले से डॉ. रश्मि को अवगत कराते हुए कि गर्भ में पल रही बेटी का एबार्शन करवाना है आप समय दें दे तो डॉ. रश्मि ने अपनी व्यस्तता का कार्यक्रम देखते हुए शारदीय नवरात्रि का प्रथम दिन एबार्शन के लिए तय किया क्योंकि उस दिन पूजा-पाठ वाला दिन होने के नाते पेसेण्ट कम आते हैं। ठीक इसी प्लानिंग पर राकेश ने अपनी कम्पनी से तथा आशा ने अपने बैंक से तीन-तीन दिन का अवकाश ले लिया। एक तरफ शारदीय नवरात्रि का उल्लास शहर और आस-पास दिख रहा था तो दूसरी तरफ राकेश और आशा अवसाद ग्रस्त हो रहे थे। एक तरफ बाजार की रौनक देखते बन रही थी देवी मंदिरों, का रंग रोगन हो रहा था तो वहीं दूसरी तरफ राकेश और आशा की रौनक फीकी पड़ रही थी। आशा को कुछ भी अच्छा तो नहीं लग रहा था परन्तु अच्छा लगने जैसा हाव-भाव प्रदर्शित करना उसकी नियति बन गयी थी।

आखिर वह घड़ी आ गयी। कल शारदीय नवरात्रि का पहला दिन है। सब कुछ मन के मुताबिक होता देख चिन्ता भी अब प्रसन्न है कि चलो पोती जैसी इस समस्या से अब निजात मिल जायेगी। भला बताओ जिसके अभी न आने पर इतनी समस्याओं से गुजरना पड़ रहा है अगर आ जाती तो न जाने कितनी समस्या को लेकर आती। चिन्ता जरूरी सामान बैग में रखते हुए माताप्रसाद से बोली- यह बैग गाड़ी में राकेश से कह दो रखे। हम सभी क्लिनिक चलेंगे। सभी लगभग 11 बजे क्लिनिक पहुँच गये।

डॉ. रश्मि तो पहले से ही तैयार थी। क्लिनिक पहुँचते ही उन्होंने एक बार चारों को एक साथ बैठाया और कहा- आप सभी का फाइनल निष्कर्ष यही है न कि गर्भ में पल रही बेटी का एबार्शन कर दिया जाय। इस पर राकेश ने कहा कि हम सब डिसीजन लेकर ही आपके पास आये हैं। आप अपना कार्य पूर्ण करें। डॉ. रश्मि ने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कहा- आप नहीं जानते हैं हमारे प्रोफेशन की कुछ जरूरी फार्मेल्टी है कि पेसेन्ट और उसके गार्जियन्स से सैटिसफाई हो कर ही ऐसे कार्य को आगे बढ़ाया जाय। क्योंकि इसमें रिस्क होता है। रिस्क कैसा रिस्क? राकेश ने जिज्ञासा वश पूछा। अरे जान का रिस्क है। माँ की जान को खतरा होता है और आपकी पत्नी तो लगभग साढ़े तीन माह के गर्भ से है। एबार्शन की प्रक्रिया पूरी मैच्योर डिलेवरी की तरह से गुजारनी पड़ती है। इसमें बहुत सारा खून शरीर से निकल जाता है तथा एबार्शन होने के एक आध सप्ताह और कभी-कभी पन्द्रह से बीस दिन तक ब्लीडिंग जारी रहती है। इस लिए पेसेन्ट को तथा उनके रिस्तेदार को बताना जरूरी होता है। आने वाली सारी परेशानियों को गौण मानते हुए चिन्ता ने कहा- डॉ. साहब आप एबार्शन कर हमें इस परेशानी से जल्दी मुक्ति दिलायें। हम सब तैयार है। डॉ. रश्मि ने कहा ठीक है। नर्स पेपर फार्मेल्टी पूरी करो और आशा को लेबर रूम में ले चलो। राकेश ने कुछ क्लिनिक के जरूरी कागजात पर हस्ताक्षर किये तथा आशा को लेबर रूम तक साथ में पहुँचाया। लेबर रूम के दरवाजे पर आशा से कहा 'बेस्ट आफ लक'। आशा लेबर रूम के अन्दर चली गयी तथा राकेश लेबर रूम के बाहर इन्तजार करने लगा। थोड़ी ही देर में डॉ. रश्मि भी लेबर रूम में गयी और एबार्शन की प्रक्रिया शुरू करा दी।

डॉ. रश्मि ने आशा से कहा-आशा तुम्हे हमें पूरी तरह कोऑपरेट करना है। दर्द का इंजेक्शन तुम्हें दिया जायेगा। परन्तु फिर भी दर्द काफी होगा एवं पूरी प्रक्रिया में दो से ढाई घण्टा लगेगा। आशा ने कहा ठीक है। डॉ. रश्मि ने आशा को एबार्शन से जुड़ी दवाईयाँ दीं एवं सुई लगाी। आशा के गर्भ में पल रही बच्ची का असमय संवेदना से संवेदनाशून्यता में जाना बहुत ही त्रासदी पूर्ण प्रक्रिया है जिससे वह अजन्मी बच्ची गुजरती है। जब तक उसकी संवेदना जिन्दा रहती है वह अपने एक-एक रिश्ते से अपनी अनकही बात को प्रस्तुत करती है।

सबसे पहले अपनी माँ से संवाद करते हुए कहती है 'माँ' को तो सृजनहार कहा जाता है 'माँ' तुम कैसे हत्यारिन हो गयी। तुमने तो बड़ी-बड़ी बातें की थी कभी। 'बेटियाँ तो आधी आबादी का हिस्सा हैं। स्त्री और पुरुष जीवन रथ के दो पहिये हैं बिना एक-दूसरे के यह संसार अस्तित्व विहीन हो जायेगा। बेटी बोझ नहीं होती' अगर मुझे ठीक से याद है तो तुमने यही कहा था न 'माँ'! जब तुम 'बेस्ट कपल पुरस्कार' में शामिल हुयी थीं। तुम्हारी इसी सोच ने तुम्हें पुरस्कार जिताया था न माँ! जानती हो माँ! मैं तुम्हारी इसी सोच के कारण तुम्हारे गर्भ में आयी कि चलो मैं यहाँ सुरक्षित रहूँगी अभी ठीक से मेरा विकास भी नहीं हुआ और तुमने राजनीतिज्ञों की तरह अपने व्यवहार में बदलाव कर दिया। राजनीति तो मैं अच्छी तरह नहीं जानती परन्तु मेरे साथ तुमने बड़ी राजनीति खेली 'माँ'! मैं तो एबार्शन की प्रक्रिया में आ चुकी हूँ अब तुम इसे रोक भी तो नहीं सकतीं। जानती हो क्यूँ क्योंकि जैसे मिसाइल छोड़ने का काउण्ट डाऊन जब शुरू हो जाता है तो उसे रोका नहीं जा सकता, ठीक उसी प्रकार मेरा काउण्ट डाउन तुमने शुरू करा दिया 'माँ'! मैं तो तुम्हारे दिल का टुकड़ा हूँ तुम्हारे रक्त से मैं सींची जा रही थी तुम्हारे अस्तित्व में अपना अस्तित्व खोज रही थी। तुमने भी 'चौकी की बात चौका पर लागू नहीं होती' वाली कहावत चरितार्थ कर दी माँ! मैंने सोचा था तेरे आँगन में किलकारियाँ मारूँगी! तुझे ममता की शीतल छाँव से भिगाऊँगी। जब तुम कभी बहुत तनाव में रहोगी तो तेरे सर दबाऊँगी! तेरी हर बात बिना तर्क किये मानूँगी। मुझमें इतनी सामर्थ थी कि तुम जो कहती मैं वह करके दिखाती। तुम्हारे घर की शोभा बन जाती। जो तुम पहनाती वह मैं पहनती। हाँ मुझे चूड़ियों का बहुत शौक है माँ! कान में इयर रिंग, नाक में कील, हाथ में मेंहदी, पाँव में महावर, तरह-तरह से बाल सँवारना, शीशे के सामने खुद को देखकर इतराना, नाखून में नेल पालिश लगाना मुझे बहुत अच्छा लगता है। माँ! क्या-क्या बताऊँ ? मुझे बचपन से लेकर अपने हर उम्र के कपड़े पहनना बहुत अच्छा लगता है माँ! जानती हो मुझे फ्राक, ट्यूनिक, सलवार-समीज, जीन्स, टी-शर्ट, साड़ी, मैक्सी, और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तो और विभिन्न तरह की चप्पलें जूते, मौजे पहनना सब बहुत अच्छा लगता है। हाँ विभिन्न तरह की घड़ियाँ, टी.वी., कम्प्यूटर, लैपटाप, आईपैड सब कुछ अच्छा लगता है। जानती हो जब मैं सज कर शीशे के सामने खड़ी होती तो मुझे लगता कि मैं ही पूरी दुनिया में सबसे सुन्दर हूँ। मैं इठलाती हूँ, बलखाती हूँ। मुझे पूरी कायनात सुन्दर लगती है। माँ जब भी कोई दर्जी कोई सुन्दर परिधान बनाता है न, तो मुझे न जाने क्यूँ आकर्षित करता है। मुझे लगता है वह सिर्फमेरे लिए बना रहा है और हाँ माँ! मुझे तितलियों के पीछे भागना बहुत अच्छा लगता है। बारिश में कागज की नाव बनाकर पानी में बहाना मुझे बहुत अच्छा लगता है। बारिशा में भीगना जैसे मेरा जन्म सिद्ध अधिकार हैं परन्तु भिगाया तुमने भी मुझे! बारिस के पानी से नहीं जहरीली दवाओं और विषैली सुइयों से मुझे बहुत दर्द हो रहा है माँ। मैं इससे छुटकारा पानी चाहती हूँ पर कैसे अब तो बहुत देर हो चुकी है। तुम कुछ बोलती क्यों नहीं माँ! तुम आज नहीं बोलोगी क्यों कि कहने का दिन मेरा है तुम अपराधी हो। सिर्फसुनो! मुझे साइकिल चलाना पसन्द है। दो चोटी बाल बनाना, आँखों में काजल लगाना, बालों में गजरा सँवारना, घर को साफ सुथरा रखना, खाना बनाना, और तो और अच्छे से परोस के खिलाना मेरा नैसर्गिक गुण है माँ! तुम तो खुद एक बेटी हो यह सब गुण तुम्हारे अन्दर तो खुद ही मौजूद है फिर तुम मुझे क्यों दुनिया में आने से रोक रही हो? सोचो यदि तुम्हारी माँ तुम्हें इस दुनिया में न आने दी होती तो तुम आज जो हो क्या तुम बन पानी। पापा का घर कैसे बसता, बैंक में जॉब कौन करता, नाना के घर लाखों खुशियाँ कौन देता। होली, दीवाली, दशहरा मेरे बिना सब अधूरा है माँ! जानती हो माँ! मुझे घूमना सबसे ज्यादा पसन्द है। मैं पूरा विश्व घूमना चाहती हूँ तुम्हारे गर्भ में मैं पूरा का पूरा घूम जाती थी सोचती थी बाहरी दुनिया धूमने की आदत गर्भ में ही बना लेती हूँ। आदत रहेगी तो बाहर मुझे दिक्कत नहीं होगी। वैसे भी मैं तुम्हारे घर तो मेहमान के रूप में आ रही थी। शादी पूर्व तक तो मैं तुम्हारे साथ रहती फिर कभी-कभार आना होता वो भी तब जब मेरा पति मुझ पर एहसान करता अन्यथा ससुराल में तरस-तरस कर तुम्हारी सलामती की दुआएँ माँगती। होली के रंगों की छटा तो मैं कभी भूल नहीं सकती। जानती हो माँ! मुझे हरा रंग बहुत पसन्द है। हरे रंग की चूड़ियाँ, हरे रंग की साड़ी, हरे रंग की बिंदिया सब कुछ मैचिंग मैंचिग। मुझे कुछ भी अनमैच्ड पसन्द नहीं है। और हाँ माँ यही अनमैच्ड जो मुझे पसन्द नहीं है इसी के कारण ही मैं इस दुनिया में नहीं आ सकी। जानती हो क्यूँ? क्यों कि तुम्हे बच्चा चाहिए था और मैं सही टाइम मैच कर नहीं पायी। तुम्हे दो-तीन साल बाद बच्चा/ बच्ची चाहिए और मैं अनमैच्ड टाइम तुम्हारे गर्भ में आ गयी। मुझे जो पसन्द नहीं है वही अनमैच्ड मुझे हमेशा मिलता रहा। मेरे शौक कुछ और हैं, मुझसे कराया कुछ और जाता है। पढ़ना मुझे कुछ और है, पढ़ाया कुछ जाता है। खेलना मुझे कुछ और है, खिलाया कुछ जाता है, खाना मुझे कुछ और है, खिलाया कुछ जाता है। शादी पसन्द की कर लू तो जबरन आनर किलिंग में मुझे मार दिया जाता है। शादी आपकी पसन्द से करूँ तो मन पसन्द दूल्हा नहीं मिलता है। शराब और व्यसन से मुझे सख्त नफरत है परन्तु पूरी जिन्दगी इन्हीं व्यसन धारियों के बीच मुझे घुटना पड़ता है। दहेज की वेदी पर सदियों से मुझे ही चढ़ाया जाता रहा है। अगर किसी कारण वश विधवा हो जाऊँ तो सारा दोष मेरे ऊपर मढ़ दिया जाता है जैसे विधवा मैं जानकर बनी हूँ। हर कोई मुझे घूर के देखता है पर मुझे बुरा लगता है। सदियों से बलात्कार की शिकार होती आयी हूँ। मुझे उस अपराध की सजा दी जाती है। जिस अपराध के लिए मैं कहीं से भी दोषी नहीं हूँ। बल्कि मेरा अपराधी सरेआम घूमता है और मेरी सारी स्वतन्त्रता छीन ली जाती है। तुमसे तो जीवन भर की शिकायत है। कहती रहूँगी।

कुछ बात पापा से भी करनी है। पापा तो लेबर रूम के बाहर खड़े हैं न, मेरे मरने का इन्तजार कर रहे हैं। पर उनसे पूरी बात कहे बगैर मैं मरूँगी नहीं। माँ धीरज

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रखो। पापा! आपने तो कहा था कि 'कन्या आँगन की शोभा होती है' आपने तो अपने आँगन तक मुझे पहुँचने ही नहीं दिया। कम से कम अपना आँगन मुझे देखने तो देते। बेटी तो पापा का गुरूर होती है आप ने तो अपना गुरूर खुद तोड़ दिया। जानते हैं पापा! आपके कंधे पर चढ़कर खेलना, आपके पीठ पर बैठकर घोड़े की तरह सवारी करना, बाजार की हर चीज पर अपना हक आपके माध्यम से समझना, माँ के डाँट देने पर आपसे माँ को मनवाना, आइसक्रीम, कोल्डड्रिन्क, पिज्जा, बर्गर डोसा, इमरती खाने की जिद करना और हाँ बाइक, स्कूटी और कार चलाना सिखाने की जिद करना मुझे बहुत भाता है। पापा आप मेरे लिए मेरा रोल माडल हैं। मैं आप जैसा सोचना चाहती हूँ। आप जैसा बनना चाहती हूँ। आप जैसा दिखना चाहती हूँ। आप जैसा चाहे मैं वैसा बन के दिखा सकती हूँ। मैं आपके आँगन की शोभा आपके तीज त्योहार का हिस्सा हूँ। जानते हैं पापा! मैं आपसे इतना प्यार करती हूँ कि पूरी दुनिया एक तरफ हो जाय और दूसरी तरफ मेरे पापा और मुझे चयन को कहा जाय तो मैं पूरी दुनिया छोड़ आपका चयन करूँगी। पर आज जो पीड़ा मैं सह रही हूँ उसमें आप भी बराबर के दोषी हैं पापा। आप मेरे प्रति इतने निर्दयी कैसे हो गये। एक बात मम्मी-पापा आपसे संयुक्त भी कहना चाहूँगी कि मैं भगवान से निवेदन करूँगी कि आप जैसे सही निर्णय न लेने वाले मम्मी और पापा के बीच में हम जैसे बच्चे या बच्ची को जनम लेने के लिए न भेजें।

यह जो त्रासदी मेरे ऊपर गुजर रही है उसकी सूत्रधार दादी जी से क्या शिकायत करूँ? दादी तुम गर्भ में पल रही लाखों नहीं बल्कि करोड़ों मेरी जैसी पोतियों की दोषी हो। अगर तुम न चाहती तो न तो पापा और न ही मम्मा यह घृणित कार्य करते। दादी तुम मेरी ही नहीं पूरी नारी जाति की दुश्मन हो। तुमने नारी होते हुए भी नारी की हत्या की। भगवान तुम्हें कभी मॉफ नहीं करेगा। हाँ माफी तो मैं भी तुम्हें नहीं दूँगी क्योंकि जिसे भगवान नहीं माफ करेगा उसे मैं मॉफ करने वाली होती कौन हूँ। तुम अपनी करनी के कारण ही आज घरों से भगायी जा रही हो। तुम्हारे इन्हीं आचरण के कारण तुम्हें कोई घर में रखना नहीं चाहता। मम्मी-पापा के बीच बहुत सारी समस्याओं की जनक तुम हो। जिस समस्या पर मैं तुमसे बात कर रही हूँ अगर तुम न खाना-पीना छोड़ती तो शायद मैं इस दर्द की पीड़ा से न गुजरती। बार-बार वंश की दुहाई देकर तुमने अपनें नारी वंश का नाश किया है। किसी ने सही कहा है कि 'नारी अपनी दुश्मन स्वयं हैं।' तुम इसकी प्रत्यक्ष प्रमाण हो। तुम्हारे इसी व्यवहार के कारण समाज में लाखों वृद्धाआश्रम बन रहे हैं जिनमें तुम्हारी जैसी औरतें एकान्तवास कर रही हैं। सामाजिक परिस्थितियों को समझने का प्रयास करो। दुनिया बदल रही है तो तुम भी बदलो। और हाँ। बहुत वंश, वंश की बात करती हो तुम, अपने पीछे दस वंश का नाम तो जरा बताओ जिसका वंश तुम चला रही हो। इस संसार में ऐसा प्राणी कम ही हैं जो अपने दस पूर्वजों का नाम भलि-भाँति जानते हों। कृपा कर दादी इसकी दुहाई देकर 'कन्या भूण हत्या मत करवाओ' वरना तुम्हें कोई प्यार नहीं करेगा। पता नहीं क्यूँ दुनिया में आने के बाद पोतियाँ दादी की प्यारी बन जाती है। हाँ सारी दादियाँ तुम्हारी जैसी नहीं है। बहुत सी दादियाँ बेटे और बेटी में फर्क नहीं करतीं उन्हीं की पोतियाँ उन्हें प्यार करती हैं। आक्रामक पीड़ा की मार से मुझे अब धीरे-धीरे सब भूल ने लगा है पर एक व्यक्ति जो ये सब कुछ होते मौन देख रहा है उससे बात किये बिना हे ईश्वर मुझे मृत घोषित मत करना और वह सख्स हैं दादा जी।

दादा जी! आप तो परिवार के मुखिया हैं और मैंने सुना है कि परिवार का मुखिया जो परिवार में चाहता है। होता वही है। जानते हैं दादा जी! मुझे परिवार में सबसे ज्यादा कौन प्रिय है? आप। क्योंकि आप मुझे सबसे ज्यादा प्यार करते हैं। आपके कन्धे पर बैठना, आपके चश्मे को चुरा देना, आपके लाख मना करने पर आप से अठखेलियाँ करना, आपसे जबरदस्ती जलेबी खरीदवाना, आइसक्रीम खरीदवाना, बाजार घुमाने की जिद करना,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुझे अच्छा लगता है। आपके जेब में पैसे रहते हैं पर आप मुझे कोई चीज जल्दी दिलाते नही है। ऐसा क्यूँ। मेरे जिद करने पर अगर आप मान भी गये तो पैसा छुट्टा नही है का बहाना बनाना सबसे अच्छा आपको आता है। आपसे पैसा निकलवाना मुझे आता है क्योंकि जब मैं रोने लगती हूँ तो आप न चाहते हुए भी मुझे सामान दिला ही देते हो। पर आज तो मैं मर रही हूँ तो आप का दिल क्यूँ नहीं पिघला अगर आप सही समय पर सही निर्णय लेते और अपने अधिकार का सही प्रयोग करते दादा जी! तो आज मैं दुनिया से रूख्सत न होती। मेरे नाटकीय तरह से रोने पर भी आप पिघल जाते थे पर आज मेरे ऊपर दर्द का पहाड़ टूट रहा है पर आप शान्त कैसे रह गये।

दादा जी! आप तो पापा को, मम्मी को दादी को, सबको डाँट सकते थे पर आपने ऐसा नहीं किया। किस अपराध का बदला लिया आपने हम से लिया यह मेरी समझ में नहीं आया। आपने अपनी मौन सहमति देकर बड़ा अपराध किया है।

हाँ मरते-मरते एक अन्तिम व्यक्ति से भी अपनी अनकही कहके दुनिया से विदा लूँगी। वो अन्तिम व्यक्ति हैं डॉ. साहिबा। डॉ. साहब आप तो स्वयं एक नारी हैं। दो पुत्रियों की माँ भी हैं। थोड़े से पैसों के लिए आपने पूरी नारी जाति को संसार से खत्म करने का वीणा उठा रखा हैं। जरा सोचिये! अगर आपके माँ-बाप ने आपको जन्म न दिया होता तो क्या आप इस दुनिया में आती? कहा जाता है- 'डॉ. भगवान का दूसरा रूप है।' आपसे मेरा विनम्र कराह भरा अन्तिम निवेदन है कि लालच छोड़ अपनी जाति की हत्या न करें, स्त्री देश की समाज की, संसार की, सबसे बड़ी नेमत है उसकी हत्या करके अपने कुल का विनाश मत करें। हो सके तो भगवान द्वारा दी गयी नन्ही सी जान जिसे कन्या के रूप में जन्म लेकर संसार में सृष्टि का दायित्व मिलने वाला है उसे संसार में आने दे और संसार को उसके नारित्व गुण से सिंचित करने दें।

जीवन के अन्तिम श्वास के साथ मैंने अपनी अनकही हर कन्या भ्रूण के प्रतिनिधि के रूप में कह दी। अच्छा लगे तो मेरी कही सभी मानना और अच्छा न लगे तो अनकही समझ सामाजिक और पारिवारिक रिश्तों की पुन: पड़ताल करना। अब मेरे अंग-अंग के टुकड़े-टुकड़े होने ही वाले हैं इसलिए अंतिम बेहद दर्द के साथ कराह भरा- 'अलविदा!'

एबार्शन के बाद आशा धीरे-धीरे स्वस्थ हो गयी परन्तु उसके मन मस्तिष्क में गर्भ में पल रही कन्या की अनकही बातें धुमती रहती। राकेश भी काफी लज्जित महसूस करते। समय के साथ दादा और दादी भी अपराध बोध सहित इस दुनिया से चले गये। डॉ. रश्मि ने भी कभी 'कन्या भ्रूण हत्या' न करने की कसम खा ली और उन्होंने इसे अपने क्लिनिक के बाहर बोर्ड पर लिखवा दिया कि इस क्लिनिक में कन्या भ्रूण का एबार्शन नहीं किया जाता। परन्तु कन्या भ्रूण की वह बात भगवान ने सुन ली कि आप जैसे मम्मी-पापा को भगवान कभी भी संतान सुख न दे। राकेश और आशा के लाख चाहने पर भी फिर उन्हें कभी संतान सुख प्राप्त नहीं हुआ।

संपर्क : 466 राहुल नगर (पण्डित हरिबंश मिश्र कैम्पस) मड़या सदर, आजमगढ़ (उ.प्र.) 276001, मो. 09415082614

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सुरेन्द्र नायक

गाँव की माटी

'चर्र-चर्र।' पुलिस जीप अचानक तेजी से ब्रेक लगने से चिचियाई।

तिवारी जी का ध्यान टूटा। सर्दी का महीना था। तिवारी जी अपने चबूतरा पर बैठकर सर्दी की कुनकुनी धूप का आनन्द ले रहे थे। तिवारी जी के माथे पर बल पड़ गए। पुलिस। उनके दरवाजे। जरूर हरी ने उसके खिलाफ थाने में कोई फर्जी रिपोर्ट लिखाई होगी।

'हरी पंडित जी का मकान कौन सा है?' ड्राइवर ने जीप की खिड़की से अपना सिर बाहर निकालकर तिवारी जी से प्रश्न किया।

तिवारी जी का भय कुछ कम हुआ। तो पुलिस हरी के लिए आई है। वो, सामने की लाइन में, तीसरा मकान, कत्थई किवाड़ों वाला।'

हूँ।' जीप ड्राइवर ने हुंकारी भरी।

'लेकिन बात क्या है, हवलदार साहब? तिवारी जी ने भयमिश्रित उत्सुकतावश दबी जुबान से प्रश्न किया।

हरी पंडित जी का ट्रक से एक्सीडेंट हो गया है। थाना पहुँचकर लाश की शिनाख्त करनी है।' ड्राइविंग सीट के बगल में बैठे सब-इन्सपेक्टर ने ठंडी आवाज में उत्तर दिया।

तिवारी जी के अंदर का इंसान जागा।

'इन्स्पेक्टर साहब, हरी के घर में सिर्फ उसकी पत्नी और उसका तीन वर्ष का बेटा है। उन्हें सँभालने वाला कोई नहीं है। उन्हें आप सिर्फ अस्पताल चलने के लिए कहिएगा। तब तक मैं मुहल्ले के तीन-चार आदमियों को बुलाए लेता हूँ। हम लोग आपके साथ ही चलेंगे।

'ठीक है।' सब इन्स्पेक्टर ने अपनी स्वीकृति प्रदान की।

इस दुखद समाचार ने तिवारी जी का मस्तिष्क सुन्न कर दिया। वह भूल ही गए कि हरी के परिवार से उनकी खानदानी दुश्मनी है और उनका हरी से जमीन-जायदाद का मुकदमा भी चल रहा है।

पुलिस जीप स्टार्ट होते ही तिवारी जी अपने घर के अंदर की ओर लपके। इसी बीच उनकी पत्नी भी दरवाजे के पास आ चुकी थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'पुलिस जीप क्यों आई थी?' तिवारी जी की पत्नी घबराई हुई लग रही थी।

'हरी की ट्रक दुर्घटना से मृत्यु हो गई है। घर में जो भी पैसे पड़े हों, उठा लो और तुरन्त चप्पल पहन कर बाहर आ जाओ हरी की पत्नी को सँभालने के लिए कोई न कोई औरत तो साथ में चाहिए ही।' तिवारी जी ने उत्तर दिया।

इसी मध्य मोहल्ले के आठ-दस व्यक्ति अपने अपने घरों से निकलकर तिवारी जी के दरवाजे पर आ चुके थे। तिवारी जी के कदम तेजी से हरी के मकान की ओर बढ़ चले। अन्य व्यक्ति तिवारी जी के पीछे दौड़ पड़े।

'क्या हो गया, काका? एक युवक ने तिवारी जी के बगल में पहुँचकर प्रश्न किया। ट्रक दुर्घटना में हरी की मौत हो गई है। तुम तीन-चार लड़के तुरंत कपड़े पहन कर आ जाओ। थाने में लाश की शिनाख्त करके पोस्ट मार्टम कराना पड़ेगा। और हाँ, घर में अगर कुछ पैसे पड़े हों तो साथ में ले लेना।' तिवारी जी ने चंद शब्दों में ही घटना और उस पर अपनी प्रतिक्रिया स्पष्ट कर दी।

खट, खट, खट एक सिपाही ने हरी पंडित जी का दरवाजा जोर से खटखटाया। 'कौन है? खपरैल वाले मकान से एक क्षीण नारी स्वर उभरा।

'पुलिस'

हरी की पत्नी को साँप सूँघ गया। उसने घबराकर भड़ाक से दरवाजा खोला।

'क्या बात है?' हरी की पत्नी ने अपने चेहरे पर हल्का सा घूँघट खींचते हुए पूछा।

'हरी पंडित जी का एक्सीडेंट हो गया है। आपको हमारे साथ तुरंत अस्पताल चलना है।' 'अकेले? मुझे? 'हरी की पत्नी किसी अनहोनी की आशंका से काँप गई।

'घबराइए नहीं। सामने जो बुजुर्ग चले आ रहे हैं, वह अपने साथ चलेंगे।' सिपाही ने तिवारी जी की ओर अँगुली से इशारा करते हुए हरी की पत्नी को ढाढस बँधाया।

हरी की पत्नी को अब न तो चप्पल पहनने की सुध थी और न घर का ताला लगाने की। वह बिना आगे-पीछे सोचे अपने तीन वर्षीय पुत्र को अपनी गोद में लेकर जीप में पीछे की सीट पर बैठ गई।

हरी की पत्नी के जीप में सवार होते ही तिवारी जी, उनकी पत्नी तथा मुहल्ले के तीन नव युवक भी बिजली की फुर्ती से पुलिस जीप में पीछे सवार हो गए तिवारी जी की पत्नी ठीक हरी की पत्नी के बगल में बैठीं।

जीप अपने रास्ते पर वापस दौड़ पड़ी। जीप के अंदर पूरी तरह खामोशी छाई हुई थी। पता नहीं उन्हें कितनी चोट आई होगी? कितने दिन इलाज चलेगा? इलाज का पैसा कहाँ से आयेगा? कहीं कुछ...। नहीं ऐसा नहीं हो सकता। वह अंदर तक हिल गई। जीप के अंदर बैठे लोगों की खामोशी उसकी चिन्ता को गहरा रही थी। जीप की घटती बढ़ती गूँ गूँ की आवाज जारी थी मगर वह आवाज तिवारी जी के मन में कौंधते सन्नाटे को चीर पाने में असफल थी।

जीप को थाने के अंदर मुड़ते देखकर हरी की पत्नी चौंकी। उससे तो अस्पताल चलने के लिए कहा गया था। तो क्या...?

जीप के रुकते ही सभी लोग फुर्ती से, जीप से नीचे उतरे तिवारी जी की पत्नी ने हरी की पत्नी को जीप से नीचे उतरने के लिए सहारा दिया।

'उस ट्रेक्टर ट्राली के पीछे चलो।' सभी के जीप से नीचे उतरते ही एक सिपाही ने पास ही खड़ी ट्रेक्टर ट्राली की ओर अँगुली से इशारा किया।

ट्रेक्टर ट्राली में हरी का क्षत-विक्षत शव पड़ा हुआ था। आज सुबह हरी यही नीली धारी वाली शर्ट पहन कर ही तो घर से निकला था। शव को पहचानते ही हरी की पत्नी गश खाकर गिर पड़ी। इसके साथ ही संग आए लोगों के धैर्य और साहस की परीक्षा प्रारम्भ हो गई। सभी स्तब्ध थे शव की पहचान होते ही सभी तरह की कल्पनाओं एवं संभावनाओं पर स्वत: पूर्ण विराम लग

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गया।

'तुम लोग बहू को सँभालो। तब तक मैं दरोगा जी से जल्दी से जल्दी पोस्ट मार्टम कराने की बात करता हूँ।' तिवारी जी का स्वर स्थिर था।

तिवारी जी समय की गंभीरता और भविष्य के संकेत अच्छी तरह से समझ रहे थे वह अपने मन-मस्तिष्क को जितना अधिक नियंत्रित करने का प्रयास करने का प्रयास कर रहे थे, वह उतना ही अधिक अनियंत्रित हो रहे थे उनकी कोशिश थी कि इस मौके पर वह सबके सामने अपने आपको कम से कम बाह्यत: तो स्थिर चित्त प्रदर्शित कर ही सकें। अगर वह स्वयं अस्थिर हो जायेंगे तो फिर साथ आए लोगों को कौन सँभालेगा?

तिवारी जी का शरीर दिमाग का साथ नहीं दे रहा था। उन्हें लग रहा था कि जैसे उनके पैर पचास-पचास किलो के हो गए हों। अपने बूढ़े शिथिल शरीर को घसीटते हुए वह जैसे-तैसे थानाध्यक्ष के पास पहुँच॥

'दरोगा जी, नमस्कार।'

'जी' कहते हुए तिवारी जी थानाध्यक्ष के सामने वाली कुर्सी पर बैठ गए।

थानाध्यक्ष पुन: सिर झुकाकर अपने सामने पड़ी फाइलों में खो गया।

'दरोगा जी, अब मुझे क्या करना है? कुछ देर प्रतीक्षा करने के बाद तिवारी जी ने थानाध्यक्ष का ध्यान अपने प्रकरण की ओर आकर्षित करने का प्रयास किया।

'बाबा, मुंशी जी रिपोर्ट लिख रहे हैं, उन्हें रिपोर्ट लिखाई के दो सौ रुपये दे देना। तुम्हें कल रिपोर्ट की नकल मिल जायेगी।'

'और सर, पोस्ट मार्टम?'

वो तो कल ही हो पायेगा।

सर अगर आज ही हो जाता तो आपकी बड़ी मेहरबानी होती।

'देखो बाबा यह हमारा काम नहीं है, डॉक्टर का काम है। हम लोग एक-दूसरे के काम में हस्तक्षेप नहीं करते। एक बात और है बाबा, मुझे आपके गाँव की पूरी रिपोर्ट मिल गई है। हरी के घर में कोई जिम्मेवार व्यक्ति है नहीं। आप लोगों की भी आर्थिक स्थिति अच्छी नहीं है। ऐसा काम करो जिसमें आप लोगों का कम से कम पैसा खर्च हो। अब शाम तो ढल ही रही है। आप अगर आज अभी हाल पोस्ट मार्टम करायेंगे तो डाक्टर आपसे कम से कम पाँच हजार रुपये माँगेगा। यही काम कल सुबह एक हजार रुपये में हो जायेगा। वैसे भी रात में अंतिम संस्कार तो किया नहीं जाता है।'

'ठीक है, सर।

बातचीत के समापन के पश्चात् थानाध्यक्ष पुन: फाइलें पलटने लग। तिवारी जी अभी तक वहीं बैठे थे। पन्द्रह -बीस मिनट बाद थानाध्यक्ष का ध्यान टूटा।

'बाबा, कुछ और पूछना है?'

'नहीं सर।'

'ठीक है बाबा, अब आप एक काम करें। आप अपने साथ सिर्फ एक आदमी पोस्ट मार्टम तक के लिए रोक लें और बाकी लोगों को गाँव वापिस भेज दें। होश आते ही मृतक की पत्नी रो रोकर आसमान सिर पर उठा लेगी। थाने में यह सब नहीं चल सकता।

'जी सर, लेकिन'

'लेकिन क्या?'

'अंतिम बस का समय तो निकल गया है।'

'बाबा, एक काम करिए। आप जीप में पाँच लीटर डीजल डलवा दें। मैं सबको पुलिस जीप से गाँव भिजवा दूँगा।'

'जी सर।'

तिवारी जी कमरा से बाहर जाने के लिए उठ खड़े हुए, तभी थानाध्यक्ष ने तिवारी जी को टोका।

'बाबा, आप एक बात और समझ लें। ट्रैक्टर वाले को थाने तक लाश लाने के पाँच सौ रुपया तो आपको देने ही हैं। मैं ट्रैक्टर वाले से कह दूँगा। वह कल पोस्टमार्टम के बाद लाश आपके गाँव तक पहुँचा देगा। आप उसे सब मिलाकर सिर्फ एक हजार रुपया दे देना। ट्रैक्टर वाले को अभी छोड़ देने पर आपको कम से कम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तीन-चार हजार रुपये खर्च करने पड़ जायेंगे।' 'ठीक है सर' तिवारी जी ने थानाध्यक्ष की हर सलाह को स्वीकार कर लिया।

तिवारी जी विस्मित थे कि भारतीय पुलिस में ऐसा भला थानाध्यक्ष भी है। इस थानाध्यक्ष ने उससे पुलिसिया भाषा में कोई बात नहीं की अपितु उसके सामने मुँह खोले खड़ी हर समस्या का सरलतम समाधान सुझा दिया। हो सकता है कि थानाध्यक्ष के व्यक्तिगत जीवन में ऐसी ही कोई दुर्घटना जुड़ी हो जिसने उसकी मन:स्थिति को झकझोर दिया और मन:स्थिति के इसी विचलन के कारण थानाध्यक्ष महोदय अचेतन मस्तिष्क के दबाव में ऐसी उदारता का परिचय दे रहे हों अन्यथा तो पुलिस विभाग का मानवीय संवेदना से दूर-दूर तक कोई रिश्ता नहीं होता है। पुलिस विभाग में मानवता की तलाश तो कुछ-कुछ वैसी ही है जैसे चील के घोंसले में माँस की तलाश।

तिवारी जी की विचार शृंखला को फिर एक झटका लगा। अब लेन-देन की स्थिति तो स्पष्ट हो गई है। अब उसे अपनी पत्नी और साथ आए युवकों से जानकारी लेनी चाहिए कि कौन अपने साथ कितने पैसे का इंतजाम करके लाया है। सरकारी परम्परा के अल्पतम तयशुदा सुविधा शुल्क तो देने ही हैं। थानाध्यक्ष द्वारा अपना हिस्सा छोड़ देने से काफी बचत तो हो ही गई है। अब वह बेचारा दूसरों के हिस्सों में तो हस्तक्षेप कर नहीं सकता। वह हस्तक्षेप करे भी तो कैसे? सरकारी मशीनरी की गिरारियाँ आपस में एक-दूसरे से फँसी रहती हैं। हर गिरारी को चिकनाहट चाहिए। आम आदमी किसी भी गिरारी के दांतों में फँसे उसे तो पिसना ही है।

तिवारी जी की विचार शृंखला को फिर एक झटका लगा। अब लेन-देन की स्थिति तो स्पष्ट हो गई है। अब उसे अपनी पत्नी और साथ आए युवकों से जानकारी लेनी चाहिए कि कौन अपने साथ कितने पैसे का इंतजाम करके लाया है। सरकारी परम्परा के अल्पतम तयशुदा सुविधा शुल्क तो देने ही हैं। थानाध्यक्ष द्वारा अपना हिस्सा छोड़ देने से काफी बचत तो हो ही गई है। अब वह बेचारा दूसरों के हिस्सों में तो हस्तक्षेप कर नहीं सकता। वह हस्तक्षेप करे भी तो कैसे? सरकारी मशीनरी की गिरारियाँ आपस में एक-दूसरे से फँसी रहती हैं। हर गिरारी को चिकनाहट चाहिए। आम आदमी किसी भी गिरारी के दांतों में फँसे उसे तो पिसना ही है। वह व्यापारी ही क्या जो रेत से तेल न निकाल सके और वह सरकारी मशीनरी ही क्या जो लाश से पैसा न कमा सके?

समय तो बीतता ही है, अच्छा या बुरा। तिवारी जी एवं पड़ोसियों के सहयोग से पोस्टमार्टम, अन्त्येष्टि, प्रेतकर्म एवं त्रयोदशी अपने नियत समय पर किसी तरह निपट गए। त्रयोदशी के अगले दिन तक हरी के सभी रिश्तेदार भी वापस लौट गए।

अब हरी की पत्नी के सामने था, तीन साल का बेटा, वैधव्य जीवन, आजीविका का प्रश्न एवं भाँय-भाँय करता सन्नाटा। तेरह दिन तक चलने वाला दुखान्त नाटक अपने समापन पर कई अनसुलझे महा प्रश्न छोड़ गया। वह जब भी कुछ सोचने का प्रयास करती, उसके मस्तिष्क पटल पर एक विराट शून्य पसर जाता। अकेली, गरीब, युवा विधवा औरत ऐसे में करे भी तो क्या?

हरी की पत्नी अपने पति की असामयिक मृत्यु से लेकर अब तक के अंतराल पर बार-बार दृष्टिपात करती। किसने क्या कहा? किसने क्या प्रतिक्रिया दी? कौन तटस्थ रहा? अब धीमे-धीमे उसे सब कुछ याद आने लगा है। उसके किसी भी रिश्तेदार और यहाँ तक कि उसके पिता एवं भाई ने भी भूलवश या औपचारिकतावश उसे किसी भी तरह की सहायता का प्रस्ताव या आश्वासन नहीं दिया है। दुर्घटना की सूचना के समय से लेकर आज तक उसे जो भी सहायता मिली है वह मुहल्ले और गाँव वालों से ही मिली है। उसे अच्छी तरह अनुमान है कि विपत्ति के इस अंतराल में उसकी सबसे अधिक सहायता उसके खानदानी दुश्मन तिवारी जी ने ही की है। कहीं उनकी नजर उसकी विवादित भूमि पर तो नहीं है? कहीं खर्चे के एवज में वह उस पर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मुकदमे में समझौता करने का दबाव न बनाने लगें? अपने दुश्मन पर कोई यूँ ही तो पैसे लुटाने से रहा।

हरी की पत्नी चिंतित अवश्य थी फिर भी उसे किसी से कोई शिकायत न थी। गरीब के रिश्तेदार, इष्ट मित्र एवं शुभचिंतक भी तो गरीब ही होंगे। जब स्वयं का पेट भूखा हो तो कोई दूसरों की मुसीबतों के बारे में सोचे भी तो कैसे?

तिवारी जी का मन कई दिनों से काफी अशान्त था। उनकी पत्नी ने उनसे कई बार उनकी बेचैनी का कारण पूछा मगर वह हर बार टाल गए। उनकी बेचैनी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। अब विवादित जमीन के मुकदमे की अगली तारीख के लिए तीन-चार दिन ही तो रह गए हैं। जिस दिन हरी का एक्सीडेंट हुआ था वह इसी मुकदमे की पैरवी के लिए वकील के पास सलाह लेने शहर गया था। अब उसकी तरफ से पैरवी कैसे होगी? बेचारी हरी की पत्नी कोर्ट-कचहरी के झमेले क्या जाने? अभी तो उस बेचारी को संभवत: अगली पेशी का भी पता नहीं होगा।

तिवारी जी की पत्नी भी मन ही मन बेचैन थी। वह हरी की पत्नी की तकलीफ को अधिक गहराई से महसूस कर रही थी। आखिर औरत थी न। एक दिन साहस करके उसने एकांत पाते ही तिवारी जी के सामने अपनी बात दो टूक शब्दों में रख दी।

'देखिए, हरी तो अब रहा नहीं। अब मुकदमा किस से लड़ोगे- हरी की पत्नी से या उसके बेटे से? अब तो उस बेचारे के घर में कोई मुकदमे की पैरवी करने वाला भी नहीं है। हरी के परिवार के पास कुल वहीं पाँच बीघा जमीन है। क्या आपने कभी सोचा है कि अगर वह जमीन भी हम लोग मुकदमे में जीत लेंगे तो वे माँ-बेटे खायेंगे क्या? क्या ऐसी स्थिति में माँ-बेटे के सामने आत्म हत्या के अलावा भी कोई विकल्प बचेगा?'

'तुम ठीक कह रही हो लेकिन क्या अपने बेटे इस बात के लिए राजी हो जायेंगे?'

'अगर आप तैयार हों तो मैं बेटों को मना लूँगी वे मेरे बेटे हैं राक्षस नहीं।'

तिवारी जी का चेहरा सहसा फूल सा खिल गया। तो इतना संवेदनशील है उसकी पत्नी का हृदय? उसने तो तिवारी जी के मन की गुत्थी पलों में सुलझा दी।

देखते-देखते मुकदमे की पैरवी का दिन भी आ गया। शाम ढलते-ढलते यह अफवाह पूरे गाँव में आग की तरह फैल गई कि तिवारी जी ने हरी के परिवार के खिलाफ चल रहा जमीन का मुकदमा वापस ले लिया है। पूरा गाँव भौंचक्का था कि खानदानी रंजिश के बावजूद तिवारी जी ने अचानक यह क्या किया। हरी के परिवार की जमीन हड़पने के लिए उनके पास यही तो सुनहरा मौका था।

उड़ते-उड़ते यह अफवाह देर रात हरी की पत्नी तक भी पहुँच गई। उसकी आँखों में अब नींद कहाँ? यह कैसी अफवाह? तिवारी परिवार ऐसा क्यों करेगा?

दूसरे दिन सुबह तड़के ही हरी की पत्नी तिवारी जी के घर पहुँच गई। नित्य कर्म से निवृत्त होकर तिवारी जी उस वक्त अपने घर के बाहर चबूतरे पर चटाई बिछाए बैठे थे और चाय आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। हरी की पत्नी एक बार हल्के से कुंडी खटखटाकर घर के अंदर तेजी से प्रवेश कर गई। कुंडी की आहट पाकर तिवारी जी की पत्नी बाहर वाली दालान में निकल आई। तिवारी जी की पत्नी ने सामने खड़ी सफेद धोती में लिपटी औरत का अनुमानत: पहचान लिया।

'बहू, तुम?'

'हाँ, काकी' हरी की पत्नी ने अपने सिर का घूँघट उठाया और तिवारी जी की पत्नी के पैर छूने के लिए झुकी।

तिवारिन काकी ने हरी की पत्नी को पैर तक झुकने से पहले ही अपनी बाँहों में थाम लिया और गले लगा लिया। काकी की हिचकियाँ बँध गई। हरी की पत्नी की भी हिचकियाँ बँध गईं। अब कौन किसको दिलासा दिलाए? कुछ देर बाद रोने का प्रवाह कुछ कम

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

हुआ और दोनों स्त्रियाँ आलिंगन मुक्त हुईं। दोनों ने धोती के पल्लू से अपने आँसू पोंछने का प्रयास किया। दोनों की सुबकियाँ अभी भी जारी थीं। एक स्त्री की व्यथा दूसरी स्त्री बिना कहे भी महसूस कर रही थी।

'बहू, विवाह के बाद पहली बार घर आई हो, वो भी इस लिबास में।' काकी का अस्पष्ट स्फुट स्वर मुखरित हुआ।

'काकी, यह सब भाग्य का खेल है।'

'बहू, अब मैं तुम्हें क्या आशीर्वाद दूँ? भाग्य ने तो हमसे सब कुछ छीन लिया।' अपनी बात पूरी करते-करते काकी हिचकियाँ लेकर फिर से रोने लगीं।

'धीरज रखो, काकी' हरी की पत्नी ने अपने आपको नियंत्रित रखने का प्रयास करते हुए काकी की दोनों हथेलियाँ अपनी हथेलियों में ले लीं।

कुछ देर पश्चात काकी थोड़ा सा प्रकृतिस्थ हुई। अब दोनों ओर से चुप्पी थी। ऐसे में एक स्त्री दूसरी स्त्री से कहे भी तो क्या?

कुछ देर की खामोशी के बाद हरी की पत्नी ने झिझकते हुए खामोशी तोड़ी। 'काकी एक बात पूछनी थी।'

'पूछो'

'काकी, कल से गाँव में जो अफवाह उड़ रही है, क्या वह सही है?'

'कैसी अफवाह?' काकी सब कुछ समझकर भी अनजान बन गईं। 'यही कि काका ने जमीन का मुकदमा वापस ले लिया है।'

'हाँ बहू, यह खबर तो सही है।'

'लेकिन क्यों? मुझे इतने बड़े अहसान के तले दबाकर उन्हें क्या मिला?' हरी की पत्नी की सुबकियाँ फिर बढ़ गईं।

तिवारी जी किवाड़ की ओर से दोनों स्त्रियों का वार्तालाप काफी देर से सुन रहे थे। उन्होंने किवाड़ खड़काकर अपनी उपस्थिति का संकेत दिया। दोनों स्त्रियों का ध्यान दरवाजे पर हुई आहट की ओर आकृष्ट हुआ। तिवारी जी की बीच-बीच में विराम लेती भाव विह्वल वाणी फूट पड़ी।

''मैं और क्या करता बहूँ? हरी तो हमें बीच मझधार में छोड़कर चला गया। अब किससे रंजिश? किससे मलाल? वैसे भी यह गाँव की माटी थी, गाँव की बहू को सौंप दी। इसमें अहसान कैसा?'

संपर्क : सुरेन्द्र नायक, प्रताप नगर, कोंच,
जिला जालौन (उ.प्र.) 285205

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उषा जायसवाल

गोल्डी

'आप लोग कहाँ जा रहे हैं।'

'हम लोग नागपुर जा रहे हैं।'

'किस ट्रेन से।'

'यही जो इस प्लेटफार्म पर आने वाली है।'

'एक्सक्यूज मी मैंने आपको डिस्टर्ब किया।'

'नहीं ऐसी कोई बात नहीं।'

कहते-कहते मैंने देखा कि ट्रेन प्लेटफार्म नम्बर एक पर आ रही थी। मेरा कुली भागता-दौड़ता आया और सारा सामान उठाकर तेज कदमों से आती हुई ट्रेन की दिशा के विपरीत तेज कदमों से बढ़ने लगा और मुझसे अपेक्षा करने लगा कि मैं भी उसके साथ-साथ तेजी से चलूँ। ताकि यथाशीघ्र आरक्षित डिब्बे में प्रवेश कर सकूँ। क्योंकि ट्रेन तो सिर्फ तीन मिनट रुकने वाली थी। उस आपा-धापी में हम लोग कुली के पीछे-पीछे अपनी बोगी में बढ़ते चले गये। हुआ यह कि बड़ी संख्या क्रम वाले गेट से हमने प्रवेश किया। जिससे प्रारंभिक संख्या तक की बर्थ पर पहुँचने में एक तरह से पूरे कंपार्टमेंट की यात्रा हो गयी। फिर कहीं हम लोग अपनी निर्धारित बर्थ तक आ सके।
लेकिन यह क्या हम लोग एक सुखद आश्चर्य में डूब गए। देखा कि संयोग से वही चेहरा हमें सामने मिला जिसे हम लोग प्लेटफार्म पर छोड़ कर आए थे। इतना ही नहीं वह हमारी बर्थ के सन्मुख बैठा सा मिला। जो हमारे लिए एक सुखद संयोग का विषय था। अब संयोग को क्या कहा जाय। यह तो मात्र जगत में घटने वाली घटनाओं की श्रृंखला की ऐसी कड़ी होती है जिसमें अकस्मात हम जुड़ जाते हैं और उसके अंश बन जाते हैं। कितनी भी तरह से विचार करें कि आखिर संयोग होता क्यों है और कैसे हमारे जीवन में घटता है। इस गुत्थी को सुलझाना असंभव तो नहीं है किन्तु कठिन अवश्य है। संयोग विभिन्न इकाइयों का एकीकरण है जो एक-दूसरे से उसी प्रकार आबद्ध हो जाते हैं जैसे माला के विभिन्न मन के एक ही सूत्र में गुंथ जाते हैं। संयोग ने हम लोगों को सूत्रबद्ध कर एक ही कम्पार्टमेण्ट की बर्थ पर आमने-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सामने बैठा दिया था।

जब काली घटा सी स्थिति घिर आयी थी तो उनका बरसना देर-सबेर तय था। वह जर्जरित काया जो अब तक लगभग खण्डहर में परिवर्तित हो चुकी थी उसे विखण्डित होने से आखिर कौन बचा सकता था। किन्तु उसमें बुलन्दियों की अनुगूँज की वह प्रतिध्वनि थी जो रह-रह कर संकेत दे रही थी कि यह काया कभी माया की गगनचुम्बी मीनार रही होगी। अब जिसकी झिलमिल झलक भर शेष है। उनके वस्त्राभूषण, सलवार सूट, चुन्नी के सोवर कलर जो आँखों को सुखद लग रहे थे। गले में मंगलसूत्र की माला, कलाई में आकर्षक डिजाइन की घड़ी, सोने की चार-चार चूड़ियाँ, बाब कट बाल सलीके से सिर पर शोभित हो रहे थे। अपने प्राकृतिक स्वरूप में बाल काले-सफेद, गंगा-यमुना संगम का सान्निद्ध प्रगट कर रहे थे। कुल मिलाकर समूची दृश्यावलि स्पष्ट कर रही थी कि सामने बैठी महिला भव्यता की प्रतिमूर्ति तो निश्चय ही होंगी। मेरे चिन्तन चक्र को एक झटका देकर रोकते हुए उन्होंने कहा,

'वैसे तो मेरी बर्थ ऊपर की है किन्तु आपको यदि कोई असुविधा न हो तो मैं नीचे ही रहूँ...।'

'हाँ कोई बात नहीं। मैं ही खाने-पीने के बाद ऊपर चला जाऊँगा। मुझे कोई आपत्ति नहीं है।' मेरे पति ने कहा।

'थैंक्स आप लोग कितने अच्छे हैं।' यात्रा पर निकलने के पहले मैंने क्राइस्ट से प्रेयर किया था कि मेरी जर्नी में अच्छे लोग मिलें जिसे उसने सुन लिया और आप जैसे लोगों का मुझे साथ दिया। मैं क्रिश्चियन हूँ...। पहले मैं रेलवे हास्पिटल दिल्ली में मेट्रन थी... अब मैं रिटायर हो गयी हूँ। हास्पिटल कैम्पस में मेरी एक स्टैच्यू लगी है क्योंकि मैं हास्पिटल की फाउण्डर मेम्बर थी। कभी आप उधर जायें तो देख सकते हैं। स्टैच्यू के नीचे मेरा नाम मिस गोल्डी खुदा हुआ है।'

मैं उनके इस ऐतिहासिक वर्णन से अभिभूत हो गयी और अपने पूर्व के उनके प्रति किए गए अनुमान से तुलना की तो पाया कि सचमुच वह भद्र महिला अर्थात् गोल्डी का जीवन कितना गोल्डन है जिसकी आभा मैं देख सकती हूँ। मुझे स्पष्ट दिखायी दे रहा था क्रिश्चियन की शालीनता-साधुता, पढ़े-लिखे परिवार की सौम्यता-सुगढ़ता, सर्विस क्लास का संयम-सलीका, समय की पाबन्दी, झलझला रही थी। इन सबसे परे जिस क्षण से मुझे उनके मेट्रन प्रोफेशन के संबंध में जानकारी मिली तभी से स्पष्ट प्रतीत होने लगा कि सचमुच ही वे मानव सेवा की ही प्रतिमूर्ति हैं। हास्पिटल में चारों ओर रोगियों से घिरी सेवामयी प्राणी को तो ममता की मूर्ति ही बनकर रहना होगा। यही तो नर्सिंग सर्विस की पवित्रता है जो नाइटएंगल-लेडी ऑफ द लैम्प के स्त्रोत से प्रवाहित होकर अजस्र रूप में गंगा की धारा की भाँति इस पुनीत सेवा में कलकल निनादित होती है। बहुत कुछ यही स्वरूप मुझे मिस गोल्डी की मुखाकृति से प्रगट हो रहा था। नर्सिंग सेवा भाव में गंगा की भाँति कितना भी प्रदूषण आया हो किन्तु उसकी पवित्रता के भाव को जिस प्रकार गंगा अपने में धारण किए हुए है उसी प्रकार नर्सिंग सेवा में भी अद्भुत समर्पण, त्याग, ममत्व भरा हुआ है जिसका प्रमाण मिस गोल्डी द्वारा बतायी गयी रेलवे हास्पिटल में स्थापित उनकी प्रतिमा, उनके सेवा समर्पण को प्रमाणित कर रही थी। बैठे-बैठे मैं इन्हीं विचारों से अभिभूत थी। तभी उन्होंने बात का क्रम जारी करते हुए कहा,

'आप लोग हमें बहुत अच्छे लग रहे हैं। इसलिए मैं आपसे राय लेना चाहती हूँ कि मुझे क्या करना चाहिए। मैं अकेली हूँ। गृहस्थी बसायी नहीं। अब बुढ़ापा आ रहा है। मैं बचा हुआ जीवन किसके साथ बिताऊँ। वैसे रिटायर होने के बाद मैं अपने फ्रेण्ड के साथ दिल्ली में रही। मैं उनकी पेइंग गेस्ट थी। तीन हजार रुपए हर महीने देती थी और वहाँ की जिंदगी तो ठीक-ठाक चलती रही। लेकिन मेरा एक भतीजा जो नागपुर में रहता है। वह मेरे बहुत पीछे पड़ गया कि आप दिल्ली छोड़कर मेरे साथ रहो। जिन्दगी अच्छे से बीतेगी। उसकी बातों में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं आ गयी और मैंने तय कर लिया कि नागपुर ही जाकर रहूँ। इस बीच मैंने अपनी पेंशन ट्रांसफर कराने, गैर जरूरी सामान परिचितों को देने, कुछ मुफ्त के भाव बेचने में लग गयी। किन्तु अकस्मात भतीजे का मैसेज मिला कि वह अधिक प्राफिट के बिजनेस के चक्कर में अपना घर-द्वार बेचकर रायपुर में रहकर मिनी बस चलायेगा। इसलिए आप मत आवें। मेरे पैरों के तले की जमीन खिसक गयी कि अब क्या होगा। मैंने लगभग दिल्ली से अपने को उजाड़ ही लिया था। वह ठौर मेरे लिए बेगाना ही हो चुका। वैसे ही पेंशन ट्रांसफर दो बार करा चुकी थी जिसकी परेशानियाँ झेल चुकी थी। मैं एकदम अपसेट हो चुकी थी कि यदि बाबू पेंशन ट्रांसफर की कार्यवाही कर चुका होगा तो मैं बेमौत मर जाऊँगी। किन्तु ईश्वर उनकी मदद जरूर करता है जिनका कोई नहीं होता। इस विश्वास के भरोसे मैं पड़ी थी। संयोग से बीच की कई छुट्टियों के कारण बाबू पेंशन ट्रांसफर की कार्यवाही नहीं कर सका था। छुट्टी के बाद आफिस खुलने के पहले ही मैं वहाँ पहुँचकर बाबू का इन्तजार करने लगी। जब वह मिला तो कहने लगा कि आज तो मैं आपका काम निबटा ही देता आप क्यों आयीं। मुझ पर क्या भरोसा नहीं था। वास्तविकता बताते हुए जब मैंने बाबू को कहा कि वह हमारे सारे कागज वापस करे दें अब मैं पेंशन ट्रांसफर नहीं कराना चाहती। उस बेचारे ने सारी कार्यवाही रोक दी थी।'

उसकी इस व्यथा-कथा से मैं आहत हुए बिना नहीं रह सकी। नियति कहाँ से कहाँ और क्या से क्या रूप दिखाती है, कुछ कहा नहीं जा सकता। बेचारी गोल्डी के जीवन में कितने उतार-चढ़ाव, झंझावत-प्रभंजन आते गए जिसे इसने अकेले ही सहन किया। इनके भाग्य में जीवन साथी का कोई सुख नहीं बढ़ा था। प्रेम की फुहार से अछूती-अनछुयी रह गयी। आज के उनके रंग-रूप, तीखे नयन-नक्श को देखकर कल्पना भी नहीं की जा सकती कि सेवा जगत का कोई सुकोमल डॉक्टर इतना हृदयहीन कैसे था जिसने गोल्डी के हृदय की धड़कन को नहीं सुना था या ऐसा कोई प्रेमरोगी गोल्डी को क्यों नहीं मिला जिसके रोग की नर्सिंग गोल्डी जीवन भर करते हुए स्वास्थ्य लाभ देती रहती। किन्तु विडम्बना को क्या कहा जाय। उसके जीवन में ऐसी घटना नहीं घटी तो नहीं घटी। दुर्घटनावश वह एकाकी-अकेली काल के थपेड़े खाने के लिए रह गयी तो रह गयी। मेरे इस चिंतन में व्यवधान उत्पन्न करते हुए उन्होंने पुनः अपनी कथा की पोटली खोलते हुए कहना प्रारम्भ किया।

'कुछ दिन दिल्ली में समय बिताने के बाद अकेलेपन से ऊबती-घबराती, भविष्य की आशंकाओं से भयभीत होती मैं सोचने लगी कि अब कौन सा आश्रय अपने लिए बनाऊँ। कुछ समझ में नहीं आ रहा था। आप लोग सोच रहे होंगे कि जब अकेलेपन की आशंकाएँ मुझे पहले से डरावनी लग रही थीं तो मैंने कोई उपाय-आश्रय क्यों नहीं बना लिया। आप लोग जब मेरे इतने नजदीक से लग रहे हैं तब मैं आपको सब कुछ बताऊँगी। मेरे सामने भी शादी का आफर आया था। डॉक्टर वर्मा मुझे अपनी जीवन संगिनी बनाकर अमेरिका में बसना चाहते थे। किन्तु माँ की मृत्यु के बाद मैं ही घर की सबसे बड़ी थी। छोटे भाई-बहनों की पढ़ाई-लिखाई की जिम्मेदारी मेरे ही सिर पर थी। पिताजी से वैधव्य जीवन जीते न बना। अतः उन्होंने जल्दी ही अपनी दूसरी शादी बना ली। अब भाई-बहनों की देखभाल करने वाला मेरे अलावा और कोई न था। मैंने डॉक्टर वर्मा के आफर को नकारते हुए अपनी छोटी बहन से शादी करने की बात कही। वे मेरे परिवार पर पहले से ही कृपालु थे। अतः मेरी छोटी बहन से शादी करके अमेरिका चले गए। जहाँ आज भी वे लोग सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। मेरी आशाओं के अनुकूल ही मेरी छोटी बहन डॉ. वर्मा के साथ अधिक सुखी थी। बल्कि यों भी कह सकते हैं कि वह मेरी अपेक्षा से कई गुना अधिक आज संतुष्ट है जिससे अब मैं उसकी ओर से एकदम निश्चित हो गयी हूँ। यही मेरा आज सबसे बड़ा संतोष है। छोटी बहन मेरी सबसे अधिक प्रिय जो थी। चलिए अच्छा हुआ। मैं न सही तो मेरी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बहन आज बहुत शान-शौकत की जीवन जी रहा है। उसके बच्चे भी अच्छी-अच्छी पोस्ट पर हैं।'

मैं ही नहीं मेरे पति भी इस कथा से इतने सहृदय हो गये थे कि देखो तो गुलाबी पंखुरियों बिछी राह पर चलने की अपेक्षा इन्होंने कैसे कंटकाकीर्ण जीवन की राह स्वयं चुनी है। कभी-कभी लोग स्वयं अपने लिए तो नहीं वरन् अपनों के लिए काँटों भरी राह पर चलकर लहूलुहान होते हैं। इसमें भी उन्हें उसी प्रकार सुख मिलता है जैसे स्वर्ग सिंहासन मिला हो। वास्तव में यह सुख वर्णनातीत जो है। यह दु:ख सुख में ऐसा बदल जाता है जैसे कोई राहगीर कंकड़-पत्थर के ढेर पर लेटकर ऐसी मीठी नींद का आनन्द पा जाता है जिसे शानदार पलँग, गद्दा, तकिया, चादर पर लेटकर भी कोई मीठी नींद का मजा नहीं पा सकता। यही धरातल तो मनुष्य और पशु के बीच की विभाजक रेखा है जो दिखायी तो नहीं देती किन्तु अनुभव जन्य है। ईश्वर की अद्भुत सृष्टि का यह अनुपम उपहार है जो मनुष्य को देवलोक का दिव्य प्राणी बनाता है। अन्यथा अपने क्षुद्र स्वार्थों के वशीभूत मनुष्य इतना पतित होकर वह सारे कृत्य सरलता से करता है जिसे दुष्कर्म, धोखाधड़ी, छल-कपट, पाप, विश्वासघात की संज्ञा समाज में दी जाती है।

यही धरातल तो मनुष्य और पशु के बीच की विभाजक रेखा है जो दिखायी तो नहीं देती किन्तु अनुभव जन्य है। ईश्वर की अद्भुत सृष्टि का यह अनुपम उपहार है जो मनुष्य को देवलोक का दिव्य प्राणी बनाता है। अन्यथा अपने क्षुद्र स्वार्थों के वशीभूत मनुष्य इतना पतित होकर वह सारे कृत्य सरलता से करता है जिसे दुष्कर्म, धोखाधड़ी, छल-कपट, पाप, विश्वासघात की संज्ञा समाज में दी जाती है।

गोल्डी ने अपनी कथा में मध्यान्तर लाने के भाव से कुछ देर के लिए चुप्पी साध ली। कदाचित मन में उठते झंझावात से बचने के लिए सिर झुकाकर किनारे ओट में बैठ गयीं। फिर वे अपने बैग में रखे पर्स को खोलकर सारे करंसी नोटों को एक सिरे से गिनकर बड़े-छोटे क्रम में लगाकर विश्वास अर्जित कर मुख पर संतोष का भाव लाते हुए आश्वस्त हो गयीं कि सब कुछ है, कहीं कोई चिंता की बात नहीं है। गोल्डी बैग को मेरी गोद में रखते हुए एकदम उठकर बोगी के बाथरूम की और इशारा करके ऐसे निश्चित कदमों से चली गयीं जैसे उन्हें कोई शंका-कुशंका नहीं है। एक अपरिचित पर इतना दृढ़ विश्वास तो कोई एक दिन की कमायी नहीं वरन् कई-कई वर्षों की कमायी कही जा सकती है। किन्तु गोल्डी ने तो जैसे मात्र कुछ घण्टों में यह कमायी अर्जित कर ली थी। सचमुच मानव चरित्र बेहद अद्भुत आश्चर्यजनक अनुपम है।

कथा के उलझे धागों को फिर नए सिरे से पकड़ते हुए गोल्डी ने बताना चाहा कि उनका भूत चाहे जितना उलझन भरा रहा हो जिसे सुलझाते-सुलझाते उनकी उमर सत्तर पार कर गयी हो किन्तु अब सुखद वर्तमान की कामना से ही वे पुन: भतीजे के पास नागपुर जा रही हैं। यद्यपि उससे वे धोखा खाए बैठी थीं फिर भी उमर की बरसात में जर्जर काया को बचाने के लिए आश्रय तो चाहिए ही था और यह आश्रय कदाचित अपना ही रक्त संबंधी दे सकता है। इसी भ्रम में हम प्राय: भ्रमित होते रहते हैं। आदत के अनुसार भूतकाल की खिड़की में पुन: झाँकते हुए गोल्डी ने कहना प्रारम्भ किया,

'आपको मालूम है मैं आपके भोपाल में भी रह चुकी हूँ। मेरे भतीजे की बेटी सीमा वहीं रहती है। बड़े मनुहार से उसने मुझे भोपाल बुलाया था कि आप शेष जीवन मेरे साथ बिताएं। आपको कोई तकलीफ नहीं होगी। छोटा सा मेरा परिवार है। दो बच्चे हैं, मेरी माँ है, मैं नौकरी वाली हूँ। आपकी पूरी देखभाल मैं करूँगी। लेकिन मुझे कहाँ पता था कि दूर के ढोल सुहावने होते हैं। मैं जब इन लोगों के पास आ गयी । तब यह लोग धीरे-धीरे काम मेरे सिर पर थोपने लगे। सीमा दोनों बच्चों के कई काम मुझे सौंपने लगी। एक बच्चा तो गोद का था दूसरा स्कूल जाता था। छोटे बच्चे के नहलाने-धुलाने, दूध पिलाने कपड़े बदलने के काम तथा बड़े बच्चे को स्कूल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बस तक पहुँचाने-लाने, लंच बॉक्स लगाने के ढेरों काम सीमा मेरे खाते में डालने लगी। बच्चों से मुझे लगाव तो था और उनकी सेवा-सुश्रुषा में मेरा मन भी लगता था किन्तु मेरी ऐसी उमर कहाँ थी जो मैं इस भार को उठा पाती। यद्यपि पहले तो सेवा ही मेरा जप-तप, पूजा-पाठ थी किन्तु बाद में यह सब छूट गया। बच्चों के इस भार को उठाने में मैं लाचार थी। आगे यह भी हुआ कि सीमा अपनी वृद्ध माँ को छोड़कर जिसका अब कोई सहारा नहीं बचा है मेरे साथ रहना चाहती है। मेरा तो सुझाव था कि सभी मिलाकर दो-दो लाख रुपए मिलाकर एक बड़े फ्लैट में साथ-साथ रहें। इस सुझाव की साझेदारी से सीमा ने साफ इंकार कर दिया था। इससे मुझे ज्ञात हो गया था कि सीमा के साथ मेरा निस्तार संभव नहीं।'

'खैर छोड़िए इस बात को यहीं। सीमा के साथ न सही तो भतीजे के पास जा रही हूँ। वही नागपुर में रहूँगी। वहाँ भी नहीं रह पायी तो दिल्ली चली जाऊँगी, अपनी फ्रेण्ड के पास जहाँ मैंने अपनी उमर का ज्यादातर समय बिताया है। मैंने उसके पास अपने लिए पाँच मीटर कफन का कपड़ा रख छोड़ा है कि जब मरूँ तो इसका इस्तेमाल कर लेना और मेरी बाडी को इलेक्ट्रिक बरियल में बर्न कर देना। गाड़ना नहीं। बर्न कर सब कुछ राख बनाकर मिट्टी में मिला देना। मुझे पक्का विश्वास है कि मैं दिल्ली में ही मरूँगी। यही मेरी ईश्वर से प्रार्थना है और यही मेरी अन्तिम इच्छा भी है।'

हम ने देखा कि उनकी आँखें छलछला आयी थीं, एकाकी जीवन के भार से। गोल्डी का अन्तर एकाकीपन से कितना बोझिल था। जीवन भर उनके इस बोझ को उठाने वाला न अपना कोई मिला न पराया ही मिला। उनसे ही सबने समझौते की अपेक्षा की थी। किसी ने भी उनके साथ समझौते के संधिपत्र पर हस्ताक्षर करने की पहल नहीं की थी। रक्त संबंधियों ने तो कितनी बार उनसे रक्तदान की अपेक्षा की जिसे गोल्डी ने पूरा भी किया था जो उनकी शिराओं में प्रवाहित भी हो रहा है किन्तु इस उमर में मेडिकल साइंस के अनुसार रक्तदान वर्जित है फिर भी वे एक संबंधी उनसे रक्तदान की कामना कर रहे हैं। कैसी अद्भुत विडम्बना है जिसे वे अकेले झेल रही हैं। ऐसा लगता है कि इस भीड़ भरे संसार में वे एकदम अकेली हैं। कोई साथ चलने वाला नहीं है। तभी ट्रेन नागपुर स्टेशन पर आ गयी। सभी अपने-अपने सामान को लेकर प्लेटफार्म के भीड़ के अंग बन गये। मैंने देखा अकेली गोल्डी भी भीड़ का एक अंग बनकर भीड़ में कहीं गुम गयी। मैंने तलाशने की बहुत कोशिश की पर उनका अता-पता कहीं न चला। वे अकेली से भीड़ बन गयी थीं। जिसकी प्रकृति सबको अपने में समाहित करने की है। जल्दी-जल्दी में मैं उनका अता-पता भी न ले सकी थी जिससे सान्त्वना के दो शब्द तो लिखती।

कैसी विडम्बना है एक व्यक्ति के भीड़ बनने की। कितनी सरलता से एक व्यक्ति का व्यक्तित्व जिसमें अनेक विशेषताएँ समाहित होती हैं भीड़ का अंग बनने पर सारी विशेषताएँ कहीं गुम हो जाती हैं तभी तो मैं भीड़ के एक-एक चेहरे में गोल्डी को देखती रही पर एकाकीपन की पीड़ा से पीड़ित गोल्डी का कान्तिहीन गोल्डन चेहरा कहीं न मिला। कदाचित काल का कार्य-कलाप कुछ ऐसा ही है कि वह अपनी भारी भरकम सुदृढ़ चक्की में धीरे-धीरे सबको पीसता हुआ अस्तित्वहीन धूल बना देता है। गोल्डी बड़ी आस और असमंजस में अपने भतीजे के पास जा तो रही है किन्तु यदि वह अपनों के साथ सामंजस्य न बैठा पायेगी तो आगे क्या होगा। अपनी फ्रेंड के पास दिल्ली चली जायेगी। वहाँ भी उसकी अपेक्षा की पूर्ति होगी या नहीं कौन जाने क्या पता गोल्डी काल की बॉल बनी कब तक इस उम्र में शॉट पर शॉट झेलती रहेगी कौन जाने एक शॉट में तो वह दिल्ली से नागपुर जा रही है। दूसरा शॉट नागपुर से दिल्ली या और कहीं कौन जाने। पता नहीं कितने शॉट के शाक उसे मिलना शेष हैं। सोचते हुए मैं थरथरा गयी।

संपर्क : 84, प्रिंस कालोनी,
लोअर ईदगाह हिल्स, भोपाल- 4620011

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अनुराधा शर्मा

भाषा के भाव

यूँ ही एक दिन विचार आया क्या भाषा इतनी ही सहज और सरल है जितनी कि प्रतीत होती है? क्या उसके इस रूप के पीछे भी कोई षड्यंत्र है जो स्थूल आँखों से दिखाई नहीं देता? क्या उसे देखने के लिये आँखों के साथ सूक्ष्म सोच भी चाहिए जो इस षडयंत्र की परतें खोल सके? जाने क्यों उस दिन में भाषा के विशाल प्रारूप और समाज को उसकी देन पर विचार करने लगी। भाषा कोषों की अगर बात करें तो हमने अपनी हर भाषा को इतना समृद्ध तो बना ही लिया है कि कोई भी भाषा आज हमारी अस्मिता को घायल कर सकती है। भाषा ने सिर्फ हमें शब्द भंडार नहीं दिया है असत्य भाषण की परिधि भी विस्तृत की है।

भाषा ने नि:संदेह विचार संप्रेषण को विशाल बनाया है, व्यापार जगत को अप्रतिम गति प्रदान की है, साहित्य मंडल को चौतरफा बढ़ाया है और आपस के विचार आदान-प्रदान को भी बढ़ाया है। भाषा के इस विशाल रूप के बारे में मैं बैठी-बैठी एक दिन यह सोच रही थी कि भाषा की इतनी उन्नति से हमने क्या खोया क्या पाया? क्या इतने शब्दों ने हमें प्रगति की ओर बढ़ने में मदद की या इन शब्दों ने हमें शिकायतों का शब्दकोश बना दिया? अब हमारे पास एक ही बात की शिकायत करने के असंख्य तरीके हैं और उन्हें करने के असंख्य मौके।

इन शब्दों की बढ़ती संख्या ने शायद हमारी भविष्य के आयोजन को इतना प्रभावित नहीं किया जितना हमारे बीच बैर बढ़ाए क्योंकि अब हमें हर एक से शिकायत है और हर एक से मनमुटाव।

अगर सभ्यता के शुरुआत में जाकर जानने का प्रयास करें तो भावनाओं के टूटने पर शायद दर्द होता, हम रोते भी पर जो भी सिर पर हाथ रखता उसे शिकायतों का पिटारा न सुनाते, शायद उतना ही कह पाते जितने कि हमारे पास शब्द होते। शब्दों के बढ़ जाने से हमारे कहने की, भूतकाल के कार्यों का उलाहना देने की और भूतकाल पर पश्चाताप करने की परिधि असीमित बढ़ गयी है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

भाषा हमारे ज्ञान का सूचक बनी तो साथ ही साथ हमारे संबंधों के बिखराव का कारण भी बनी। क्या खोया, क्या पाया की दहलीज पर बैठकर अगर निष्पक्ष रूप से सोचें तो भाषा ने हमें दिया कम, छीना ज्यादा। देश के किसी भी कोने के हालात की बात कीजिए बस शिकायतें ही शिकायतें हैं, किसी को बढ़ते भ्रष्टाचार से शिकायत है जिसे भाषा ने ही फैलाया और पोसा है, किसी को नेताओं से शिकायत है जिनका सच्चा जनरूप भाषा ने ही सामने रखा है, किसी को दक्षिण से शिकायत है जिन्हें हिन्दी नहीं चाहिये क्योंकि वे अपनी शिकायत अपनी ही भाषा में दर्ज करवाना चाहते हैं ताकि अधिक बोल सकें और किसी को शिक्षा से शिकायत है जिसकी वर्तमान परिस्थिति भाषा ने ही की है। हम अपने शब्दों को भूलकर विदेशी आयातित शब्दों पर निर्भर हो गये हैं। वे शब्द अगर हमारी बात व्यक्त नहीं कर पाते तो हम बात को अलग-अलग तरीके से समझाने में लग जाते हैं फिर भले ही इससे बात का असली अर्थ खो जाये और हम भूल जायें कि वास्तव में हम क्या बात कहने गये थे।

क्या खोया, क्या पाया की दहलीज पर बैठकर अगर निष्पक्ष रूप से सोचें तो भाषा ने हमें दिया कम, छीना ज्यादा। देश के किसी भी कोने के हालात की बात कीजिए बस शिकायतें ही शिकायतें हैं, किसी को बढ़ते भ्रष्टाचार से शिकायत है जिसे भाषा ने ही फैलाया और पोसा है, किसी को नेताओं से शिकायत है जिनका सच्चा जनरूप भाषा ने ही सामने रखा है, किसी को दक्षिण से शिकायत है जिन्हें हिन्दी नहीं चाहिये क्योंकि वे अपनी शिकायत अपनी ही भाषा में दर्ज करवाना चाहते हैं ताकि अधिक बोल सकें और किसी को शिक्षा से शिकायत है जिसकी वर्तमान परिस्थिति भाषा ने ही की है। हम अपने शब्दों को भूलकर विदेशी आयातित शब्दों पर निर्भर हो गये हैं। वे शब्द अगर हमारी बात व्यक्त नहीं कर पाते तो हम बात को अलग-अलग तरीके से समझाने में लग जाते हैं फिर भले ही इससे बात का असली अर्थ खो जाये और हम भूल जायें कि वास्तव में हम क्या बात कहने गये थे।

ये बातें ऐसा नहीं है कि सिर्फ सार्वजनिक जीवन में ही अपना दखल रखती हैं, घर के अंदर का स्थल भी इनसे अछूता नहीं है। औरत के जीवन पर इनका असर सर्वाधिक हुआ है, एक तो भाषा और शिक्षा ने सच कहने की सीख दी और सच कहने के बाद जीवन दूभर किया। भाषा की वजह से ही वह सारी रिपोर्ट आई जिन्होंने औरत के जीवन की छुपी हुई सच्चाई को उजागर किया और हम इसे मानने से इंकार नहीं कर सकते कि उसके बाद औरत के विरुद्ध होने वाले अपराधों जैसे कि जलना, मरना, बलात्कार होना में वृद्धि हुई। उसका शारीरिक शोषण भी बढ़ा और घर से बाहर निकलने की मजबूरी भी बढ़ी। अपने विरुद्ध होने वाले इन अत्याचारों को जैसे ही उसने कहना शुरू किया, जमीन खो बैठी, वह भूल गयी कि उसे भूल करने का अधिकार न कल था न आज है। भूल करके पुरुष वापस आ सकता है वह नहीं, वह अगर भूल करती है तो उसे तो जीवन में वापसी का अधिकार रहता ही नहीं है, वह खो देती है अपने सारे अधिकार और रह जाती है बस एक शरीर, बिना आत्मा का जिस पर कोई असर किसी बात का होना नहीं चाहिए क्योंकि उसने तो गल्ती की है। माफ कीजिए पाप किया है, औरत गलतियाँ नहीं सिर्फ पाप करती है। वह दर्द शून्य हो जाती है क्योंकि कोई दर्द उसके पाप से बड़ा नहीं हो सकता। अगर भाषा नहीं होती और उसने सीखी नहीं होती तो वह भी अपने स्वतंत्र की कहानियाँ नहीं कहती और अपने जीवन में भूतकाल को निमंत्रण नहीं देती, लेकिन भाषा ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता दी तो वह भी उपयोग कर बैठी और उसे कब पता था कि यह उपयोग उससे दर्द का अहसास तक छीन लेगा? वह भूल गयी अहल्या की कहानी उसे लगा कि जमाना बदल गया है और वह भी प्रयास कर बैठी उस बदलाव का हिस्सा बनने की।

होश तब आया जब न पैरों के नीचे जमीन बची, न सिर पर आसमान। बचा तो सिर्फ अपने शब्दों का अधूरा ज्ञान। सोचती रही काश कि भाषा का उपयोग किया ही न होता, काश कि कुछ बोला ही न होता तो शायद जिंदगी कुछ और होती, औरतें थोड़ी कम मारी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जातीं क्योंकि उनके भूतकाल के पिटारे सार्वजनिक न होते, उन पर भी विश्वास किया जा सकता, उन्हें उलाहने न मिलते।

हाँ उलाहने से याद आया भूतकाल के लिये दिये जाने वाले उलाहने आपसे आपके व्यक्तित्व की पहचान तक छीन सकते हैं। मेरी एक परिचित हैं बाहर तो उनके भी कर कमल हो गये हैं पर घर के अंदर तो वह कीचड़ ही हैं, पिता बहुत पैसे वाले, होटल का व्यापार और ढेर सारे नौकर। नौकरों की कहानियाँ आधुनिक हिंदुस्तान में नई तो हैं नहीं। नौकरों ने वही किया जो हमारी नैतिकता को भले गँवारा न हो पर करते हम वही आए हैं। उन्हें भी तो भाषा का तोहफा मिला है अत: वे भी अपने शब्द जाल में किसी को भी उलझाने में सक्षम हो गए। अमीरी ने हमारे यहाँ एक ऐसे वर्ग को जन्म दिया जो पश्चिमी देशों से विदा हो चुका था पर हमारे यहाँ जिसका आकर्षण कुछ देर से आया। अमीरी हमेशा दूसरों पर निर्भरता सिखाती आई है क्योंकि अमीरी खुद काम करने को अपमान जनक मान बैठी, तो फिर अपना काम आप करना तो बेवकूफी हुई। इसी बस में एक गरीब नौकर ने अपना भविष्य सुनहरा करने की हिमाकत कर डाली, उसकी नौकरी गयी और परेशान पिता ने बेटी से हाथ धो लिए क्योंकि वह हमारे यहाँ अपनी शर्म को ढँकने का कारगर तरीका माना जाता है। शायद कोई समझा न सका या कोई समझा पाता उससे पहले ही वह अपने और नौकर के बीच हुई घटना का बयान कर बैठी, बस फिर क्या था, बाहर तो कर कमल ही रहे पर घर के अंदर वास्तविक कीचड़ में उन्हें रोप दिया गया क्योंकि कर तो कमल थे ही, उन्हें बढ़ने के लिए कीचड़ की नितांत आवश्यकता थी।

अगर भाषा न होती तो मेरी वह परिचित किन शब्दों में भूतकाल का बयान करती और अगर न करती तो बच जाती उस दर्द या उस चोट से जो अब अलग-अलग शब्दों में वे सहती रहती हैं। बाहर जाने की इच्छा व्यक्त करते ही शब्द आते हैं, बाहर जाकर पहले क्या कुछ कम गुल खिलाये हैं जो अब और जाना है। इतने वर्षों में किसी समारोह में वे अकेली शामिल नहीं हुईं। एक दिन अपनी कुंठा को दूर करने के लिये मैंने उन्हें बोलते सुना मैं अपने परिवार के अलावा और किसी के साथ किसी समारोह में घर से बाहर नहीं जाती। भाषा ने यह वरदान भी तो दिया है- फिर वही औरत कैसे कहती कि मुझे घर से निकलने की आजादी कहाँ है, वह तो भूतकाल ने और भाषा ने छीन ली है।

संपर्क : देसाई वाड़ा, दाहोद (गुजरात)
मो. 9898373074

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. कृष्ण कुमार प्रजापति

एक

वो आकर पूछते कब हैं अगर बीमार होते हैं।
वे कैसे मान लें अपने सभी ग़मख़्वार होते हैं।
ये अक्सर सोचते हैं किसलिए स्कूल कालेज हैं,
पढ़े लिक्खे अगर इस देश में बेकार होते हैं।
वहाँ से हर इलेक्शन यार मेरा जीत जाता है,
जहाँ रस्सी पकड़ कर लोग दरिया पार होते हैं।
किसी में भी कोई अच्छी ख़बर देखी नहीं जाती,
लहू के रंग में डूबे सभी अख़बार होते हैं।
जो सजदे में पड़ा रहता है उसको क्या ज़रूरत है,
उन्हें मिलती है ये दुनिया जो दुनियादार होते हैं।
मैं बढ़ना चाहता हूँ मुझको बढ़ने ही नहीं देते,
मेरे रस्ते में अपने लोग ही दीवार होते हैं।
हथेली में तेरी रचकर हिना का रंग खिलता है,
तेरे जूड़े में सज कर फूल खुशबूदार होते हैं।
'कुमार' उससे बिछुड़ कर एक मिस्रा भी नहीं होता,
वो मिल जाता है तो अश्आर पर अश्आर होते हैं।

दो

ये उसका अज़्म है, ये हौसला है।
परिन्दा बेपरों के भी उड़ा है।
वही तो है ख़ुदा का नेक बन्दा,
बुराई से जो सबको रोकता है।
ख़बर जिसको नहीं है अपने घर की,
ज़माने की ख़बर रखने लगा है।
छिपा लेता है जो बन्दों से बन्दा,
वो सब करतूत मौला देखता है।
तरक़्क़ी पे तो है बायोग्राफी,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मगर मुफलिस को इससे क्या मिला है?
Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
लगा रक्खी है मैंने बोन्साई,
मेरे गमले में कब चीकू फला है।
'कुमार' उसको समझिये अपना हमदम,
बुरे वक़्तों में जो काम आ गया है।

साफ दिल का आईना रक्खा करो।
छल-कपट से इसको मत धुँधला करो।
दास्ताने-दिल को लिक्खो साफ़-साफ़,
तुम क़लम-काग़ज़ को न रुसवा करो।
फ़िक्र कल की भी करो कुछ दोस्तो,
माज़ी के बारे में न सोचा करो।
घर से बाहर निकलो तो लाज़िम है ये,
ले के तुम माँ की दुआ निकला करो।
ऊँचे-नीचे रास्तों को छोड़कर,
ठीक रस्ते से मियाँ गुज़रा करो।
प्रेम का अमृत जो बरसाये यहाँ,
ऐसे लोगों में सदा बैठा करो।
उनकी दिलजोई की ख़ातिर ऐ 'कुमार',
मुफ़लिसों का हाल भी पूछा करो।

तीन

कभी आँसू बहाता है, कभी अपनी सुनाता है।
हमीं से बात करता है, हमीं से सब छिपाता है।
ये सोचा है कि घर के मसअले में कुछ न बोलेंगे,
हमारा एक-एक बच्चा हमें आँखें दिखाता है।
वो अक्सर बैठ के तफ़सील से करता था सब बातें,
वो जितना चाहता है, आजकल उतना बताता है।
कई क़िस्से कहानी होते हैं सुनने-सुनाने को,
बहुत दिन बात परदेशी जब अपने घर पे आता है।
जो बनकर दोस्त दुश्मन की तरह करता रहा बर्ताव,
'कुमार' अपने दिलो-जाँ आज भी, उस पर लुटाता है।

संपर्क : प्रजापति भवन, मेन रोड,
राउरकेला- 769001 (ओड़िशा)
मो. 9437044680

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

धर्मेन्द्र गुप्त 'साहिल'

एक

आदमी जो ग़म उठाता जा रहा है,
अपने होने की सज़ाएँ पा रहा है।
तू समझता है कि उसको पा रहा है,
दरअसल तू उसको खोता जा रहा है।
याद वो पीरी में कितना आ रहा है,
उम्रभर जिससे तू कतराता रहा है।
जो किसी से भी न शरमाया कभी वो,
आज अपने आप से शरमा रहा है।
भूल से भी भूल ये जीते-जी मत कर,
मिल्कियत बेटों को देने जा रहा है।
क्यों न 'साहिल' तल्ख हो हर बात उसकी,
उम्र भर जो तल्खियाँ पीता रहा है।

दो

किसी से दुख कहा क्या,
कहा गर तो मिला क्या।
फिर अबके बारिशों में,
कोई छप्पर गिरा क्या।
कुँआ था इस जगह इक,
बताओ वो हुआ क्या।
शहर के वास्ते फिर,
कोई जंगल कटा क्या।
कभी नानक के जैसा,
'खरा सौदा' किया क्या।
हो कितने बिखरे-बिखरे,
न देखा आईना क्या।
किसी का नाम तुमने,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

किताबों पर लिखा क्या।
हमारे कच्चे आँगन,
कोई पौधा उगा क्या।
सुनाओ गीत कोई,
पुराना क्या नया क्या।
वो खुद ही था परेशाँ,
मैं उससे बोलता क्या।
किसी रिश्ते की ख़ातिर,
हर इक रिश्ता मिटा क्या।
जिसे मैं लिख न पाया,
वो चिट्ठी में पढ़ा क्या।

तीन

मेरे फ़िक्रो -ख़याल को या रब,
तू ग़ज़ल की हसीं क़बा दे दे।
जब से हम बेवफ़ा हो गये,
वो वफ़ा के ख़ुदा हो गये।
आप हमसे मिले भी तो कब,
जब इरादे हवा हो गये।
ढँक लिया चाँद को अब्र ने,
चाँदनी से ख़फ़ा हो गये।
हर तरफ़ ज़ख़्म ही ज़ख़्म है,
फूल सारे वो क्या हो गये।
आके मिलते हैं वो अलसुबह,
गोया बादे-सबा हो गये।
इक बुलन्दी मुझे क्या मिली,
सब मेरे रहनुमा हो गये।
रातभर दर्द का बादल बरसा,
दिल मेरा चाँद को कितना तरसा।
जब भी इक चीज़ हुई है हासिल,
दिल मेरा दूसरी शय को तरसा।
अब क्या उम्मीद करूँ भादों से,
जब न आषाढ़ न सावन बरसा।
मुद्दतों बाद मिला मैं उससे,
वो न फूटा न ही मुझ पर बरसा।
क्या बताऊँ कि मुझे क्यों 'साहिल',
मेहरबानी से है लगता डर-सा।

संपर्क : के. 3/10 ए, माँ शीतला भवन,
गायघाट, वाराणसी -221001 (उ.प्र.)
मो. 08935065229

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कमला प्रसाद चौरसिया

घात-प्रतिघात

'बधाई हो सर। आज समाचार पत्र हुआ कि आपको सेवा का वह सुअवसर प्राप्त हो गया, जिसके आप हकदार हैं। अस्तु, जानकर प्रसन्नता हुई कि आपको इस पद पर नियुक्ति प्राप्त हो गई और इस गरिमामय कार्य को गति प्राप्त होगी। मेरी बधाई स्वीकार करें। आशा कर सकता हूँ कि आप मेरा स्मरण बनाए रखेंगे।

'यह भी कोई कहने की बात है। मैं अपनों का ध्यान नहीं रखूँगा तो कौन रखेगा। आपके लिए अवश्य ही कोई न कोई काम निकालूँगा। वैसे सच बताऊँ, मैंने कल्पना ही नहीं की थी कि मुझे ऐसा ऑफर मिलेगा। मेरे मन में कोई इच्छा नहीं थी। मैं तो सदैव ही योग्यों को आगे बढ़ाने वालों में रहा हूँ। मैंने बहुत सेवा कर ली। अब जब विश्राम चाहता हूँ, मुझे दायित्व सौंपा गया है। विस्मित हूँ। तथापि दैववसात् मिले इस कार्य को ठुकरा नहीं रहा हूँ। ऐसी वय में जब दौड़ लगाने का अवसर आ गया हो, ऐसी जिम्मेदारी का अवसर मिला है तो उसका उपयोग अवश्य करूँगा। इसे तो मैं 'बिन माँगे मोती मिले' की कहावत की चरितार्थता मानता हूँ और इसे न चाहते हुए भी अस्वीकार कर ईश्वर की कृपा की अवहेलना, अवमानना नहीं कर सकता और बताओ, घर में सब कुशल मंगल तो है न।'

'आपसे कोई बात छुपी तो हैं नहीं। कहते हैं कि 'कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादय:' लेकिन यहाँ तो यत्न करने पर भी लेश मात्र प्राप्त नहीं हो रहा है। सब प्रारब्ध का खेल है। वैसे भी आप जानते हैं कि मैं किसी की तीन-तेरह में कभी नहीं रहा और न किसी विचारधारा समूह से जुड़ा। आपने सदा सीख भी मुझे ऐसी ही दी। लेकिन चूँकि आपने मुझे इस क्षेत्र में प्रशिक्षित और प्रोत्साहित किया, इसलिए आपके प्रति अपनी निष्ठा में किंचित् भी विचलन नहीं आने दिया। खेद है, लोगों की सोच पर, उनके अज्ञान पर कि वे, 'दूध कलारिन हाथ लखि मद समुझहिं सब लोग।' को अपना कण्ठहार बना बैठे हैं। वे नहीं मान सकते हैं 'सठ सुधरहिं सत्संगति पाई।' लेकिन आज तो सत्संगति की परिभाषा ही बदल गई है। उसी के प्रभाव में अन्यथा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

होकर रह गया हूँ। उपेक्षा का ही नहीं, अलगाव का भागीदार हो रहा हूँ। भ्रमित रहा हूँ। संवेदना और सहानूभूति का
Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu
अभाव झेल रहा हूँ। सोचा नहीं था कि अपनी जाति के लोग इतने संकीर्ण और संकुचित विचार रखते हैं और तदनुसार व्यवहार करते हैं। देर से ही सही मेरी समझ में आ गया है कि यह सब मेरी अज्ञानता और संबंधों में अबोध के कारण हो रहा है। याद आ गए किसी पहुँचे हुए महात्मा के बोल कि 'सुखस्य दुःखस्य न कोऽपि दाता। परो ददातीति कुबुद्धिरेव।' सुख और दुःख देने वाला कोई नहीं। सुख-दुःख दूसरों से मिलता है, ऐसा मानना कुबुद्धि है'। अतएव अब मैंने गीता को ही अपना संबल रही है, जो हुआ, अच्छा हुआ, आपको 'बिन माँगे मोती वही मुझे मिला। कभी पढ़ा था व्यतरत् समं यथार्ह योग्यं योग्याय सन्तुष्ट हूँ कि देव ने मेरे साथ कुछ वह सब मिला जिसकी आपने स्वप्न कोई प्रयत्न किया। मैं निरंतर आशा सम्पर्क करने से जी चुराता रहा। नहीं सुहाए। अब उस राह पर आ तो बहुत दिया, आचरण नहीं करना चाहता हूँ। प्रारब्ध को

> *मैं जिसके योग्य था, वही मुझे मिला। कभी पढ़ा था श्लोक 'सुधां सुरेभ्यः सुरां सरारिभ्यः व्यतरत् समं यथार्ह योग्यं योग्याय दातव्यम्।' समझ गया हूँ और सन्तुष्ट हूँ कि देव ने मेरे साथ कुछ भी अनुचित नहीं किया। आपको वह सब मिला जिसकी आपने स्वप्न में भी अपेक्षा नहीं की और न ही कोई प्रयत्न किया। मैं निरंतर आशा में जीता रहा, योग्य दाताओं से सम्पर्क करने से जी चुराता रहा। पता नहीं क्यों, ऐसे लोग मुझे कभी नहीं सुहाए। अब उस राह पर आ गया हूँ जिस राह पर आपने वक्तव्य तो बहुत दिया, आचरण नहीं किया। अब मैं उस पर आचरण करना चाहता हूँ।*

बना लिया है जो नित्य समझा और जो हो रहा है, अच्छा ही है। मिल गए'। मैं जिसके योग्य था, श्लोक 'सुधां सुरेभ्यः सुरां सरारिभ्यः दातव्यम्।' समझ गया हूँ और भी अनुचित नहीं किया। आपको में भी अपेक्षा नहीं की और न ही में जीता रहा, योग्य दाताओं से पता नहीं क्यों, ऐसे लोग मुझे कभी गया हूँ जिस राह पर आपने वक्तव्य किया। अब मैं उस पर आचरण स्वीकार कर रहा हूँ। अच्छी तरह समझ रहा हूँ, ऐसा कुछ नहीं है, जो उसने नहीं दिया। जो उसे देना है; वह दे रहा है। साहस और संकल्प अभी भी बरकरार है, यह उसी की देन है। नित्य जाप कर रहा हूँ, 'कृष्णात् परं किमपि तत्वमहं न जाने।'

अपने-अपने दाँव

दादा खूबसिंह सिर खुजलाते हुए चले आ रहे थे। उनके चेहरे पर मुस्कान थी। उनका यह मुस्कुराना उनके मेल-मुलाकातियों को झेंपना सा लगता है, इसलिए वे उन्हें देखकर मुस्कुरा देते हैं। अपना खेद व्यक्त करने के लिए कोई उनसे अपने मन की कहने की हिम्मत नहीं करता। दादा की कहानी को याद करो तो कहना पड़ेगा कि सामने वाले को मुस्कुराते देखकर ऐसा कौन संवेदनशील प्राणी होगा जिसके चेहरे पर मुस्कान न उभर आए। औरों की कौन कहे, उत्तमसिंह कुछ अधिक ही व्यग्र थे। बहुत दिनों से कहना चाह रहे थे। अब रहा नहीं गया तो सहानुभूति व्यक्त कर ही बैठे, 'बच्चों को टिफिन देकर आ रहे हो। धूप तीखी लग रही होगी। दोपहर का समय है। क्यों रोज दुकान पर बच्चों को मध्याह्न भोजन देने जाते हो। बच्चे इतने बड़े-बड़े हो गए, उन्हें इतना भी नहीं सूझता कि नाती-नतरों वाले इस बुढ़ऊ को तंग न करें, तकलीफ न दें। उन्हें अब राम-नाम जपने का काम करना चाहिए। आखिर उस लोक की भी तो सुधि लेना जरूरी है। इस लोक में जैसा था, गुजर गया। जो किया, सो किया, अब तो उस लोक के लिए कुछ कर लेने दो।'

दादा अपने को पुराना पापी कहते हैं। इसलिए लिफाफा देखकर मजमून भाँप लेते हैं। उत्तमसिंह के चेहरे पर उठी भंगिमाओं को देखकर काव्यात्मक हो उठे, 'जैसी अहै सो सहि रहै, कहि रहीम यह देह। धरती पर ही परत है सीत घाम अरु मेह।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उत्तमसिंह को समझते देर न लगी कि पाँसा उल्टा पड़ गया है। आखिर हैं तो एक ही चरोखर के चरने वाले पानी भी एक ही घाट पी रहे हैं। प्रेम-विव्हल हो गले से लिपट गए, 'कह तो भैया तुम ठीक रहे हो किन्तु अब तुम्हारा यह खटना देखा नहीं जाता।'

'देखा मत करो। समझदार बनो। हो तो तुम भी पीले पात ही। तुमसे अधिक उम्र वृद्ध होने पर भी मैं अभी उतना पीत-पात नहीं हुआ हूँ,' दादा खूबसिंह उन्हें पकड़कर पास ही पड़ी एक खरसल पर ले जाकर बैठ गए, 'रहिमन निज मन की व्यथा मन ही राखो गोय। सुन अठिलैहैं लोग सब, बाँट न लैहें कोय।' तुम जितना चाहे छिपाओ उत्तम, मन की छिपाए नहीं छिपती। मुझ पर तरस मत खाया करो। जिस दिन मैं मन भर गेंहूँ की बोरी उठा नहीं पाया था, उसी दिन संकल्प ले लिया था कि अब ढोना नहीं करूँगा। अब सेवा करूँगा और अब दिन-रात पत्नी की, बच्चों की सेवा ही करता हूँ। बच्चों की वह ललकार-पुचकार, गुस्सा-डाँट, सब फूलों की फुहार सी लगती है। नन्हें कन्धे पर लदकर, पीठ पर सवार होकर किलकिलाते हैं तो समझदार, घर की कमाई वाले बच्चों और बहुओं की त्यौरियों और तल्खियों का उपचार हो जाता है, ठीक वैसे ही जैसे बाली से कुटकर आए हुए सुग्रीव के घावों पर श्रीराम का स्पर्श उसे शीतल कर देता है। अब उनकी मत विचारो जिनके पास विचार की कमी है। अब अपनी विचारो। तुम्हारे पास न अनुभव की कमी है और न विचार की। अब जब उसकी सुध आती है तो समझ में आता है, निर्मानमोहा जितसंगदोषा अध्यात्मनित्या विनिवृत्त कामाः। द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुः खसंज्ञैर्गच्छन्त्य मूढ़ाः पदमव्ययं तत्॥' हमारी तो बहुत सुधर गई, थोड़ी बची है। तुम्हारी तो अभी पूरी बाकी है। अभी भी कोई ज्यादा देर नहीं हुई है, राम से लग लो।'

संपर्क : आई 01/02, वर्द्धमान ग्रीन पार्क, अशोकागार्डन,
भोपाल 462023, मो. 9630419354

वैरं पञ्चसमुत्थानं तच्च बुध्यन्ति पण्डिताः।
स्त्रीकृतं वास्तुजं वाग्जं ससापत्नापराधजम्।। शान्ति १३९/४२
वैर पाँच कारणों से होता है यह बात बुद्धिमान अच्छी तरह जानते हैं। स्त्री के लिए, घर और जमीन आदि वस्तुओं के लिए, कड़वी बात कहने से, अपनी जाति के द्वेष के कारण या किसी अपराध के फलस्वरूप इन पाँच कारणों से वैर हो जाता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मूल : मंगल राठोड़

भाषा

अनुवाद : जेठमल मारू

मैं

मौन में अपने
सुन रहा हूँ
एक चिड़िया को
वातावरण में
छिटक रहे होते हैं
भाषा के दाने।

जड़ें

तपा तो ऐसा तपा
तुम्हारा सूर्य
मुझ पर
कि सूख गये
मेरे सत्व।
खिर पड़े
जल-जल कर
मेरे पत्ते।
मिट गयी हरियाली
निकल आया भूरापन
मेरे अस्तित्व का।
अटक गयीं मेरी शाखायें
चारों दिशाओं में फैलतीं।
सिमट कर
बन गया ठूँठ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कठोर।
थिर हो गया हमेशा के लिए
था वहीं का वहीं पर ही।
प्रतिबद्ध मेरी भूमि को शुष्क।
मुश्किल से ही कोई भूला-भटका पक्षी
आकर बैठता है अब
मुझ पर
क्षण दो क्षण।
टहुके के साथ ही उड़ जाता है
उसका रंग।
मैं शुष्क, बदरंग
सत्वहीन ठूँठ
प्रतिबद्ध मेरी भूमि को
उखाड़े से भी नहीं उखड़ूँ कभी तुम से।
इतनी गहरी मेरी जड़ें।
देख रहा हूँ
घनघोर बरसात की राह...।

कौन?

पशु की पीठ पर दिया हुआ
डाम भी अब तो...
पशु बन कर घूमता-फिरता है
और चरता है घास कोमल-कोमल
-इतनी जगह में मैं
अँखुआ सका नहीं कभी भी...
यही अफसोस
मेरा
कभी-कभी फूट पड़ता है शब्दों में।
तब मुझे लगता है कि-
घास जितना भी नहीं
मेरे शब्दों का महत्व।
घास से बनता है दूध
और पशु भी।
कोई भी नया जन्मता है कि तुरंत ही मैं
दौड़ जाता हूँ उसे देखने
उसकी पीठ पर डाम दिखता नहीं।
हरेक नवजात पशु इस तरह
मिटा देता है डाम को
तब जो आनंद होता है...
जो आनंद होता है...
कि मैं ही दुलारने लगता हूँ स्वयं को
इतने ही क्षण मेरे आनंद के।
अँखुआते घास जैसे कोमल-कोमल
कौन चर जाता है? कौन?

संपर्क : जेठमल मारू, 2 ए-2 पवनपुरी,
बीकानेर (राजस्थान)-334003
मो. 09460893974

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मधु सक्सेना

चन्दा संस्कृति

पति को खिला पिता कर आफिस के लिए रवाना किया। घर के कामों से फुर्सत पाई। हल्की बूँदाबाँदी। खुशनुमा मौसम। अब पूरा मूड था नया जासूसी उपन्यास पढ़ने का। मेरा मन पसन्द उपन्यास बहुत मुश्किल से मिला था। जासूसी उपन्यास पढ़ने का अपना अलग ही मजा है। एक गिलास बढ़िया चाय, साथ में आलू के चिप्स और आँखों के सामने बढ़िया जासूसी उपन्यास। लगता है संसार का सबसे बड़ा सुख है। उसी सुख का आनन्द ले रही थी कि दरवाजे की घण्टी बजी। मुझे झुँझलाहट से होने लगी। स्वर्गीय आनंद में खलल डालने ये कौन आ गया। मन ही मन आने वाले को कोसते हुए जाकर दरवाजा खोला तो देखा, बाहर अजीब टाइप के पाँच-छह लड़के खड़े थ॥ सभी ने चटख रंग के कपड़े पहन रखे थे। उन्होंने हीरो स्टाइल के बाल सेट करने की असफल कोशिश की थी। सेहत से कमजोर प्रतीत होते ये अठारह से बाइस साल के बच्चे आँखों में दृढ़ इच्छा शक्ति लिए हुए बड़ी लापरवाही से खड़े थे। आँखों में वही भाव था जो बकरे को देखकर कसाई को होता है उनमें से कुछ लड़के पान या गुटका चबा रहे थे। एक लड़का जो सबसे मरियल था उसके गले में लाल स्कार्फ था, वही उनका नेता भी लग रहा था।

क्या है, मैंने झुँझलाते हुए पूछा।

चन्दा चाहिए, लाल स्कार्फ वाला लड़का बोला।

मैंने पूछा, क्यों, गणेश जी जा चुके हैं। दुर्गा जी का हम दे चुके हैं, तुम्हें किस बात का चन्दा चाहिए?

उनमें से काली शर्ट वाला बोला, हम सब बेरोजगार हैं।

मैंने पूछा, तो?

नीली पेंट वाला लड़का मुँह बिगाड़ कर बोला, तो क्या? हमने शिक्षित बेरोजगार संघ बनाया है। उसके खर्चे के लिए चन्दा चाहिए।

मुझे थोड़ा-थोड़ा गुस्सा आने लगा था। मैंने खीजते हुए कहा, वाह। यह भी कोई बात हुई? हम चन्दा क्यों दें?

घनी मूँछ वाला बोला, चन्दा तो देना ही पड़ेगा मैडम जी... वो भी पाँच सौ एक से कम नहीं लेंगे...।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेरा गुस्सा मुगले आजम के अकबर की तरह बढ़ने लगा था, पर अपने आप को संयत करने का प्रयास करते हुए कहा, अच्छी दादागिरी है? हम क्यों दें चन्दा? तुम सब बेरोजगार हो इसमें हमारी कहाँ जिम्मेदारी है?

लाल स्कार्फ वाला बोला, जिम्मेदारी तो पूरी है आपकी मैडम जी। हम भी समाज में रहते हैं, आप भी समाज में रहती हैं, किसी भी क मी की जिम्मेदारी जितनी हमारी है, उतनी ही आपकी भी।

उनकी बहस मेरा भेजा खराब कर रही थी पर बात सच भी थी। मैंने अपनी आवाज में तल्खी लाते हुए कहा, हमारी जिम्मेदारी क्यों है भाई? रोजगार तुम्हें सरकार नहीं दे पा रही तो जिम्मेदारी भी सरकार की हुई। हम नहीं मानते अपनी जिम्मेदारी-वारी। जाओ सरकार से ही माँगों अपना बेरोजगारी भत्ता वत्ता... और हमारी जान छो....।

मैंने अपनी आवाज में तल्खी लाते हुए कहा, हमारी जिम्मेदारी क्यों है भाई? रोजगार तुम्हें सरकार नहीं दे पा रही तो जिम्मेदारी भी सरकार की हुई। हम नहीं मानते अपनी जिम्मेदारी-वारी।

सरकार भी तो आपने चुनी है, मेरी बात काटते हुए काले चश्मे वाले ने तपाक से कहा। और फिर थोड़ा मुस्कुराते हुए बोला-दोष तो आपका पूरा है। आपने वह सरकार चुनी है जो हमको रोजगार नहीं दे पा रही... तो चन्दा तो आपको देना ही होगा।

मेरा गुस्सा और खीज बढ़ती जा रही थी। मैंने तमक कर कहा, देखो...। तुम लोग बेवजह सरकार को दोष दे रहे हो... पढ़ाई के समय या तो इधर उधर घूमोगे या नेतागिरी करोगे। नम्बर अच्छे नहीं आये तो दोष गुरुजनों को और शिक्षा व्यवस्था को दोगे। नौकरी नहीं मिली तो सरकार को दोष दोगे। अगर नौकरी नहीं तो कोई काम धंधा करो। मैंने उपदेश देते हुए कहा।

लाल स्कार्फ वाला थोड़ा तैश में आकर बोला, देखो मैडम जी... हम आपसे उपदेश सुनने नहीं आये हैं। वो तो टी व्ही पर हर रोज आते हैं। हम तो आपसे चन्दा माँगने आये हैं। अपना हक लेने आये हैं। सीधे से निकालो... अपना और हमारा टाइम खोटी मत करो। समझीं ...।

उस लड़के की बात करने की स्टाइल से मुझे बहुत गुस्सा आ गया 'चोरी और सीना जोरी' मैंने गुस्से से बेकाबू होते हुए कहा, कोई जबरदस्ती है क्या? नहीं देना मुझे चन्दा... वंदा...।

यह कह कर मैंने अपने घर का दरवाजा बन्द करना चाहा तो, नीली पेंट वाले ने बीच में ही दरवाजा पकड़ लिया और बोला, मैडम, काहे को फोकट में बहस करती हो। फटाफट चन्दा दे दो... हम भी जाएँ तुम भी अपना काम देखो।

मैंने गुस्से से चीखते हुए कहा, नहीं देना चन्दा। क्या कर लोगे?

उसने मुस्कुराते हुए कहा, हम तो कुछ नहीं करेंगे, सब कुछ ऊपर वाला करेगा। मान लो आपकी काम वाली बाई आना बन्द कर दे, अकेले आपके घर की बिजली गुल हो जाए, टेलीफोन खराब हो जाए, आपके घर में रोज गन्दगी मिले। कोई पत्थर मार कर आपके घर के शीशे तोड़ दे या आपके पति का स्कूटर रोज पंचर होने लगे... या... और ... और कुछ हो सकता है मैडम जी। और अगर ये सब कुछ साथ होने लगे तो... तो बताइये कितना खर्च होने लगे, तो कितना खर्च आएगा? हिसाब लगा लो जी... हम तो उस खर्चे से कितना कम माँग रहे हैं...? आगे आपकी मर्जी।

यह कहकर उसने कन्धे उचका दिए।

अब मेरे गुस्से में भय भी शामिल होने लगा था। उन लड़कों का हौसला देख कर मुझे लग रहा था कि बेकार मैं उन लड़कों से उलझ रही हूँ। फिर भी मैंने अपना भय छुपाते हुए आखरी तीर छोड़ा- अच्छा... तो तुम मुझे धमकी दे रहे हो? गुंडाराज समझ रखा है? मैं तुम सबकी रिपोर्ट पुलिस में करूँगी (जबकि जानती थी पुलिस में तो और बड़े...) रुको तुम..., अभी पुलिस को बुलाती हूँ। कानून भी कोई चीज है आखिर...??

मेरी बातें सुनकर दो-तीन लड़के इत्मीनान से उकडूँ बैठ गए, बाकी दीवार से टेक लगा कर खड़े हो गए। उनमें

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

से लाल स्कार्फ वाला बड़ी लापरवाही से बोला- बुला लो मैडम, बुला लो, पुलिस को भी बुला ले। पुलिस वाले क्या चन्दा नहीं उगाहते? चाहे चंदे का नाम दूसरा रख लें। तो बात और समझ लेना, हम कोई कानूनी अपराध नहीं कर रहे। हम तो उसी दिशा में चल रहे जिस पर हमारे मार्ग दर्शक चल रहे। मेरे कुछ बोलने से पहले ही घनी मूँछ वाला भी तमक कर खड़ा हो गया और आवेश में आते हुए बोला- किस कानून की बात कर रही हैं आप? मैंने भी कानून की पढ़ाई की है। हमारे देश में ऐसा कोई कानून नहीं जिसकी किसी धारा में चन्दा माँगना अपराध है और हमारे देश में तो बड़े लोगों की निशानी है चन्दा माँगना। हम तो छोटे स्तर पर काम कर रहे हैं। बिना चंदे के चुनाव, धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, साहित्यिक, आयोजन कुछ भी तो सम्भव नहीं हमारे नेता देश से तो क्या विदेश से भी चन्दा ले आते हैं। सामाजिक संस्थाएँ अनुदान के रूप में, शिक्षण संस्थाएँ फीस, वार्षिक उत्सव के नाम पर चन्द उगाहती हैं। नेता, कलाकार, साहित्यकार, उद्योगपति विभिन्न पार्टियाँ सभी चंदे के कारण पनपते हैं फिर वह चन्दा सहयोग, अनुदान या शेयर के रूप में ही क्यों न हो।

मुझे बोलने का मौका दिए बिना ही काले चश्मे वाले ने कहना शुरू किया, और क्या मैडम जी आप पेपर तो रोज पढ़ती होगीं। हमारे देश में जंगल, सड़कें, लोगों का इलाज यहाँ तक कि स्कूली बच्चों को दोपहर का भोजन भी विदेशी चंदे पर निर्भर है। जब चंदे का धंधा इतना सरल, प्रसिद्ध और कानूनन हो तो हम चन्दा माँगते हैं तो क्या बुरा करते हैं?

मेरी बोलती बन्द हो रही थी। अपना प्रभाव अच्छा पड़ते देख नीली पेंट वाले ने भी अपना मुँह खोल दिया और हाथ हिलाते हुए बोला, बुलाइये पुलिस को... अगर चन्दा माँगना जुर्म है तो पहले वो इन बड़े चंदेबाजों को पकड़े, फिर हमें पकड़ कर सजा दे।

मैं अवाक् सी उन लड़कों के तर्क सुनती रही। उनके तर्कों में बहुत दम था। मुझे अपनी तर्क शक्ति पर बहुत गर्व था। आज इस नई पौध के सामने मेरे सारे तर्क और ज्ञान की धज्जियाँ उड़ गईं थीं। समझ नहीं पा रही थी क्या करूँ? पाँच सौ एक रुपये मामूली रकम नहीं थी। मुझे सोच में पड़ा देख उनमें से एक हँसते हुए बोला- चलो पचास रुपये कम दे दो, पर जल्दी करो।

इतने में दूर से किसी अन्य लड़के ने उन लड़कों को आवाज लगाई और करीब आते हुए बोला, जल्दी करो... एक ही घर में इतनी देर लगाओगे तो कैसे काम चलेगा? फिल्म छूट जायेगी।

जैसे ही मैंने उस लड़के को देखा। वह कुछ जाना पहचाना सा लगा। वह भी मुझे देखकर ठिठका और बोला- नमस्ते आंटी जी। मैं उसे पहचान गई थी। वह दो मकान छोड़कर रहने वाले शर्मा जी का बेटा था। मैंने अचरज से उसे देखते हुए पूछा, अरे...। तुम यहाँ? इन सबके साथ कैसे? पिछली नौ दुर्गा में ही तो तुम्हारी माँ ने तुम्हारी नौकरी लगने की खुशी में कथा करवाई थी? मिठाइयाँ बाँटी थीं? क्या तुम्हारी नौकरी छूट गई?

उस लड़के ने संकोच से सिर खुजाते हुए कहा, आंटी जी... ऐसा है कि नौकरी तो मिल गई थी... पर पगार कम थी। उससे ज्यादा तो हम चन्दा माँग कर कमा लेते हैं। इसलिए मैं नौकरी छोड़ कर वापस इस धंधे में आ गया।

फिर बेशर्मी से मुस्कुराकर उसने मुझ पर एहसान जताते हुए कहा, चलिए आपको कन्सेशन देते हैं। एक सौ एक रुपये दीजिए और मामला फिनिश कीजिये।

मैं असमन्जस की स्थिति में थी। यह भी समझ रही थी कि बिना दिए छुटकारा नहीं। चुपचाप एक सौ एक रुपये निकाल कर दिए और उन लड़कों को विदा किया।

चाय ठण्डी हो चुकी थी। चिप्स बरसात के कारण सील गए थे। जासूसी उपन्यास पढ़ने का सारा उत्साह खत्म हो गया था। युवा पीढ़ी के विचार और तर्क से उनके भविष्य के बारे में सोच नहीं पा रही थी। दिमाग का दही बनता जा रहा था। चन्दा संस्कृति, विकृति बनती जा रही थी। इसका कभी अंत होगा या नहीं? इस सवाल का जवाब मेरे पास नहीं था। क्या आपके पास है...?

संपर्क : ए-51, एमराल्ड पार्क सिटी,
एम्स अस्पताल के पास, बाग सेवनिया, भोपाल।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रियदर्शी खैरा

रिटर्न ऑफ नगीना बाबू

नगीना बाबू बाबा नगीनादास के रूप में एक लम्बे अर्से के बाद घर लौटे। घर का दरवाजा बन्द था, खुली खिड़की से झाँका तो देखा कि बैठक में सामने की दीवार पर उनकी तस्वीर पर फूलों की सूखी माला टँगी थी। उसका माथा ठनका, भारी मन से दरवाजा खटखटाया, दरवाजा खुला, सामने सफेद साड़ी में पत्नी को पाया, वे माथा पकड़ कर बैठ गये, पत्नी घबड़ा कर चिल्लाई, 'मुन्ना, देखो कौन आया है, तुम्हारे बाबू जी की शक्ल का कोई है?' मुन्ना बदहवासी में बाहर आया, नगीना बाबू को देखा, डरा और मम्मी को भीतर खींचा फिर दरवाजा बन्द कर लिया। नगीना बाबू अपने घर में ही पराये हो गये, बड़ी मुश्किल से पत्नी और बेटे को विश्वास दिला पाये कि वे ही नगीना बाबू हैं। पत्नी ने उलाहना दिया, 'तुम तो बाबा हो गये, सात साल बाद लौटे हो, हमें किसके भरोसे छोड़ गये थे, बड़ी मुश्किल से डेथ-सर्टीफिकेट बन पाया तब पेंशन बनी, यहाँ तो खाने के लाले पड़ गये थे।' नगीना बाबू सुन कर स्तब्ध रह गये कि उनका अंतिम संस्कार भी हो चुका है, अब उनके सामने एक नई चुनौती आ गई, अपने आप को जिन्दा साबित करने की।

सुबह उठे, अपना हुलिया ठीक किया और स्कूल पहुँच गये, स्कूल में अफरा-तफरी मच गई, चपरासी ने देखा तो भूत-भूत चिल्लाते हुए भागा, बच्चे कक्षा से बाहर आ गये और डर कर स्कूल से भाग गये। नगीना बाबू मुस्कुराये, ये वही बच्चे थे जो उनसे कभी डरते नहीं थे, आज उन्हें देख कर ही डर गये। प्राचार्य अपनी कुर्सी के पीछे छिप गये, नगीना बाबू ने तमाम सबूत दिये कि वे भूत नहीं हैं, मसलन उनके पैरों के पंजे उल्टे नहीं, वे उड़ नहीं सकते, वे वजनदार हैं हवा नहीं, तब कहीं प्राचार्य जी के मुँह से बोल फूटे, 'नगीना बाबू आप तो स्वर्गवासी हो गये थे, स्वर्ग से कब पधारे? नगीना बाबू ने समझाया, उन्हें बुद्ध की तरह इस नश्वर संसार से मोह भंग हो गया था, वे शान्ति की खोज में हिमालय गये थे। वहीं से लौटे है। हेड मास्साब भी घाघ थे पूछा, 'शान्ति तो अपने स्कूल में मिल जाती, हिमालय क्यों गये? गये तो ठीक, फिर यहाँ शान्ति भंग करने क्यों लौट आये, बुद्ध बनने गये थे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बुद्धू बन के आ गये?' नगीना बाबू अपराधी की मुद्रा में सिर झुकाये चुपचाप खड़े रहे फिर धीरे से बोले, मैं ज्वाइनिंग दे रहा हूँ।

'ज्वाइनिंग' प्राचार्य जी को चार सौ चालीस बोल्ट का करेंट लगा फिर बोले, सरकारी रिकार्ड में तुम मर चुके हो, तुम्हारी पेंशन फिक्स हो गई, तुम्हारी पत्नी तुम्हारे अंतिम संस्कार का पैसा ले चुकी, अब तुम भूत-पूर्व हो गये हो।

'भूत-पूर्व नहीं भूत हो चुके हो', कहते हुए बड़े बाबू ने कमरे में प्रवेश किया।

'देखिये बड़े बाबू मैं जिन्दा हूँ, मजाक न करो, अब तुम्हीं रास्ता निकालो'। नगीना बाबू बोले।

बड़े बाबू विचार-मग्न हो गये, पेन मुँह में दबाया, आँखें बन्द कीं, थोड़ी देर इसी मुद्रा में रहे जैसे किसी रचना का मानसिक सृजन कर रहे हों, फिर धीरे से बोले, 'सर, शास्त्रों में लेख मिलता है कि कभी-कभी अतृप्त आत्मायें दूसरे के शरीर में प्रवेश कर लेती हैं और उनके माध्यम से अपना कार्य सम्पादित करती हैं, पर इस प्रकार का कोई दृष्टांत शासकीय सेवा संहिता में नहीं मिलता, सर इस प्रकरण को हेड-ऑफिस रिफर करना उचित होगा।'

नगीना बाबू स्वर्ग-लोक से मृत्यु-लोक में आ गिरे, बड़े बाबू की चिरोरी करते हुए बोले, 'बड़े बाबू आप जैसा बुद्धिमान पूरे विभाग में नहीं है, कोई सोलूशन निकालो, बाकी हम देख लेंगे, समझ गये न।'

'अरे नहीं, नगीना बाबू आप तो घर के आदमी हैं, आपकी पेंशन हो गई, एक्स ग्रेसिया हो गया, लीव इन्केशमेंट हो गयी, मैंने कुछ कहा? भाभी से पूछ लेना, अब आप आ गये तो बात दूसरी है, खैर कोई रास्ता निकालते हैं।' बड़े बाबू फिर ध्यान की उच्च-अवस्था में पहुँच [illegible] प्राचार्य महोदय ने आँखों के माध्यम से उनके आज्ञा चक्र में प्रवेश किया तो वे जागृत हुये फिर बोले, नगीना बाबू, आपकी गुमसुदगी की रिपोर्ट थाने में हुई थी, वहीं से कुछ हल निकालो, उन्हीं के जाँच प्रतिवेदन पर आप मृत घोषित हुये और आपके जीते जी भाभी जी फैमिली पेंशन की हकदार हुई। वही आपकी नैया पार लगायेंगे।'

फिर लौट क्यों आये, इस बुढ़ापे में क्यों विरक्त हुये, जवानी में क्यों नहीं? अब बुढ़ापे में किस पर आसक्त हो गये जो चले आये? आप तो चले गये, बन्दर सेना हमारे लिये छोड़ गये, छात्रों ने हड़ताल कर दी, नींद हराम हो गई, सारे हिसाब तुमसे चुकता करने हैं, वो तो भला हो भारतीय रेल का, जंगल में पटरी किनारे टाँग मिल गई, तुम्हारी घरवाली जूते को पहचान गई और टाँग की शिनाख्त हो गई। वहीं से हेड साब कुछ हड्डियाँ बटोर लाये, तुम्हारी घरवाली के हवाले कर दी, क्यों हेड साब हड्डियों आदमी की थीं न?

नगीना बाबू को बात जम गई, वे थाने पहुँच गये। थानेदार जी को अपनी व्यथा-कथा सुनाई, थानेदार साब ने इत्मीनान से सुनी, थोड़ा मुस्कुराये फिर नगीना बाबू की आँखों में आँखें डालते हुए बोले, 'देखिये साब, हमने बड़े-बड़े भूत उतारे हैं, हमारे डण्डे को देखकर भूत थाने से सौ मीटर दूर रहते हैं, आप अंदर कैसे आये, चलिये आपको अन्दर कर देते हैं। आपके भूत उतारने हैं। सा ऽऽऽ ले... चले आते हैं, हेड साब इसको पागलखाने भेजो।' थानेदार साब धीरे-धीरे अपनी मूल अवस्था में आने लगे। नगीना बाबू भय से काँपते हुए बोले, 'नहीं साब नहीं, माफ करें, मन विरक्त हुआ तो हिमालय चले गये।'

फिर लौट क्यों आये, इस बुढ़ापे में क्यों विरक्त हुये, जवानी में क्यों नहीं? अब बुढ़ापे में किस पर आसक्त हो गये जो चले आये? आप तो चले गये, बन्दर सेना हमारे लिये छोड़ गये, छात्रों ने हड़ताल कर दी, नींद हराम हो गई, सारे हिसाब तुमसे चुकता करने हैं, वो तो भला हो भारतीय रेल का, जंगल में पटरी किनारे टाँग मिल गई, तुम्हारी घरवाली जूते को पहचान गई और टाँग की शिनाख्त हो गई। वहीं से हेड साब कुछ हड्डियाँ बटोर लाये, तुम्हारी घरवाली के हवाले कर दी, क्यों हेड साब हड्डियों आदमी की थीं न?

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'सौ प्रतिशत श्रीमान्, वैसे हड्डियाँ तो जानवरों की भी सफेद होती हैं, अब सब गंगा में प्रवाहित हो गईं।' हेड साब बोले, फिर पूछा, पैर के फटे तले का जूता मिस्ट्री बन गया, आप जैसा जीनियस ही ये राज खोल सकता है, श्रीमान्। आपके डर से शेर भौंकने लगते हैं, आदमी म्याऊँ-म्याऊँ करते हैं, आप महान् हैं सर।

'वो तो हैं।' थानेदार साब मूँछों पर ताव देते हुए बोले, 'इसकी शकल बता रही है वो फटा जूता इसी का था, कहाँ से खरीदा था बे, रसीद है? चुराया तो नहीं था।'

'दस साल पुराने जूते की रसीद कहाँ से लाऊँ, मुन्ना ने जब इन्हें त्याग दिया तो हमने अपना लिया।' नगीना बाबू ने उत्तर दिया।

'ये मुन्ना कौन है? कोई कुछ भी त्यागेगा, तू अपना लेगा, कोई अपनी बीबी त्यागेगा, तू अपना लेगा।' थानेदार ने प्रश्न किया।

'नहीं, मुन्ना अपना बेटा है सर।' नगीना बाबू हाथ जोड़ते हुए बोले।

'कैसे कह दिया, हम कैसे मान लें मुन्ना तेरा बेटा है, कोई सबूत?'

'अब सबूत कहाँ से लायें, सब कहते हैं सर, पर मुन्ना का इससे क्या संबंध?' नगीना बाबू ने पूछा।

'पुलिस सबूत से चलती है। कड़ियाँ जोड़ती है, कहानी तुमसे शुरू हुई, तुम भागे, टाँग मिली, टाँग में जूता, जूता मुन्ना का... आगे बोलो....।' थानेदार ने पूछा।

नगीना बाबू घबड़ा कर बोले, 'सर आगे क्या बोले, मेरी तो बोलती बन्द हो गई।'

यहाँ गूँगे बोलने लगते हैं, तुम्हारी क्या बिसात?

हुजूर आप ही बतायें हम कैसे अपने आप को जिन्दा साबित करें?

'यहाँ केस में खात्मा लग गया, अब तुम कप्तान साब के पास जाओ, फालतू समय बरबाद मत करो, एक और भाग गया है, उसे पकड़ना है जिन्दा या मुर्दा या तुम्हारे जैसा भूत...।'

सुनकर नगीना बाबू जल्दी से उठे, राम-राम कहते थाने से बाहर आये। दूसरे दिन फिर स्कूल पहुँच गये, बड़े बाबू से सुझाव माँगा। बड़े बाबू ने चाय-पानी के बाद डाक्टर से जीवित होने का प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए कहा। नगीना बाबू अस्पताल चल दिये। कम्पाउण्डर साब नाड़ी देख रहे थे, डाक साब परचा लिख रहे थे। डाक साब ने नगीना बाबू पर उचटती निगाह डाली और पूछा, 'ब्लड टेस्ट कराया, मलेरिया लग रहा है, जाओ श्री पैथालैब से ब्लड रिपोर्ट लेकर आओ।'

'डाक साब हम बीमार नहीं है।' नगीना बाबू थूँक गुटकते हुए बोले।

'यहां आ कर सब बीमार हो जाते हैं, कुछ देर रुको, तुम भी हो जाओगे, ये सरकारी अस्पताल है। बोलो कैसे आना हुआ?'

'सर मुझे जीवित होने का प्रमाण-पत्र चाहिये।'

'अरे हम तो बर्थ सर्टीफिकेट, डेथ सर्टीफिकेट देते हैं, जीवित रहने का सर्टीफिकेट कैसे दें, किस प्रोफार्मा में दें... फालतू वक्त बरबाद न करो.... नेक्सट।' डाक साब बोले।

'डाक साब मेरी कथा सुन लीजिये, तब आप समझेंगे।'

'कथा मंदिर में सुनाना, ये अस्पताल है, मुझे देर हो रही है, कल खाली कागज पर अपनी फोटू लगा के लाना, डिस्पेंसरी में मरीज इंतजार कर रहे होंगे।' कहते हुए डाक साब उठ गये।

नगीना बाबू ने कम्पाउण्डर से पूछा डाक साब की डिस्पेंसरी कहाँ हैं?

'घर में, कल आना।' कम्पाउण्डर ने उत्तर दिया, फिर मुस्कुराते हुये बोला, 'सही इलाज तो वहीं होता है, यहाँ सरकारी इलाज है।'

दूसरे दिन सुबह नगीना बाबू फिर पहुँच गये।

डाक साब आये-आये थे, बड़बड़ाने लगे-'क्यों भाई। क्यों भूत से पीछे पड़ गये हो, रात भर सोये नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

क्या?'

'नहीं डाक साब, भूत नहीं, मैं, मैं नगीना प्रसाद जिन्दा आदमी, जिसे आपने कागज में मार डाला अब कागज में जिन्दा कर दें, बड़ी मेहरबानी होगी।' नगीना बाबू हाथ जोड़ते हुए बोले।

'लाओ', डाक साब झल्लाते हुए बोले और फोटू ने नीचे लिख दिया, प्रमाणित किया जाता है कि चित्र में प्रदर्शित व्यक्ति जीवित है और हस्ताक्षर कर, कम्पाउण्डर से सील लगाने को कहा। नगीना बाबू ने सील लगवाई और प्रमाण पत्र लेकर स्कूल पहुँच गएँ प्रिन्सिपल साब ने बड़े बाबू को बुलाया, बड़े बाबू ने प्रमाण-पत्र देखा, फिर बोले, 'ये किसका प्रमाण पत्र है?' 'मेरा', नगीना बाबू ने उत्तर दिया। 'मेरा, किसका?' कोई नाम है? बड़े बाबू ने प्रश्न किया। मेरा यानी नगीना प्रसाद का, नगीना बाबू बोले। 'पर प्रमाण-पत्र में नाम तो है नहीं, ये तो दाढ़ी से अमिताभ बच्चन लग रहे हैं।' बड़े बाबू मुस्कुराते हुये बोले, फिर कहा, 'देखिये नगीना बाबू आप नाम से नौकरी करते थे, नाम से पहचाने जाते हैं, आपका केस कम्पलीकेटिड होता जा रहा है, आप अपने बेटे के साथ कल आयें।'

तीसरे दिन नगीना बाबू पुत्र के साथ फिर आ धमके। प्रिन्सिपल साब गम्भीरता से एक फाइल पलट रहे थे, बड़े बाबू उन्हें कुछ समझा रहे थे। नगीना बाबू की तरफ एक उचटती दृष्टि डाली फिर उनके पुत्र की ओर मुखातिब हुये, 'मिस्टर श्रवण कुमार सन आफ स्वर्गीय नगीना प्रसाद, आपकी अनुकम्पा नियुक्ति की फाइल हेड ऑफिस से आ गई है?'

'अच्छा क्या हुआ?' श्रवण कुमार उर्फ मुन्ना खुशी से उछल पड़े।

'काम हो गया है, पर एक अड़चन है।' आपके पिताजी अपने को जिन्दा करने पर तुले हैं, कहो तो टीप के साथ फाइल वापिस भेज देता हूँ।' प्रिन्सिपल साब गम्भीरता से बोले।

'नहीं सर पिताजी को मरे सात साल हो गये। मेरी पूरी जिन्दगी पड़ी है, आपकी कृपा से कट जायेगी, चलिये उठिये चाचा जी।' श्रवण कुमार नगीना बाबू को उठाते हुए बोला।

पिताजी से चाचा जी, क्या वक्त आ गया है। सोचते हुए नगीना बाबू खड़े हो गये। प्रिन्सिपल साब और बड़े बाबू उन्हें जाते हुये देख कर मुस्कुरा रहे थे।

संपर्क : चूना भट्टी, भोपाल
मो. 9406925564

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

प्रेमशंकर रघुवंशी

नामुकिन को ही मुमकिन बनाता है कवि

बिलासपुर में 1946 के नवम्बर माह में जन्मे माताचरण मिश्र आजकल भोपाल की प्रसिद्ध कॉलोनी मिनाल रेसीडेंसी में सेवामुक्त होकर आराम से लेखन कार्य में रत हैं। 'अकेला कोई नहीं है' के सालों बाद उनका दूसरा काव्य संग्रह 'जंगल चुपचाप' रामकृष्ण प्रकाशन से छपकर आया। तब शलभ श्रीराम सिंह ने भोपाल की एक भेंट में कहा था– 'रघुवंशी! एक चुपचाप कवि का एक चुपचाप कविता संग्रह प्रकाशित होने वाला है। तुम जरूर पढ़ना।' 'बात आई गई हो गई। संग्रह छप भी गया और उस पर फुटकर चर्चा भी हो गई, लेकिन वह मध्यप्रदेश साहित्य अकादमी की पाठकमंच योजना के अंतर्गत 2007 में हाथ लगा। अब तक इस चुपचाप कवि के चुपचाप संग्रह को चुपचाप अखिल भारतीय भवानी प्रसाद मिश्र पुरस्कार भी मिल गया। पाठकमंच योजना के अंतर्गत यह संग्रह मुझे भी यहाँ पढ़ने को मिला तो इसे एक बैठक में ही दो बार पढ़ गया। कोई भी पाठक किसी कृति को एक ही बैठक में दो बार शायद ही पढ़ता होगा। लेकिन मैंने पढ़ा। एक साथ लगे हाथ दोनों शो में एक ही पिक्चर देखना जैसी पाठक लीला ही कहें इसे। यह कृति ही ऐसी है कि इसकी रचनाओं की सादगी और भलमनसाहत पर आकर्षित हुए बिना रह नहीं सका। इसकी कविता के आशावादी स्वरों के ताप में जीवन का लक्चा दलिया मंद मंद सुगन्ध से सना खदक-खदक कर पकता हुआ पाया। सही कहा है कि 'माताचरण कविताओं में जीवन के भीतरी दुराग्रहों को झिझोड़ते हैं तथा अन्तर्संघर्ष को शक्ति देते हैं। इसीलिए उनकी कविताएँ मुट्ठी में बँधी जिन्दगी को रेत की तरह खिसकने से बचाती हैं।'

'बच रहेगा जो' नाम से तीसरा कविता संग्रह अंतिका प्रकाशन से छपा है और कुछ आकर्षक ढंग से ही अच्छी खासी जैकेट पहने मेरे पास आया है। तिरेपन कविताओं के इस संग्रह का नाम इसी में बिराजमान कविता से लिया गया है जो

पुस्तक : बच रहेगा जो, लेखक : माताचरण मिश्र, प्रकाशक : अंतिका प्रकाशन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस प्रकार है-'नामुमकिन नहीं होता कुछ भी/नामुमकिन को मुमकिन बनाने के लिए ही/होते हैं प्रयत्न/यही कर सकते हो तुम/तोड़ सकते हो अभेद्य कारा/लांघ सकते हो समुद्र/आसमान की अंतिम ऊँचाई तक जा सकते हो सोचते रह जाते हैं/जो किनारे बैठ/गिनते ही रह जाते हैं अपनी उम्र/.. जो प्रयत्न करेगा/जिसमें अब भी बदलने की आकांक्षा होगी/जो नामुमकिन को मुमकिन बनाना जानता है/उसे ही जानेगी दुनिया उसके बावजूद/जो मृत्यु के बाद भी जीता रहेगा/इस असार संसार में/सभी कुछ बच रहेगा उसके पास, वही रहेगा कहेगा/संसार की सारी कपोल कल्पित काल्पनिक कथाओं के नायकों से अलग' इस काव्यांश को देने का मेरा अभिप्राय यह है कि कवि माताचरण मिश्र का जीवन व्यापी दर्शन वह नहीं है कि जहाँ 'क्षण भंगुर जीवन की कलियाँ केहि जाने को प्रात खिले न खिले' वाली भाग्यवादी धारणा हो। यहाँ तो उत्साह और स्पन्दन है जिनकी झंकृति से व्यक्ति अपने कार्यकलापों और श्रमसारी प्रयासों से हर चीज संभव कर लेता है। जो लोग अकर्मण्यों की तरह तटस्थभाव से यह सोच-सोच कर सारी उम्र व्यतीत कर देते हैं कि क्या करें वे ताउम्र 'गटा पारची बबुए ही रहते हैं और इस संसार में खाली हाथ छूँछे ही चले जाते हैं।'

'बच रहेगा जो' संग्रह को 2012 की श्रेष्ठ कृति के रूप में 'दिव्य पुरस्कार' के योग्य पाया गया। यह तो एक पुरस्कार है जो नहीं मिलता तो भी यह कृति अपने वजन में 'बच रहेगा जो' ही होती और है भी। जैसा कि मैंने कहा है कि पूर्व के और इस संग्रह को भी एक बैठक में दो बार पढ़ गया। यदि मैं यह नहीं कहता तो अच्छी कविताओं के सही आस्वाद से वंचित रहा आता। यह मेरा ही नुकसान होता ठीक वैसा ही जैसा कि एक योग्य संग्रह को पुरस्कारकर्ता पुरस्कारणीय नहीं माने। 'बच रहेगा जो' की कविताएँ बिना हो हल्ला मचाये हमारे मन में समाकर अपना मुकाम खुद ही बना लेती हैं। संग्रह की कविताएँ अपना यह व्यक्तित्व स्वयं उद्घाटित करती हैं अतः लगे हाथ इन कविताओं का परिचय ले लिया जाये ताकि मेरे मन की बात आपके मन में समाकर आपके मन की भी बात हो सके।

संग्रह की पहली कविता है 'सुबह सबेरे'। यहाँ दुनिया एक रहस्य की तरह है जो सुबह-शाम अपने कार्य व्यापारों में लगी रहती है। जहाँ सुख-दुख, राग-विराग, संयोग-वियोग और जीवन-मरण का अभंग क्रम है। इनके मध्य जो हमें मिल जाये वही सत्य है। हम सब यात्री की तरह हैं और संसार मायावी है। आप संसार के किसी भी कोने में रहो। कहीं के भी कहलाओ किंतु रहोगे इसी संसार में और प्रस्थान भी इसी संसार से करोगे। इस जीवन दर्शन के साथ अगली कविता 'गाँव-घर' शीर्षक से है। जिसमें गाँव और घर में रहता आदमी अब भी आदमी की तरह जीवन जीने को तत्पर है लेकिन हमारे राजनेता दूसरे किस्म के आदमी बना रहे हैं किंतु इसमें अब भी इन राजनेताओं के फरेबों को तोड़ने की शक्ति है। एक समय ऐसा था कि बच्चों को पकड़कर ले जाने वालों का खौफ़ था और अब बच्चों को सरेआम स्वार्थ केन्द्रित बनाया जाकर, सामाजिक जीवन से दूर किया जा रहा है। यह अपहरण का ऐसा खतरनाक तरीका है जो बच्चों को स्वकेन्द्रित बनाता जा रहा है। गाँव हों या घर, सभी जगह यही हो रहा है जो चिंतनीय है। 'दाता ओ दाता' कविता पढ़ते हुए 'गीतांजलि' के रचियता रवीन्द्रनाथ टैगोर का स्मरण होता रहा जिसमें विश्वनियंता को याद करते हुए उनके दातृत्व के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की गई है। 'तृष्णा के तट' कविता में नदी के रूपक द्वारा कवि मानो उपदेशक की मुद्रा में कह रहा हो कि सांप्रदायिकता में संलग्न संस्थाएँ हों या दलबदलू लोग, ये सभी महत्त्वाकांक्षा की नदी के तट पर खड़े लगते हैं। वामपंथी भी अनिर्णय की दशा में खड़े हैं और तृष्णा की नदी अविरल बहे जा रही है। 'आदमी और पेड़ के बारे में' कविता की यह पंक्ति तो सूक्ति की तरह है, 'आदमी हो या पेड़' कभी भी उखाड़ कर फेंके जा सकते हैं। इसी से लगी कविता 'आत्मनेपदी' है जो आपधापी वाली बाजार छाप दिनचर्या से हटाकर हमें वहाँ ले जाती है

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जहाँ के आत्मलोक में प्यार की प्रार्थनाएँ हो रही हों।

'हाल फिलहाल' और 'सुबह सूरज' कविताओं में कविता लिखने से ज्यादा प्रकृति को आत्मसात करने की ऐसी हुलस कि, 'प्रकृति मेरे साथ थी/और रास्ता नजर आने लगा था धुँधलके में/जो सूझ नहीं रहा था अब तक।' भवानी प्रसाद मिश्र 'बरसात आ गई' कविता में 'बरसात आ गई रे.. खिड़की से झाँक ले तो लिखने में क्या धरा है।' जैसा उल्लास प्रकृति के सुन्दर दृश्यों को देखकर कहते हैं। 'चप्पल' कविता पढ़ते हुए मुझे राजगढ़ ब्यावरा निवास के 1977 से 1978 तक के वे दिन याद आ गये जहाँ मैं अपने कर्म क्षेत्र वाले महाविद्यालय से सटे मैदान में हर साल के दशहरे पर बाहर से आई जूते-चप्पल की दुकानों के नजारे देखता रहता था। वहाँ दशहरे पर नये जूते चप्पल पहनने के रिवाज हैं। मैं भी हर साल इन दुकानों से चप्पलें खरीद इस कविता की इन पंक्तियों जैसा महसूस करता था मानो.. चप्पलों ने मेरे पैरों में आकर/आगे का रास्ता खुद खोज लिया था/लेकिन दशहरे के इस त्यौहार पर अनेक लोगों को वहाँ नंगे पाँव भी देखता रहता था तब मेरी मनोदशा माताचरण की इस कविता की तरह हो जाया करती थी और सोचता रह जाता था कि इनका दुख भी कहीं दर्ज हो पायेगा या नहीं अब कि अपनी उसी धज में नंगे पाँव गली-गली घूमते-फिरते वक्त की सलवटों को ठीक करने में जुटे रहते। इस कविता को पढ़कर मुझे अपने काव्य-संग्रह 'पहाड़ों के बीच' की अनेक कविताओं का स्मरण हो आया। जिनमें राजगढ़ अंचल के दु:ख दर्द और संघर्ष के द्वंदों का काव्यांकन है। 'विसंगति' कविता का प्रारंभ ही ग़ज़ब का है। जिसमें पहली मर्तबा इस तरह के सूक्ति परक वाक्यांशों द्वारा कोई कविता इस तरह शुरू होती है कि, 'धर्म और रोटी की लड़ाई में/रोटियाँ बंदर ले उड़े/और सांप्रदायिकता सारे देश को खा गई/' इसी तरह 'कितनी शांति है' का यह काव्यांश देखिये कि 'पेट भरा हो तो सौ बहाने हैं सोचने के/सिर के बाल नोंचने के/' इसकी लयात्मकता भवानी भाई के लहजे जैसी कितनी प्रसन्नता दायी है इसका अनुमान आप ही लगायें।

'अभिशप्त महानगर' में महानगरों की रोजमर्रा की जिंदगी में जाने क्या-क्या अनहोनी होती रहती है और वह उन सबको सहने के लिए अभिशप्त रहता है, इसलिए कि वह अकेले-अकेले ही अपनी पीड़ाओं को चुपचाप झेलता रहता है। संभावनाएँ अनन्त हैं और मुक्ति इसी में है कि 'अपना आँचल पसार/जितना चाहो/अच्छे मन से लो/और/खुले हाथों दूसरों को दो/जीने का सबसे आसान रास्ता यही है।' रास्ते इस तरह, कबीर, पहचान और फूल जैसी छोटी-छोटी कविताओं में अपने-अपने रास्ते चलते हुए लोग, जो न किसी को गुरु बनाते, न शिष्य, लेकिन एक-दूसरे को ठीक से पहचानते हुए परस्पर आजाद नागरिकों की तरह यह भी बतियाते ही रहते हैं कि अब तक न तो हम और न ही हमारे बच्चे फूल की तरह खिल पाये हैं। इसके बावजूद हम स्वाधीन देश के लोगों की तरह एक ऐसा सपना साकार करने में लगे ही हैं कि चाहे हम न खिल पाए हों लेकिन हमारे बच्चों को जो खिलने-खिलाने के आसार और आश्वासन मिलते रहते हैं। जीवन की आपधापी में ऐसा करना धरना संभव नहीं कि जिससे अपने निजत्व तक को बचाया जा सके या हम भी बचे पायें लेकिन इस तरह की जटिलता में केवल कविता ही है जो-'हौले से

रास्ते इस तरह, कबीर, पहचान और फूल जैसी छोटी-छोटी कविताओं में अपने-अपने रास्ते चलते हुए लोग, जो न किसी को गुरु बनाते, न शिष्य, लेकिन एक-दूसरे को ठीक से पहचानते हुए परस्पर आजाद नागरिकों की तरह यह भी बतियाते ही रहते हैं कि अब तक न तो हम और न ही हमारे बच्चे फूल की तरह खिल पाये हैं। इसके बावजूद हम स्वाधीन देश के लोगों की तरह एक ऐसा सपना साकार करने में लगे ही हैं कि चाहे हम न खिल पाए हों लेकिन हमारे बच्चों को जो खिलने-खिलाने के आसार और आश्वासन मिलते रहते हैं। जीवन की आपधापी में ऐसा करना धरना संभव नहीं कि जिससे अपने निजत्व तक को बचाया जा सके या हम भी बचे पायें लेकिन इस तरह की जटिलता में केवल कविता ही है जो-'हौले से तब भी/तुम तक आयेगी/जरूरी नहीं/तुम लिखो ही।'

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तब भी/तुम तक आयेगी/जैसी मैंने/तुम लिखी हो। कविता के साहचर्य को प्रकट करती यह 'आत्मसंभवा' कविता अपनी अभिव्यंजना में अकेली है। जिसकी 'पगडंडी' पर चलते हुए कहीं कुछ नहीं होगा/तब भी/स्मृतियाँ तो होंगी ही।

'विजेता', 'आमची मुंबई' और संग्रह के अंत की कविता 'बुतों के शहर में' एक साथ पढ़ी जानी चाहिए, जिनमें व्यक्त यह अनुभूति कि शहरों को तो हम बड़े गर्व से अपना शहर कहते हैं लेकिन वहाँ के जीवन में सिवाय भाग दौड़ है और अपनत्व तो दूर तक नहीं होता। जिनका बचपना भी वहीं बीता उनके लिए भी शहर वैसे आत्मीय और कुशल मंगल के हाल-चाल पूछने वाले नहीं रहे। फिर भी खोये हुए शहर का आकर्षण जीवन भर बना रहता है। और उसकी माटी में लीन होने तक की कामना बनी रहती है। इसी तरह एक साथ पढ़ी जाने वाली कविताएँ हैं जिन्हें पढ़ते हुए धूमिल का स्मरण प्रसंग-प्रसंग पर क्रौंधता रहता है। ये हैं, 'फौलादी चाकू', पकी हुई ईंट, रामफल और मैं, आजादी के आढ़तिये और आजादी की 59वीं सालगिरह के एक दिन पहले। अज्ञेय की कविताओं की मूल प्रकृति से आगे की कविताओं में 'फल चुग्गी और तितलियाँ' एवं 'ये मेरे प्रतिरूप' जैसी कविताओं को देखा जा सकता है और जब मैंने 'कहाँ हो सूत्रधार', 'ये वक्त के बहेलिये', सचमुच अगर हो अपने को सिद्ध करो महाप्रभु, 'दधीचि', जैसी कविताएँ पढ़ीं तो धर्मवीर भारती का 'अंधायुग' काव्य नाटक याद आता रहा। इसी तरह का स्मरण 'कोटैय्या' कविता को पढ़ते हुए 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी का पात्र बगल में बैठकर बतियाता सा महसूस होता रहा। इस खंड में कविताओं के ये वर्गीकरण जिनका स्मरण दिलाते हैं उनके असर कतई नहीं हैं इन कविताओं में। यह स्मरण वैसा है जैसे कि गंगा को देखकर अपने गाँव की नदी को याद करना या किसी को देखकर उसके जैसे किसी की याद आना।

कुछ और कविताओं पर संक्षेप में कहने के लोभ को नहीं रोकना चाहूँगा। एक कविता है 'माँ की याद' इसे पढ़ते हुए मैं अपने पास बैठी 96 वर्षीय माँ की तरफ देखता हूँ। वह बारीक सुपारी कतर रही है। उसी हालत में पूछती है-क्या देख रहा है रे। मैं उसे कोई उत्तर न देकर माताचरण मिश्र की यह कविता सुनाता हूँ। सुनकर वह गंभीर हो गई और बोली-ये माँ तो मैं ही हूँ जिसके मरने के बाद की कविता तूने अभी से सुना दी। यह कहकर वह सुपारी कतरने में लग गई। माँ की यह प्रतिक्रिया सुनकर लगा कि कविता पर इतनी सहज और जीवंत टिप्पणी शायद ही किसी को मिली हो और शायद ही किसी कविता का शीर्षक इतना जीवंत हो सका हो।

'ये मेरे प्रतिरूप' कविता के इस शीर्षक के लिए माताचरण मिश्र ने अज्ञेय को याद किया है। लेकिन यह याद भर है। जैसे, 'हम ही खोज लेते हैं सौंदर्य/गढ़ लेते हैं कोई प्रतिमान/हम ही ढूँढ लेते हैं कोई मोनालिसा/' अब इन पंक्तियों में सौंदर्य के प्रतिमान गढ़ने पर ऐसी बात नहीं कही गई है जैसे कि अज्ञेय प्रतिमान मैले पड़ गये हैं जैसी उक्ति में कहते हैं। यहाँ तो माताचरण का कवि अपनी अन्वेषी प्रकृति पर विश्वास करते हुए अपने प्रयासों से प्राप्त प्रतिमानों की बात कर रहा है। 'पचमढ़ी की सुबह' कविता पढ़ते हुए मुझे होटल की सीढ़ियों पर बैठे जूता पालिश करते एक बच्चे की वह छवि याद हो आई जो किसी कहानी में पढ़ी होगी। इसी तरह शीर्षक की वजह से निर्मल वर्मा को याद करते हुए 'हर बारिश में' कविता है। जब आप किसी के माथे से पगड़ी उठाकर अपने माथे पर धरेंगे तब यह तो कहना ही होगा कि यह पगड़ी फलाना की है। इस कविता की पगड़ी भर निर्मल वर्मा की है माथा तो माताचरण का ही है भाई। वैसे भ्रांतिवान अलंकार तो 'अपने अपने रास्ते' शीर्षक में भी है सो अपने अपने अजनबी नाम की याद दिला देता है। लेकिन इस कविता का 'वह' सर्वनाम से सम्बोधित जब 'अपने शिकारी पंजों की छाप छोड़ता/अपने रास्ते पर सरपट भागता चला' जाता है तब हम सिर्फ इसी कविता में डूबते जाते हैं।

'काला सच और सफेद झूठ' के बारे में पढ़ते हुए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लगा कि इस शीर्षक में निहित मुहावरे को समझाने के लिए यह कविता एक उदाहरण के तौर पर पेश की जा सकती है। ऐसे ही 'आजादी के आढ़तिये' अपने आप में एक नए मुहावरे की रचना का उपक्रम लगता है। एकदम निजी अनुभूतियों के अंतर्गत 'पिता-पुत्र' कविता को देखा जा सकता है और 'शेष यात्रा' को पढ़ते हुए लगता रहा कि इस कविता की प्रकृति और धज गीत से मेल खाती है। 'काया और माया' कविता का जीवन दर्शन जैन आचार्य क्षमासागर की कविताओं से मेल खाता लगा। काया और माया का-'यही तो रहस्य है।' इस संसार और इस खेल का भी जो अगम नहीं होते हुए भी अगम्य है। उसकी ही थाह लेना है/और../बूझना है एक दिन/ बुझने से पहले इसमें 'अगम' और 'आगम' तथा 'बूझना' और 'बुझने' जैसे समान ध्वनिवाचक शब्द हैं जिनका प्रयोग कौशल आचार्यों जैसा है। आचार्य विद्यासागर जी के 'मूकमाटी' महाकाव्य में समानभाषी शब्दों की अपार छटा है।

इस संग्रह पर लिखने का मन बना तब एक बात मन में आई कि संग्रह की किसी एक मनपसंद कविता को केन्द्र में रखकर पूरे संग्रह और कवि के पूरे व्यक्तित्व पर चर्चा की जाये। ऐसा एक प्रयोग डॉ. कांतिकुमार जैन द्वारा संपादित शिवकुमार श्रीवास्तव पर छपे ग्रंथ में अपने आलेख में उनकी एकमात्र कविता को केन्द्र में रखकर उनके काव्य व्यक्तित्व पर मैंने चर्चा की है। यह मन इसलिए हुआ कि इसे संग्रह में 'पहचान', 'बच रहेगा जो', 'इस अभ्यारण्य में', 'घर', 'काया और माया' एवं 'एक मामूली दृश्य' जैसी शानदार कविताएँ अपने कलेवर में क्षमता रखती हैं कि वे सौ रामा का एक ही राम वाली सूक्ति का अर्थ विस्तार देने की क्षमता रखती हैं।

माताचरण मिश्र की ये कविताएँ हैं, 'जिनसे मिलने पर' यह लगा कि 'ये अजनबी कतई नहीं हैं' हमारे लिए। ये वे कविताएँ हैं जो अपने रूप, रंग, गुण, स्वभाव और प्रस्तुत कौशल की वजह हमें आत्मीय भाव से ऐसे आकर्षित करती हैं मानो ये हमारी खूब-खूब जानी पहचानी और अपनी ही हैं। कोई भी कविता दूर की 'कौड़ी' भिड़ाने वाली नहीं लगती क्योंकि संग्रह की कोई भी कविता 'अजनबी नहीं.. कहीं न कहीं.. देख चुकी' जैसी अनुभव होती रहती हैं।

संपर्क : प्रताप कॉलोनी, (चाल के पीछे)
हरदा (म.प्र.)-461331
मो. 09425044895

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. सरजू प्रसाद मिश्र

आवाह्यामि : स्मृतियों की अनमोल बस्ती

जयशंकर प्रसाद की पंक्तियाँ हैं-
बस गई एक बस्ती है,
स्मृतियों की इसी हृदय में।
नक्षत्र लोक फैला है,
जैसे इस नील निलय में॥

स्मृतियाँ मानव-जीवन का संबल होती हैं। उन्हें गँवाकर मानव कितना दीन-हीन हो जाता है, यह करुण दृश्य भी कभी-कभी देखने में आता है। व्यक्तियों एवं स्थानों से संबंधित स्मृतियों का शब्दांकन संस्मरण है। ये व्यक्ति वरिष्ठ, कनिष्ठ, समवयस्क, पूज्य अथवा श्रद्धेय होते हैं। इनसे हमारा जीवन किसी न किसी रूप में प्रभावित हुआ रहता है। उनका स्मरण करते हुए संस्मरणकार उनके व्यक्तित्व के विशिष्ट गुणों का दिग्दर्शन कराता है। प्रायः संस्मरण दिवंगत व्यक्तियों पर लिखा जाता है। डॉ. रमेशचन्द्र शाह के संस्मरण-संग्रह 'आवाह्यामि' में समर्पण पृष्ठ पर उद्धृत काव्य पंक्तियाँ बहुत कुछ कह दे रही हैं,

'एक-एक कर/सारे अच्छे लोग जा रहे/जिन पर किया भरोसा हमने/और.... जिन्होंने हम पर।/ अच्छा हो, मरने से पहले/मैं मुनीम इस उजड़े घर का/सील गए इन खातों को/कुछ धूप दिखा दूँ../कल के ये आँकड़े/किसी को/दीखें तो कल।'

संस्मरण में संस्मरणकार का व्यक्तित्व भी अभिव्यक्त हुए बिना नहीं रहता। पहले ही संस्मरण 'शंभु दाज्यू' में लेखक का बचपन, घर की आर्थिक स्थिति, संकोची और दब्बू स्वभाव, सब कुछ आ गया है। उन्हीं से 'वांडरलस्ट' और साहित्यिक महत्त्वाकांक्षा प्राप्त हुई। लेखक ने अपनी सुरती खाने की आदत पर अज्ञेय द्वारा किए गए व्यंग्य को भी गोपन नहीं रखा है। स्वदोष-दर्शन की प्रवृत्ति पाठक के मन में लेखक की छवि उज्ज्वल रूप में पेश करती है। मलयज पर लिखते हुए वे कहते हैं, 'वे आसामान्य रूप से निःस्पृह और संयमी व्यक्ति थे, मेरी तरह

पुस्तक : आवाह्यामि, लेखक : रमेशचन्द्र शाह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

चूना-सुरती सरीखे दुर्व्यसनों के कैदी कतई नहीं।' विपिन अग्रवाल पर कुछ लिख पाने की अक्षमता का इजहार उन्होंने बड़े दुख के साथ किया है, ''उन्हें पढ़ते हुए या उनके नाटक देखते हुए जैसा प्रभाव मुझ पर पड़ता था, उसे ठीक-ठाक परिभाषित या व्याख्यायित करना मुझे क्यों इतना दुस्साहस लगता रहा? मुझे आज भी अपनी यह अक्षमता सताती है।' संस्मरणों में आत्म प्रचार या स्वयं को महिमामंडित करने की प्रवृत्ति का लेश मात्र भी नहीं है।

'आवाह्यामि' के संस्मरणों में पहाड़, सीधी और इलाहाबाद का जिक्र बार-बार आता है। सीधी की बंजर नीरसता से बचने के लिए वे इलाहाबाद बार-बार जाया करते थे। ''सीधी जहाँ मैं उन दिनों प्राध्यापकी कर रहा था,विंध्यप्रदेश का सर्वाधिक पिछड़ा कस्बा था, जहाँ पार्क या थियटर या सिनेमाघर की कौन कहे, कायदे का बाजार और एक होटल तक नहीं था। सीधी को रमेश जी ने 'अंडमान' और 'अरण्यकांड' तक कह डाला है। इलाहाबाद के प्रति भक्तिभाव प्रकट करते हुए उसे उन्होंने 'साहित्य-तीर्थ' कहा है। अपने साहित्यिक विकास के लिए वे इलाहाबाद के ऋणी हैं, ''मैं नहीं समझता, इस देश में इलाहाबाद के समकक्ष कोई ऐसा नगर होगा जहाँ उच्चतम कोटि की साहित्यिक विभूतियों का ऐसा अहेतुक स्नेह-सान्निध्य हमारे जैसे नितांत नौसिखिए लेखकों के लिए इतनी सहजता से उपलब्ध रहा हो।'' एक अन्य संस्मरण में लिखते हैं, ''साहित्यकों का ऐसा 'ओपन हाउस' मैंने इलाहबाद को छोड़ और कहीं नहीं देखा। बगैर किसी पूर्व-सूचना के कभी भी, कहीं भी किसी के भी घर जा टपको-मजाल कि किसी के माथे पर शिकन तक आए।''

इलाहाबाद के श्रीराम वर्मा ने सेतुबंध रामेश्वर बनकर रमेश जी को डॉ. जगदीश गुप्त से मिलवाया। इस भेंट ने शाह जी को ऐसे मंच पर पहुँचा दिया जहाँ से उन्हें साहित्य-क्षेत्र में प्रवेश की राह खुलती दिखी। 'अनूठे दीक्षागुरु' शीर्षक के संस्मरण पठनीय ही नहीं, अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। जिस अखिल भारतीय संगोष्ठी में शाह जी को प्रथम वक्ता के रूप में उतारा गया उसने उनकी प्रतिभा के अभूतपूर्व तेज को देखा। कहाँ मंच पर जाने के पूर्व टाँगें काँप रही थीं, होशोहवास गुम थे और कहाँ एक चमत्कार घटित हो गया- 'किंतु अकस्मात..जाने क्या हुआ' मेरी टाँगों का कंपन थम गया और मैंने बोलते सुना अपने को-मानो किसी दूसरे ही व्यक्ति को, जो कि उसी क्षण मुझ में प्रविष्ट हो गया था।'' यह घटना उन्हें डॉ. रघुवंश और क्रमश: रामस्वरूप चतुर्वेदी एवं विजयदेव नारायण साही के निकट ले गई। 'क ख ग' पत्रिका के लिए शाह जी ने अज्ञेय के काव्य-संग्रह 'आँगन के पार द्वार' की समीक्षा लिखी, जिसके प्रकाशन ने उन्हें रातोंरात प्रसिद्धि दिला दी। डॉ. रघुवंश से उन्हें महत्त्वपूर्ण सीख मिली-''रमेश, एक बात गाँठ बाँध लो। कभी भी अपनी प्रशंसा से खुश मत होना। अपने सामने हमेशा सचमुच चोटी के लेखकों को ही मानदंड की तरह रखना। सोचना कि उनकी दृष्टि में तुम्हारा लिखा कहाँ कितना ठहरता है।'' रमेश जी ऐसे प्रेरणादायी महानुभावों के सत्संग-लाभ हेतु स्वयं को सौभाग्यशाली मानते हैं।

पत्र और डायरी लेखन में गहरी रुचि रखने वाले रमेश जी ने इन दोनों विधाओं के लुप्त होते जाने पर गहरी चिंता व्यक्त की है। साहित्यकारों से उनका पत्र-व्यवहार निरन्तर चलता रहा। उनमें से कुछ पत्र इन संस्मरणों में उद्धृत हैं। सर्वप्रथम उन्होंने मुक्तिबोध को उनकी 'लहर' में प्रकाशित 'चौराहे' शीर्षक कविता को पढ़कर पत्र लिखा लेकिन लंबे बेसब्र इंतजार के बाद भी पत्रोत्तर नहीं आया। आखिर भोपाल के हमीदिया अस्पताल में बीमार मुक्तिबोध से भेंट हुई। पत्रोत्तर न देने पर उन्होंने खेद प्रकट किया और शाह जी की एक कविता की पंक्तियाँ दुहराते हुए उसकी एक असंगति की ओर संकेत किया। मुक्तिबोध की जीवन व्यापी वेदना और जीवनबोध की दोस्तोएवस्की के पड़ोस का निरूपित करते हुए रमेश जी ने एक नई बात कही है- ''यदि मुक्तिबोध ने उपन्यास में अपने कृत्य को ढाला होता तो संभवत: उन्हें अपनी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लंबी कविताओं की तुलना में अधिक भरपूर उन्मोचन हासिल हुआ होता।''

इन संस्मरणों में गज़ब का संतुलन है। न कहीं डंडी मारने की कोशिश है, न अंध भक्ति-प्रेरित अतिवादी पक्षपात। अज्ञेय का ही उदाहरण लें। उन्होंने वात्स्यायन को तीव्र भावावेगों का व्यक्ति कहा है लेकिन यह भी जोड़ा है कि 'मानवीय दुर्बलताओं के प्रति उनमें पर्याप्त सहानुभूति और स्वीकार-भाव था। अपने जीवन-सिद्धांतों के प्रति दृढ़ किंतु कट्टर सिद्धांतवादी की विडंबनाओं से मुक्त।' अज्ञेय अपने प्रथम काव्य-संग्रह 'भग्नदूत' की भूमिका जयशंकर प्रसाद से लिखवाना चाहते थे। प्रसाद जी ने इन्कार कर दिया। माध्यम जैनेन्द्र जी थे। इस उपेक्षा को अज्ञेय नहीं भूल पाए और प्रसाद को 'विश्वविद्यालयों का कवि' घोषित किया। जैनेन्द्र और अज्ञेय में बहुत भिन्नताएँ हैं। मसलन अज्ञेय के लिए यायावरी जीवन का संग है, जैनेन्द्र उसके प्रति उदासीन थे। अज्ञेय प्रकृति से जुड़े हुए थे, जैनेन्द्र नहीं। जैनेन्द्र को सार्वजनिक कर्म से सृजन की प्रेरणा मिलती थी। जैनेन्द्र के चिंतन पक्ष पर अज्ञेय और मुक्तिबोध की राय एक है- उनका चिंतन तर्कसंगत न होकर मनमाना एवं इच्छित है। इसके लिए दोनों ने 'सोफिस्ट्री' शब्द का प्रयोग किया है। अपने सूक्ष्म निरीक्षण एवं अनुभव के आधार पर रमेश जी ने साहित्यकारों के व्यक्तित्व के संबंध में जो तुलनात्मक निष्कर्ष निकाले हैं वे सूत्र रूप में बहुत कुछ कह जाते हैं, यथा- 'राम स्वरूप जी के साथ लगातार यह चेतना बनी रहती थी कि आप एक बड़े आलोचक के सान्निध्य में हैं जबकि डॉ. रघुवंश के साथ आप यह बड़े मजे से भूले रह सकते थे।' श्रीलाल शुक्ल का संस्मरण पढ़ते हुए यह बात हमारे ध्यान में आती है कि रमेश जी उस लेखक को अधिक अंक देते हैं जो 'प्रभावशाली संवादी' यानी 'कन्वर्सेशनिस्ट' भी हो। यह वृत्ति उसकी चिट्ठी-पत्री में भी दिखाई देती है।

अज्ञेय का ही उदाहरण लें। उन्होंने वात्स्यायन को तीव्र भावावेगों का व्यक्ति कहा है लेकिन यह भी जोड़ा है कि 'मानवीय दुर्बलताओं के प्रति उनमें पर्याप्त सहानुभूति और स्वीकार-भाव था। अपने जीवन-सिद्धांतों के प्रति दृढ़ किंतु कट्टर सिद्धांतवादी की विडंबनाओं से मुक्त।' अज्ञेय अपने प्रथम काव्य-संग्रह 'भग्नदूत' की भूमिका जयशंकर प्रसाद से लिखवाना चाहते थे। प्रसाद जी ने इन्कार कर दिया। माध्यम जैनेन्द्र जी थे। इस उपेक्षा को अज्ञेय नहीं भूल पाए और प्रसाद को 'विश्वविद्यालयों का कवि' घोषित किया। जैनेन्द्र और अज्ञेय में बहुत भिन्नताएँ हैं। मसलन अज्ञेय के लिए यायावरी जीवन का संग है, जैनेन्द्र उसके प्रति उदासीन थे। अज्ञेय प्रकृति से जुड़े हुए थे, जैनेन्द्र नहीं। जैनेन्द्र को सार्वजनिक कर्म से सृजन की प्रेरणा मिलती थी।

संस्मरणकार को कुछ धक्कादायक अनुभव भी हुए। श्रीपतराय ने उनका कहानी-संग्रह छापने के लिए मँगाया और फिर अचानक पांडुलिपि लौटा दी। अज्ञेय के पास भेजी गई काव्य-संग्रह की पांडुलिपि का भी यही हश्र हुआ था। 'वह पांडुलिपि उनके पास छह बरस पड़ी रही और उसे प्रकाशक नसीब नहीं हुआ। क्यों नहीं हुआ, यह मेरे लिए आज भी रहस्य है।' इससे उत्पन्न कटुता को शाह जी हजम कर गए। साही और विपिन कुमार अग्रवाल पर लिखते हुए शाह जी ने हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त की है, क्योंकि वे उनके गुरु भी रहे। साही ने उन्हें पी.एच-डी. कर लेने की सलाह दी थी। उन साहित्यिकों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता एवं भरपूर आभार व्यक्त करने में जरा भी कंजूसी नहीं बरती है, जिनसे उन्हें प्रेरणा एवं प्रोत्साहन प्राप्त हुआ जैसे अशोक सेक्सरिया एवं रमेश बक्षी। बक्षी ने शाह जी की पहली-पहली कहानी को, खुद लिफाफा बंद कर के 'लहर' जैसी 'अवाँगार्द' पत्रिका को भिजवा दी थी।

शाह जी की जीवन संगिनी स्वर्गीया श्रीमती ज्योत्स्ना मिलन उनके लिए 'स्मृति' नहीं 'कृति' ही बनी हुई हैं। गुजराती भाषी ज्योत्स्ना जी 'कॉस्मोपालिटन' महानगर मुंबई की उपज थीं। पति के साथ उन्हें सीधी जैसे पिछड़े और उजाड़ कस्बे में रहना पड़ा। महानगरीय जीवन में पले व्यक्ति में सहनशीलता, धैर्य एवं समायोजन शक्ति होती है। इन्हीं गुणों के आधार पर उन्होंने पति के घर के सदस्यों के विरोध का सामना कर धीरे-धीरे उन्हें

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh / Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अपना बना लिया। कभी-कभी 'इंपल्सिव' और 'मूडी' हो जानेवाली ज्योत्स्ना जी मन में उठने वाली किसी भी बात को छिपा कर नहीं रख सकती थीं। अपने आप में कई सारे विरुद्धों का अनोखा सामंजस्य कह कर शाह जी ने अपनी कवि, लेखिका पत्नी के बारे में बहुत कुछ कह दिया है।

रमेशचन्द्र शाह पश्चिमी चिंतन और मार्क्सवाद की जयमाला फेरने वाले साहित्यकार नहीं है। उनकी भारतीय संस्कृति और दर्शन में अगाध पैठ है। पुरातत्व और सांस्कृतिक अवशेषों के भ्रमण में भी उनकी गहन रुचि है। विद्यानिवास मिश्र, गोविन्द्रचन्द्र पांडे, दर्शनाचार्य दयाशंकर एवं प्रो. जे.एल. मेहता से उनके संबंधों के सूत्र दर्शन, संस्कृति एवं साहित्य की त्रिवेणी के माध्यम से जुड़े हैं।

साहित्य को रमेश जी ने जीने को अर्थ देनेवाला जीवन व्यापी व्यसन कहा है। हिन्दी का साहित्यिक परिवेश उन्हें बहुत दम घोटू एवं निराशाजनक लगा है। कई स्थानों पर उन्होंने इस पर टिप्पणी की है। शैलेश मटियानी के संस्मरण में उन्होंने दुःख के साथ लिखा है, 'यह हमारा सार्वजनिक दुर्भाग्य है कि इस लिहाज से हिन्दी का परिवेश-लेखकीय और पाठकीय परिवेश भी, अत्यंत कुंठावादी और रचनाद्रोही है।' साहित्यकार एवं उनकी कृति के मूल्यांकन में रागद्वेष अधिक सक्रिय रहते हैं। इस पुस्तक को पढ़ते हुए यह प्रश्न उभरता है कि इसमें सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, निर्मल वर्मा, साही, श्रीकांत वर्मा, त्रिलोचन आदि तो हैं लेकिन वामपंथी चिंतन से जुड़े, भैरवप्रसाद गुप्त, मार्कण्डेय, अमरकांत, दूधनाथसिंह आदि नहीं हैं। निश्चित ही इसका कारण लेखक का उन लोगों के निकट सम्पर्क में न होना है। सत्यप्रकाश मिश्र की पुस्तक 'आलोचक एवं समीक्षाएँ' से दिया गया निम्नलिखित उद्धरण रमेशचन्द्र शाह के रुझान को संकेतित करता है, रमेशचन्द्र शाह 'कविता के नए प्रतिमान' में यदि कृति मुख से प्रतिमानों की खोज की गई होती तो संभवत: निष्कर्ष भिन्न होते।...' कविता के नए प्रतिमान प्रारंभ से शोध-प्रबंधों की भाँति एक-आयामी रचना है जो अपने आप में वैज्ञानिक दृष्टि नहीं मानी जा सकती।.. पहलवान को अपनी शक्ति पर जब भरोसा नहीं रहता तो वह अपना जोड़ ही इतना हलका चुनता है कि देखने वाले यही कहते हैं कि उस्ताद के दिन लद गए।''

'आवाहयामि' एक साहित्यिक के हृदय में बसी स्मृतियों की बस्ती ही नहीं बल्कि हिन्दी के साहित्यिक परिवेश में घर कर गई छुआछूतवादी सामाजिकता तथा बहिष्कारधर्मी मानसिकता के खिलाफ एक प्रभावशाली विद्रोह भी है।

संपर्क : 46, लालित्य पठान ले आउट,
रिंग रोड, नागपुर-440022
मो. 09422148067

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

डॉ. गंगा प्रसाद बरसैंया

दस्तखत : आत्मालाप और आत्म-संवाद की ग़ज़लें

ऋषिवंश- जिनका पूरा नाम विद्याशंकर मिश्र है- बहुमुखी प्रतिभा के धनी हिन्दी जगत के सुपरिचित कलमकार हैं, जो हिन्दी गद्य और पद्य की विभिन्न, विधाओं के पटु लेखक हैं। अब तक उनकी एक दर्जन से अधिक कृतियाँ प्रकाशित हो चुकी हैं, जिनमें गीत और ग़ज़ल के अतिरिक्त तीन उपन्यास भी है। वैसे मुख्यत: गीत और ग़ज़ल लेखन में उन्हें महारत हासिल है। अब तक उनके गीत-ग़ज़लों के नौ संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। 'दस्तखत' शीर्षक से ग़ज़लों का दसवाँ संग्रह अभी-अभी प्रकाशित होकर आया है जिसमें उनकी निन्यानबे ग़ज़लें संग्रहित हैं। निन्यानबे का आँकड़ा पढ़कर कुछ अटपटा सा लगा क्योंकि ऋषिवंश स्वाभावत: किसी निन्यानबे के चक्कर में नहीं पड़ते। सौ का आँकड़ा पूरा करना उनके लिये तो बाँये हाथ का खेल है। लगता है कि निन्यानबे के चक्करों में फँसी भारतीय जनता की ओर उनका संकेत है।

ऋषिवंश स्वतंत्र-चेता रचनाकार हैं। वे इस या उस चक्कर में नहीं पड़ते। उनकी राह अपनी है जो न किसी से प्रभावित है और न किसी का अनुसरण करती है। 'दस्तखत' की ग़ज़लें आत्म-संवाद और आत्मालाप की ग़ज़लें हैं। इनमें उनके अन्तस मनोभावों का चिन्तन और मंथन प्रमुख है। वे न किसी पर प्रहार करते हैं न किसी की शिकायत करते हैं और न जोर-शोर का हाहाकार करते हैं। इनमें जीवन-जगत में व्याप्त अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों का आंकलन-विश्लेषण और अभिव्यंजन अवश्य है, क्योंकि कोई भी संवेदनशील चेतना-सम्पन्न व्यक्ति जीवन परिवेश से अप्रभावित नहीं रह सकता। मनोभावों की अभिव्यंजना का शब्दालोक कई बार सांकेतिक सा अवश्य रह जाता है जिसे समझने-बूझने के लिए एकाग्रता और बौद्धिकता की आवश्यकता अवश्य होती है। उनकी व्यंजना का शब्दालोक आकाश की ऊँचाइयों को तो छूता है,

---

पुस्तक : दस्तखत, लेखक : ऋषिवंश
प्रकाशक : नमन प्रकाशन, दिल्ली-2

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh,Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जिसमें कई बार आध्यात्मिकता और आस्था का स्वर-संकेत भी ध्वनित होता है, किन्तु धरती से उसका जुड़ाव निरन्तर बना रहता है। भावना और कल्पना का मूल उत्स उनकी वही जमीन है, जहाँ वे जी रहे होते हैं। जिसमें प्राकृतिक सौंदर्य, राग-विराग, दुख-सुख, भूख-गरीबी, शोषण-विषमता, गाँव-शहर, परिवार, किसान-मजदूर, खेती-किसानी आदि... सभी कुछ समाहित है। वे यह सब देखकर मन ही मन गुनते और गुनगुनाते हैं। उनका शब्द-प्रयोग अनूठा है। 'बेपर्दाघाटी' 'बूढ़ेपहाड़', 'कमसिन पहाड़ी', 'चटियल मैदान' आदि को उनकी कलम की आँख बारीकी से देख पाती है। आज की पीड़ा भरी ऊबड़-खाबड़ जिन्दगी उन्हें बार-बार व्यथित करती है। एक ओर भूख से बेहाल लोगों की कलपती जिन्दगी है, दूसरी ओर सारी सुविधाओं से सम्पन्न संसदी-जीवन की मस्ती है। यह विषमता की खाई भला किसे व्यथित न करेगी?-

'भूखे लोग सड़क पर उतरे, साहूकार नदारत था,

खाया और अघाया संसद, उनके लिए अनाज नहीं'।

'आदमी दर्दों की दास्तान'... बनकर रह गया है। 'दरिद्रनारायणों'... की संख्या रोज बढ़ रही है। 'मर्ज बढ़ता ही गया ज्यों-ज्यों दवा की'।... जीवन जीना दूभर हो रहा है। लगता है-'दर्द ही तो जिन्दगी का सार'... बन गया है। सबल लोगों के हाथों में सत्ता और कानून है जो रोज नियम-कानूनों की धज्जियाँ उड़ाने में गौरव मानते हैं, उनके दबाव में सामान्यजन विवशता का जीवन जी रहा है-

'हर शहर कब्जे में है शैतान के, और इंसानी अमल मजबूर है

खून पी लेंगे सारी दुनिया का, होंगे बदनाम नहीं, है ये हुनर।

कैसा बेदर्द यह जमाना है कैसे खुदगर्जियों के हैं मंजर'।...

झण्डों-फण्डों के चक्कर में किसी को गरीबों की ओर देखने का समय नहीं हैं-

'झण्डे ही झण्डे हैं, संसद के फंडे हैं

ठेके पर देश लिया, कैसे हथकण्डे हैं।'...

कुल मिलाकर जीवन में सम्पन्नता-विपन्नता का संघर्ष प्रबल है-

'रोटी की लड़ाई है/भूखों की लगाई है

थैली जहर की काली, खद्दर में छिपाई है।'

पाखंड का विष सर्वत्र व्याप्त है। सच्चाई मर रही है, झूठ बुलन्दी पर है-

'भूखी दुनिया, सच कंगाल...'।

शहरों की स्थिति और भी विकराल है। शहरों का स्वार्थी, प्रदूषित जीवन देखकर कई बार कवि का मन अपने ग्रामीण जीवन का स्मरण करता है, जहाँ खुला आसमान और शुद्ध हवा है। जहाँ की नमक तेल, चुपड़ी मोटी रोटी सुस्वाद लगती है। कंक्रीट का शहरी जीवन पथरा गया है जहाँ रस नहीं है। जहाँ स्वार्थों की नाली बजबजाती रहती है।

संग्रह की कई ग़ज़लों की पंक्तियाँ दो-दो शब्दों की हैं किन्तु उनका ध्वन्यार्थ बहुआयामी है। ऋषिवंश की यह बड़ी विशेषता है कि वे अर्थगर्भित व्यंजनासम्पन्न शब्दों का प्रयोग करते हैं। वे जिन्दगी को बारीकी से देखते हैं-चाहे तरुणाई का विदेश गमन है, चाहे बूढ़े परिजनों का अकेलापन।

'लड़के बच्चे गये विदेश

> *ऋषिवंश स्वतंत्र-चेता रचनाकार हैं। वे इस या उस चक्कर में नहीं पड़ते। उनकी राह अपनी है जो न किसी से प्रभावित है और न किसी का अनुसरण करती है। 'दस्तखत' की ग़ज़लें आत्म-संवाद और आत्मालाप की ग़ज़लें हैं। इनमें उनके अन्तस मनोभावों का चिन्तन और मंथन प्रमुख है। वे न किसी पर प्रहार करते हैं न किसी की शिकायत करते हैं और न जोर-शोर का हाहाकार करते हैं। इनमें जीवन-जगत में व्याप्त अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों का आंकलन-विश्लेषण और अभिव्यंजन अवश्य है, क्योंकि कोई भी संवेदनशील चेतना-सम्पन्न व्यक्ति जीवन परिवेश से अप्रभावित नहीं रह सकता।*

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मध्यप्रदेश साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका 'साक्षात्कार' के जुलाई-अगस्त माह के अंक मिले। इससे पहले के अंकों में हिन्दी भवन जैसा प्रतिष्ठित संस्थान वंचित रहा। पत्रिका को पढ़ा। सामग्री और चयन प्रशंसा योग्य है। आशा है भविष्य में भी आपकी पत्रिका नियमित रूप से प्राप्त होती रहेगी। दीपावली की अग्रिम शुभकामनाओं के साथ। डॉ. गोविंद व्यास, बी-52, गुलमोहर पार्क, नई दिल्ली।

'साक्षात्कार' पूर्णांक 440 हस्तगत्। संपादकीय में, जरा याद करो कुर्बानी और सामाजिक आंदोलन पर केंद्रित महान् बलिदानियों एवं बड़ी-बड़ी हस्तियों के विचार प्रेरणादायी और मर्मस्पर्शी लगे। 'साक्षात्कार' में डॉ. ब्रजबिहारी कुमार से जया केतकी की विभिन्न पहलुओं पर बातचीत, सटीक और सार्थक लगी। 'धरोहर' में आया पं. दीनदयाल उपाध्याय जी का 'हमारा राष्ट्रध्वज' एवं सरल जी का 'भारतीय क्रांतिकारी-आंदोलन' वास्तव में हमारी धरोहर ही तो है। इस अंक में आए संस्मरण और आलेख भी एक से बढ़कर एक लगे। काव्य-नाटक 'तमसा' (शंकरलाल माहेश्वरी) की जितनी प्रशंसा की जाए कम है। गीत/ग़ज़ल/कविता/कहानी-लघुकथाएँ सभी रोचक, सटीक, समीचीन, सार्थक और मर्मस्पर्शी है। पाठकमंच, संपादकीय, अकादमी की गतिविधियाँ और चिट्ठी के माध्यम से आप संवाद बनाए रखते हैं जो वांछनीय तो है ही, श्लाघनीय भी। इस अंक में आए सभी रचनाकारों को बधाई। मदन देवड़ा, मालीखेड़ी मार्ग, (ऑफिसर्स कॉलोनी के निकट), तराना जिला-उज्जैन (म.प्र.)।

अगस्त 16 अंक में 'समरसता संबंधी बहुत अच्छी सामग्री सँजोयी गई है। समरसता तो भारतीय संस्कृति के स्वभाव में है। सारा भोगमय और लोक साहित्य, लोकजीवन इसका साक्षी है। दुराग्रही और संकुचित सोच के स्वार्थी लोगों ने विष-वमन कर वातावरण प्रदूषित करने, विरसता फैलाने की कुचेष्टा की है, पर वे कभी सफल न होंगे। सकारात्मकता सदैव बलवान होती है। इसी अंक में डॉ. ब्रजबिहारी कुमार का साक्षात्कार देकर अत्यंत महत्त्वपूर्ण जानकारी दी है। उनकी साधना और प्रदेय बड़ा व्यापक है। संपादकीय में शहीदों का स्मरण प्रेरक है। डॉ. गंगाप्रसाद बरसैंया, ए-7, फारचून पार्क, जी-3, गुलमोहर, भोपाल।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

'साक्षात्कार' जुलाई 16 अंक मिला, धन्यवाद। दो दिनों में पूरा पढ़ पायी। संपादकीय पाँच खंडों में थी लेकिन उनकी कड़ियाँ अनोखे ढंग से जुड़ी थीं और विद्वता समेटे हुए थी। साक्षात्कार स्तम्भ में गुरु-शिष्य परंपरा विषय पर नयी-नयी बातें उजागर हुईं। इसी तरह 'धरोहर' में गोलवलकर जी व उनके गुरुजी के बारे में गूढ़ जानकारियाँ पायीं। डॉ. रत्नेश का 'तस्मै श्री गुरवै नमः' ज्ञानवर्द्धक रहा। विजय बहादुर सिंह ने डॉ. विष्णुकांत शास्त्री की सहृदयता और व्यक्तित्व को बखूबी उकेरा है। दिलीप केलकर ने दीनदयाल उपाध्याय के चिंतन को प्रस्तुत किया है। दीपक शर्मा और डॉ. भागीरथ कुमरावत ने गुरु व शिष्य पर लेखों से 'गुरु पूर्णिमा' पर्व को सार्थकता दी। डॉ. रघुवीर प्रसाद ने उच्च शिक्षा के संदर्भ में सिंहस्थ का वर्णन ज्ञानपरक विवरण दिया। डॉ. रुक्मिणी तिवारी ने भवानी प्रसाद मिश्र की काव्य यात्रा की झलक भली-भाँति प्रस्तुत की। डॉ. रवीन्द्र उपाध्याय ने सनातन धर्म पर और डॉ. प्रभु चौधरी ने संस्कृत और भारतीय संस्कृति पर ठोस-सामग्री दी। सदानंद गुप्त ने 'आषाढ़स्य प्रथम दिवस' ललित निबंध अनोखे ढंग से शुरू किया जो रोचक लगा। मोहन उपाध्याय ने भारत में सांस्कृतिक अवमूल्यन पर उचित चिंता प्रकट की है। कहानी, कविता, समीक्षा आदि हमेशा की तरह अच्छी है। व्यंग्य रचना की कमी जरूर खली। पुनश्च एक और अच्छे अंक के लिए सम्पादक व मण्डल को बधाई। मुख व पश्चात् पृष्ठ आकर्षक व अनुकूल लगा। प्रमोद त्रिवेदी 'पुष्प', 132, केशव नगर, राजपुर, जिला बड़वानी (म.प्र.)।

'जरा याद करो कुर्बानी' संपादकीय का एक-एक शब्द गीता के श्लोक की तरह स्मरण रखने योग्य है। इसे पढ़कर आँखें नम हुईं और सिर गर्व से ऊँचा हो गया। 'बुंदेली साहित्य में सामाजिक समरसता 'डॉ. बहादुर सिंह परमार द्वारा लिखित आलेख पढ़ा। आलेख उत्कृष्ट ज्ञानवर्धक है। इस अंक में मधु शुक्ला की कविता 'हम ललित निबंध हो गये' यह कविता लय छंद बध्य तो है ही लेकिन यह मानव जीवन को यथार्थ से जोड़ती है। इसमें प्रत्येक रचना इतनी प्रभावशाली है कि पाठक को अपने आप में जोड़े रखती है। भास्कर सिंह माणिक, मालवीय नगर (बजरिया), कौंच जनपद-जालौन (उ.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

साहित्य अकादमी के प्रकाशन

कविता

वृक्ष की शिराओं में (द्वि.सं.)
प्रमोद त्रिवेदी 15.00

नरक को कभी शर्म नहीं आती
हरीश पाठक 15.00

मैथिली मंगल
शुकलाल प्रसाद पाण्डेय 12.00

अंगारों की सदियाँ
गौरीशंकर लहरी 00.75

चयनिका
रामेश्वर शुक्ल 'अंचल' 20.00

खिड़कियों पर लगे काग़ज़
हरिशंकर अग्रवाल 15.00

जारी हैं लेकिन यात्राएँ
विनोद निगम 40.00

सिर्फ आँख भर रोशनी में
शशि निगम 40.00

एक तीली बची रहेगी
प्रतापराव कदम 35.00

जो कुछ भी घट रहा है दुनिया में
नासिर अहमद सिकंदर 30.00

काल चित्र
प्रयास जोशी 35.00

यहाँ इस शहर में
भानुप्रकाश 30.00

नाटक

चिंदी मास्टर (अप्राप्त)
राजेश जैन 12.00

कहानी

उन्नीस साल का लड़का
शशांक 14.00

औपचारिक अन्तःकरण (द्वि.सं.)
राजेन्द्रकुमार मिश्र 12.00

सरेआम
हरीश पाठक 12.00

जंग
ए. असफल 40.00

जुमराती मियाँ
विनोद मिश्र 40.00

जो सहमत हैं सुने
यशवंत व्यास [illegible]

भाषण, आलेख, निबन्ध संग्रह

प्रेमचन्द आज (व्याख्यान)
सं.डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय 15.00

भारतीय भाषाओं में कृष्ण काव्य (खंड 1)
सं. भागीरथ मिश्र 50.00

भारतीय भाषाओं में कृष्ण काव्य (खंड 2)
सं. डॉ. विनयमोहन शर्मा 70.00

पानी, पानी, पानी (निबन्ध)
कमला प्रसाद चौरसिया 15.00

निरंजनी सम्प्रदाय के हिन्दी कवि
डॉ. सावित्री शुक्ल 50.00

मध्यकालीन हिन्दी साहित्य और तुलसीदास
डॉ. भगीरथ मिश्र 5.00

अनुष्टुप (पं. सूर्यनारायण व्यास का साहित्य)(अप्राप्त)
सं. डॉ. प्रभाकर श्रोत्रिय 20.00

अक्षर अनन्य
सं. अम्बाप्रसाद श्रीवास्तव 30.00

भारतीय संस्कृति में जैन धर्म का योगदान
डॉ. हीरालाल जैन 60.00

रीवा राज्य का इतिहास (अप्राप्त)
पं. गुरूरामप्यारे अग्निहोत्री 20.00

मध्यप्रदेश के संगीतज्ञ
प्यारेलाल श्रीमाल 100.00

समय में कविता (रचना समीक्षा)
सं. प्रभाकर श्रोत्रिय 15.00

अन्वय
सं. प्रभाकर श्रोत्रिय 50.00

महाकवि केशव
डॉ. बृजेश द्विवेदी 15.00

भगवान महावीर का बुनियादी चिंतन (24 वाँ सं.) (अप्राप्त)
डॉ. जयकुमार जलज 22.00

पं. बालकृष्ण शर्मा नवीन
प्रेम भारती 15.00

इक़बाल विमर्श
सं. पूर्णचन्द्र रथ 150.00

हमारा इक़बाल
सं. ममनून हसन खाँ 60.00

अल्लामा इक़बाल : बच्चों के लिए नज़्में
सं. फ़ज़्ल ताबिश 15.00

निगाह
[illegible] 40.00

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh. Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

Sakshatkar/R.N.I.30993/76
ISSN : 2456-1924

साहित्य अकादमी

मध्यप्रदेश संस्कृति परिषद्, बाणगंगा, भोपाल (म.प्र.)

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

मध्यप्रदेश माध्यम/2016